मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी

के

व्याकरणिक संवर्गों का व्यतिरेकी अध्ययन

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच. डी. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध)

2009

प्रस्तुतकर्ता

अर्जुन नाएक (एम. फिल.)

07HHPH01

विभागाध्यक्ष
प्रो. शशि मुदीराज
पीएच. डी., डी. लिट्.
हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500046

निर्देशक
प्रो. नूरजहाँ बेगम
एम. ए. (हिंदी, संस्कृत) पीएच. डी., डी. लिट्.
हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500046

सह-निर्देशक
प्रो. पंचानन महान्ति
(अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान
एवं अनुवाद अध्ययन केंद्र)
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500046

Department of Hindi
School of Humanities
University of Hyderabad
Hyderabad-500046

Date :

This is to certify that I, **Arjun Naik,** have carried out the research embodied in the present thesis entitled **"Manak Odiya, Paschimi Odiya Aur Chhattisgarhi ke Vyakaranik Samvargon ka Vyatireki Adhyayan" (मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्याकरणिक संवर्गों का व्यतिरेकी अध्ययन)** for the full period prescribed under Ph. D. ordinances of the University of Hyderabad.

I declare to the best of my knowledge that no part of this thesis was earlier submitted for the award of research degree of any University.

Head
Department of Hindi

(Signature of the Candidate)
Name : **Arjun Naik**
Enrollment No. : **07HHPH01**

Dean
School of Humanities

(Signature of the Supervisor)
Prof. Noorjahan Begum

(Signature of the Co-Supervisor)
Prof. Panchanan Mohanty

भूमिका

संसार की प्राचीनतम सशक्त और समृद्ध भाषाओं में भारतीय आर्यभाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका फैलाव उत्तर से पूर्व और उत्तर-पूर्व से द्रविड़ भाषा की सीमा तक हुआ है। उसकी सभी शाखाओं और प्रशाखाओं में अलग-अलग विकसित नव्य भारतीय आर्यभाषाओं में मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के लक्षण आज भी सुरक्षित हैं और वे विशेषताएँ नव्य भारतीय भाषा को और आर्यभूमि को परस्पर से जोड़ती हैं। भाषा के इस आत्मिक बन्धन से भारतीय आर्य कुल की सद्य विकसित भाषा भी अपने को विछिन्न नहीं कर पाएगी। इसी आधार पर हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी एक परिधि में आते हैं। भले ही ये भाषाएँ एक परिवार से संबंधित हैं, लेकिन इनकी उत्पत्ति भिन्न-भिन्न अपभ्रंशों से हुई हैं। हिन्दी भाषा का संबंध शौरसेनी अपभ्रंश से है, मानक ओड़िआ का मागधी अपभ्रंश से और पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का संबंध अर्ध-मागधी अपभ्रंश से है।

भाषा एक व्यवस्था है। प्रत्येक भाषा की अपनी-अपनी संरचनागत व्यवस्था होती है, अर्थात् प्रत्येक भाषा की अपनी-अपनी निजी विशिष्टता होती है और इस विशिष्टता के कारण एक भाषा दूसरी भाषा से अलग हो जाती है। दो भाषाओं के व्याकरण पूरी तरह से समान नहीं होते। भाषा के विभिन्न अंगों (ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थ) के स्तरों पर दो भाषाओं के बीच कई समान और असमान तत्व मिलते हैं। व्याकरण एक प्रकार से भाषा संविधान होता है। व्याकरण किसी भाषा या बोली के बोलने अथवा लिखने के नियमों का निर्धारण करता है।

मैंने इस शोध प्रबंध में 'ओड़िआ' शब्द का प्रयोग किया है जो कि 'उड़िया' का शुद्ध रूप है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ (संबलपुरी व कोसलि) के संबध में विवाद है। पश्चिम ओड़िसा के विद्वान इसे ओड़िआ भाषा की बोली मानने को तैयार नहीं हैं और इसका संबंध अर्ध-मागधी से बतलाते हैं। जबकि विद्वानों का एक वर्ग इसे ओड़िआ भाषा का ही बोली मानते हैं। प्रत्येक देश व राज्य में राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषिक आदि दृष्टि से विवाद तो चलता ही रहता है। ऐसे ही एक घटना

घटी संबलपुर में तब मैं स्नातक की पढ़ाई कर रहा था। सबंलपुर पश्चिम ओड़िसा का मुख्य केन्द्र है। ध्यान रहे कि पश्चिम ओड़िसा कोई दूसरा राज्य नहीं है ओड़िसा का ही एक भाग है। हमारे महाविद्यालय के मैदान पर पुस्तक मेला होता था। वहाँ पुस्तक मेला के साथ-साथ साहित्यिक, भाषिक चर्चा भी होती है, जहाँ बड़े-बड़े विद्वान आते हैं। मैं भी उस संगोष्ठी में श्रोता के रुप में शामिल हो गया। उस समय एक विद्वान ओड़िआ भाषा पर भाषण दे रहे थे। धीरे-धीरे उन्होंने ओड़िआ भाषा के साथ संबलपुरी (पश्चिमी ओड़िआ) पर बोलना शुरु किए और कहने लगे कि संबलपुरी 'ओड़िआ' भाषा की उपभाषा नहीं, यह एक स्वतंत्र भाषा है। मैं असमंजस्य में पड़ गया कि ऐसे कैसे हो सकता है? हमें स्कूल से सिखाया गया था कि हमारे राज्य का नाम 'ओड़िसा' है और यहाँ की राजभाषा 'ओड़िआ' है। मैं सोच में पड़ गया कि वे ऐसे कैसे बोल रहे हैं और बोल रहे हैं तो किस आधार पर बोल रहे हैं? उसके कुछ दिन बाद मुझे एक किताब पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ, उस किताब का नाम था 'संबलपुर इतिहास'। जिसे पढ़कर पता चला कि पश्चिम ओड़िसा कहे जानेवाले क्षेत्र सन् 1905 तक दक्षिण कोसल के अन्तर्गत था, जहाँ 'कोसलि' भाषा बोली जाती थी। तब मुझे समझ में आया कि मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में इतनी विषमता क्यों है। यहाँ तक कि मानक ओड़िआ बोलनेवाले क्षेत्र के लोग पश्चिमी ओड़िआ (संबलुरी व कोसलि) समझ नहीं पाते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से पश्चिम ओड़िसा दक्षिण कोसल अर्थात् आधुनिक छत्तीसगढ़ के अन्तर्गत था। भले ही अभी दोनों क्षेत्र अलग-अलग राज्यों में बँट गये हों लेकिन मूल भाषाई रूप कहाँ जाएगा? फिर भी मैं यहाँ एक बात कहना चाहूँगा कि पश्चिमी ओड़िआ के विकास के क्षेत्र में ओड़िआ भाषा का विरोध करना आत्मघाती होगा। हमेशा पश्चिम ओड़िसावासियों को याद रखना चाहिए कि उनकी मातृभाषा ओड़िआ है और पश्चिमी ओड़िआ कथित आंचलिक भाषा है। दूसरे पक्ष में ओड़िआ भाषा को भी उसकी संकीर्णता को त्याग करना चाहिए। पश्चिम ओड़िसा की राजभाषा ओड़िआ है, पश्चिमी ओड़िआ नहीं।

छत्तीसगढ़ी के संबंध मे कोई विवाद नहीं है। यह पूर्वी हिन्दी की एक बोली है, जो पूरे छत्तीसगढ़ और ओड़िसा के पश्चिमी क्षेत्र में बोली जाती है। मेरा संबध ऐसे ही एक क्षेत्र से है जहाँ पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी बोली जाती है। हमारे घरों में छत्तीसगढ़ी बोली जाती है और बाहर पश्चिमी ओड़िआ एवं विद्यालयों में मानक ओड़िआ। इसलिए मैं तीनों भाषाओं से भलीभाँति परिचित हूँ। साथ ही हिन्दी के विद्यार्थी होने के नाते हिन्दी भाषा का भी अल्प ज्ञान है। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा में बी. एड. की पढ़ाई करते समय मैंने वहाँ बहुत से शोध प्रबंध देखे थे, जो भाषाओं के व्यतिरेकी अध्ययन से संबंधित थे। जैसे-हिन्दी और मराठी का व्यतिरेकी अध्ययन, हिन्दी और असमिया का व्यतिरेकी अध्ययन, हिन्दी और तेलुगु भाषा का तुलनात्मक अध्ययन आदि। तभी मैंने सोच लिया था कि अगर मुझे शोध करने का अवसर प्राप्त होगा तो मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी भाषा के व्याकरणिक संवर्गों का व्यतिरेकी अध्ययन हिन्दी भाषा के साथ जोड़कर करूंगा और मुझे यह अवसर प्राप्त हुआ। अतः मैंने पीएच. डी. के शोध प्रबंध के लिए इस विषय को चुना।

मेरे इस शोध प्रबंध का उद्येश्य मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्याकरणिक संवर्गों का व्यतिरेकी अध्ययन करना है तथा हिन्दी का उक्त भाषाओं के संदर्भ में क्या स्वरूप है, इस पर विचार करना है। इसके साथ-साथ हिन्दी भाषा शिक्षण में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी भाषा-भाषियों को या हिन्दी भाषा-भाषियों को उक्त भाषाओं को सीखनें में किन-किन स्तरों पर कठिनाइयों का सामना करना होगा, इस पर विचार किया है। इस दिशा में प्रस्तुत अध्ययन हमारे इस बृहत् लक्ष्य की ओर आंशिक प्रयास है। मानक ओड़िआ के संदर्भ में हिन्दी अथवा हिन्दी के संदर्भ में पश्चिमी ओड़िआ या छत्तीसगढ़ी भाषा का क्या स्वरूप है, इसका विधिवत अध्ययन न केवल उक्त भाषा शिक्षण में ही उपयोगी होगा, अपितु सामाजिक एवं सांस्कृतिक अन्वेषण में भी महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।

ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से विद्वानों ने हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी को भारतीय आर्यभाषा परिवार के अन्तर्गत रखा है। इस दृष्टि

से इन भाषाओं में कुछ सीमा तक समानता होना स्वाभाविक है, साथ ही साथ इन भाषाओं में अनेक प्रकार की रूपात्मक विविधताएँ एवं असमानताएँ दृष्टिगत होती हैं। प्रस्तुत अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि पर अविलंवित न होकर समकालिक दृष्टि पर आधारित है। साथ ही इस अध्ययन में तुलनात्मक पक्ष को कम तथा व्यतिरेकी पक्ष को अधिक उभारा गया है।

इस शोध प्रबंध को अध्ययन और लेखन की सुविधा के लिए पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय का शीर्षक है-"आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी"। इसके अन्तर्गत आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का परिचय, वर्गीकरण, अध्येय भाषाओं का नामकरण, उद्‌भव और विकास, क्षेत्र और सीमाएँ, संक्रांति क्षेत्र, क्षेत्रीय रूप, लिपि तथा व्याकरण का स्वरुप, व्याकरण की प्रकृति, व्याकरणिक संवर्गों से तात्पर्य, प्रकार, व्यतिरेकी अध्ययन आदि का सामान्य परिचय दिया गया है। प्रस्तुत अध्याय में पीठिका स्वरूप इन सभी का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय का शीर्षक है-"ध्वनि संरचना"। इसके अन्तर्गत हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की ध्वनि सरंचना का अध्ययन किया गया है। इसमें उक्त भाषाओं में कौन-कौन सी ध्वनियाँ प्रयुक्त होती हैं, उनका वर्गीकरण, ध्वन्यात्मक विवरण, ध्वनि परिवर्तन, किन-किन ध्वनियों के उच्चारण और प्रयोग में भिन्नता पाई जाती है उनका विश्लेषण किया गया है। इस शोध प्रबंध में यह अध्याय जोड़ना इसलिए आवश्यक जान पड़ा क्योंकि व्याकरणिक संवर्ग ध्वनि पर ही आधारित है।

तृतीय अध्याय का शीर्षक है-"नामिक संवर्ग (वचन, लिंग, पुरूष और कारक)"। प्रस्तुत अध्याय में हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के नामिक संवर्गों का अध्ययन किया गया है। मेरे शोध प्रबंध का यह एक मुख्य अध्याय है, जिसमें लिंग, वचन, पुरूष और कारक का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय में यह ज्ञात

करने का प्रयास किया है कि मेरी अध्येय भाषाओं के नामिक संवर्गों में किन-किन स्तरों पर समानता और विषमता हैं।

चतुर्थ अध्याय का शीर्षक है-"क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति)"। इस अध्याय में हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों का अध्ययन किया गया है। सर्वप्रथम इस अध्याय में उक्त भाषाओं का काल, पक्ष और वृत्ति का सामान्य परिचय तथा वर्गीकरण प्रस्तुत किया है, तत्पश्चात् इन सब का एक साथ विश्लेषण किया है। ऐसा करने का मन्तव्य यह रहा है कि उक्त भाषाओं में पक्ष, काल और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रियापदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रिया-पदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होती है। इसलिए इन तीनों संवर्गों का अध्ययन एक साथ किया गया है।

पंचम अध्याय का शीर्षक है-"वाच्य"। इस अध्याय में हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के वाच्य संरचना का अध्ययन किया गया है। इसमें वाच्य का स्वरूप, भेद, प्रेरणार्थक क्रिया आदि का विश्लेषण किया गया है।

इस शोध प्रबंध की मूल मान्यताओं को संक्षेप में उपसंहार के रूप में प्रस्तुत किया गया है तथा व्यावहारिकता को ध्यान में रखते हुए चारों भाषाओं की कुछ प्रमुख शब्दावलियों का विवरण दिया गया है एवं अंत में संदर्भ ग्रंथों का उल्लेख किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के उदाहरणों को देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण किया गया है और साथ में हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है, क्योंकि इन भाषाओं कि लिपि 'ओड़िआ' है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्यतिरेकी अध्ययन करते समय मैंने इन भाषाओं के व्याकरण की पुस्तकों का सहारा लिया है। मैंने इस शोध प्रबंध में तालिका पद्धति को अपनाया है। निश्चित शीर्षक के अन्तर्गत चारों भाषाओं का समानान्तर अध्ययन एवं उदाहरण देना अधिक वैज्ञानिक और तर्क सम्मत जान पड़ा है। छत्तीसगढ़ी और पश्चिमी ओड़िआ के व्याकरण ग्रन्थों की संख्या सीमित है। इन व्याकरण ग्रन्थों के आधार पर इस कार्य को पूरा किया गया है तथा मैं स्वयं चारों भाषाओं से भलीभाँति परिचित हूँ। इस शोध प्रबंध को पूरा

करने में जिन विद्वानों और संस्थाओं का सहयोग मिला है उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

सर्वप्रथम, हैदराबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूँ, जहाँ मुझे इस विषय पर शोध करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस शोध कार्य की सफलता का सम्पूर्ण श्रेय मेरी शोध निर्देशक प्रो. नूरजहाँ बेगम, हिंदी विभाग हैदराबाद विश्वविद्यालय और सह-निर्देशक प्रो. पंचानन महान्ति, अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान एवं अनुवाद अध्ययन केंद्र को है, जिनसे मुझे मार्ग दर्शन और प्रोत्साहन मिला है। उनका मार्ग दर्शन इस शोध प्रबंध में सर्वत्र व्याप्त है। उनके प्रति औपचारिक कृतज्ञता ज्ञापित कर मैं उऋण होना नहीं चाहता हूँ। हिन्दी विभाग के डॉ. सच्चिदानन्द चतुर्वेदी और प. रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय के प्रो. चित्तरंजन कर जी के प्रति मैं विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे समय-समय पर विषय से संबंधित शंकाओं का समाधान करने में मदद की है।

मैं अपने दादा, दादी, पिता, माता तथा परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने मुझे अपना कार्य सफलता के साथ पूरा करने के लिए हार्दिक सहयोग दिया।

मेरे परम मित्र व बड़े भाई अक्षय कुमार रथ को विशेष रूप से धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने मुझे इस शोध कार्य के लिए प्रोत्साहित किया।

इस शोध कार्य को सम्पन्न करने में मैंने हैदराबाद विश्वविद्यालय, प. रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, संबलपुर विश्वविद्यालय, उत्कल विश्वविद्यालय, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आदि के पुस्तकालयों का उपयोग किया है। अतः इन पुस्तकालयों के अधिकारी एवं कर्मचारी मेरी कृतज्ञता के पात्र हैं।

यदि इस शोध प्रबंध से हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के विवेचन, विश्लेषण एवं भाषा शिक्षण के क्षेत्र में छात्रों, शोधार्थियों एवं विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हो पायेगा तो, मैं अपना श्रम सार्थक समझूँगा।

अर्जुन नाएक

विषयानुक्रमणिका

भूमिका **I-VI**

प्रथम अध्याय : आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी **1-31**

1. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ

2. भाषा का नामकरण

3. उद्‌भव और विकास

4. क्षेत्र और सीमाएँ

5. संक्रांति क्षेत्र

6. क्षेत्रीय रूप

7. लिपि

8. व्याकरण का स्वरुप

    8.1. व्याकरण की प्रकृति

    8. 2. व्याकरणिक संवर्गों से तात्पर्य

    8. 3. व्याकरणिक संवर्गों के प्रकार

9. व्यतिरेकी अध्ययन

निष्कर्ष

संदर्भ

द्वितीय अध्याय : ध्वनि संरचना **32-72**

1. स्वर ध्वनि

    1.1. स्वरों का वर्गीकरण

        1.1.1. मात्रा के आधार पर

1.1. 2. जीभ के भाग के आधार पर

1.1. 3. हवा के मुख और नाक से निकलने के आधार पर

1.1. 4. ओष्ठों की स्थिति के आधार पर

1.1. 5. जीभ के उठने के आधार पर

1. 2. स्वरों का ध्वन्यात्मक विवरण

1. 3. अनुनासिक स्वर

1. 4. स्वर गुच्छ

1. 4.1. द्वि-स्वर गुच्छ

1. 4. 2. त्रि-स्वर गुच्छ

1. 4. 3. स्वर संयोग स्थिति तालिका

2. व्यंजन

2.1. व्यंजनों का वर्गीकरण

2. 1.1. स्थान के आधार पर

2.1. 2. प्रयत्न के आधार पर

2.1. 3. प्राणत्व के आधार पर

2.1. 4. घोषत्व के आधार पर

2. 2. व्यंजनों का ध्वन्यात्मक विवरण

2. 3. व्यंजन संयोग

2. 3. 1. अनुनासिक व्यंजन और अन्य व्यंजन संयोग

2. 3. 2. लुंठित और अन्य व्यंजन संयोग

2. 3. 3. पार्श्विक और अन्य व्यंजन संयोग

2. 3. 4. ऊष्म और अन्य व्यंजन संयोग

2. 4. व्यंजन संयोग स्थिति तालिका

3. ध्वनि परिवर्तन

4. व्यतिरेकी पक्ष

निष्कर्ष

संदर्भ

तृतीय अध्याय : नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष और कारक) 73-129

1. वचन

1.1. वचन एवं संज्ञाओं का वर्गीकरण

1.1.1. गणनीयता की दृष्टि से

1.1. 2. प्रयत्न की दृष्टि से

1. 2. वचन का द्योतन

1. 2.1. एकवचन का द्योतन

1. 2.1.1. एकक चिन्ह

1. 2.1. 2. एकक परिमाण सूचक शब्द प्रत्यय

1. 2. 2. बहुवचन का द्योतन

1. 2. 2. 1. बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग

2. लिंग

2.1. भाषा में लिंग विभाजन का आधार

2. 2. लिंगसूचक व्युत्पादक प्रत्यय

2. 2.1. पुलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय

2. 2. 2. स्त्रीलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय

2. 3. लिंग परिवर्तन

2. 4. सार्वनामिक निर्देश एवं लिंग

2. 5. विशेषणों पर लिंग का प्रभाव

3. पुरुष

3.1. पुरुष का वर्गीकरण

3. 2. पुरुष के अभिलक्षण

3. 3. पुरषवाचक सर्वनाम और उनके अभिलक्षण

3. 3.1. मध्यम पुरुष

3. 3. 2. अन्यपुरुष वाचक सर्वनाम

3. 4. पुरुषवाचक सर्वनामों का रुपिमिक विश्लेषण

3. 4.1. उत्तम पुरुष

3. 4.1.1. उत्तम पुरुष एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4.1. 2. उत्तम पुरुष बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 2. मध्यम पुरुष

3. 4. 2.1. मध्यम पुरुष एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 2. 2. मध्यम पुरुष बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 2. 3. उत्तम पुरुष आदरार्थक सर्वनाम

3. 4. 3. अन्य पुरुष

3. 4. 3.1. निकटार्थक एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4.3. 2. निकटार्थक बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 3. दूरार्थक एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 4. दूरार्थक बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 5. प्रश्नवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 6. अनिश्चयवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 7. अनिश्चयवाचक बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 8. संबंधवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3. 9. संबंधवाचक बहुवचन सूचक सर्वनाम

3. 4. 3.10. निजवाचक सर्वनाम

3. 5. पुरुष के वचन

3. 5.1. उत्तम और मध्यम पुरुष के वचन

3. 5. 2. अन्य पुरुष के वचन

3. 6. पुरुष के लिंग

4. कारक

4.1. कारकों और विभक्तियों का नामकरण

4. 2. विभक्ति

4. 2.1. विभक्तियों के संरुप

4. 2.1.1. विभक्तियों का वितरण

4. 2. 2. विभक्तियों का प्रयोग

निष्कर्ष

संदर्भ

चतुर्थ अध्याय : क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति) 130-180

1. काल

1.1. वर्तमान काल

1.1.1. सामान्य वर्तमान काल

1.1. 2. अपूर्ण वर्तमान काल

1.1. 3. पूर्ण वर्तमान काल

1.1. 4. रीति वर्तमान काल

1. 2. भूतकाल

1. 2.1. सामान्य भूतकाल

1. 2. 2. अपूर्ण भूतकाल

1. 2. 3. पूर्ण भूतकाल

1. 2. 4. रीति भूतकाल

1. 3. भविष्यत् काल

1. 3.1. सामान्य भविष्यत् काल

1. 3.1. अपूर्ण भविष्यत् काल

1. 3. 3. रीति भविष्यत् काल

2. पक्ष

2.1. अस्तित्वबोधक पक्ष

2. 2. अपूर्ण पक्ष

2. 2.1. नित्यताबोधक

2. 2. 2. आरंभबोधक पक्ष

2. 2. 3. प्रगति बोधक पक्ष

2. 2. 3.1. प्रगति बोधक वर्तमान काल

2. 2. 3. 2. प्रगति बोधक भूतकाल

2. 2. 4. अभ्यासबोधक

3. वृत्ति

3.1. आज्ञार्थक

3. 2. संभावनार्थक

4. क्रिया की पदबंध संरचना

4.1. पक्ष सापेक्ष संरचना

4.1.1. पक्ष सूचक तत्व

4.1. 2. काल और वृत्ति सूचक तत्व

4.1. 3. पक्ष सूचक संरचना में काल और वृत्ति सूचक तत्व की स्थिति

4.1. 4. वृत्ति की अभिव्यक्ति

4.1. 5. पक्ष सापेक्ष क्रिया के विहित रुप

4. 2. पक्ष निरपेक्ष संरचना

4. 2.1. पक्ष निरपेक्ष संरचना में प्रयुक्त काल और वृत्ति सूचक तत्व

4. 2 .2. पक्ष निरपेक्ष क्रिया के विहित रूप

4. 2. 3. समापिका क्रियारुपों के साथ प्रयुक्त होनेवाले अन्य प्रत्यय

4. 2. 3.1. पूर्णतावाचक प्रत्यय

4. 2. 3. 2. निश्चयवाचक प्रत्यय

4. 2. 3. 3. विशेष अनुरोध सूचक प्रत्यय

5. क्रियारुपों की खण्डीय संरचना

6. स्थिति और अस्तित्ववाचक क्रिया के पक्ष, काल और वृत्ति

6.1. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया की रुपावली

6.1.1. स्थितिवाचक क्रिया

6. 2. अस्तित्ववाचक क्रिया

6. 2.1. विशेष अस्तित्ववाचक क्रिया

7. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

7.1. संयुक्त क्रिया की संरचना

7. 2. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

7. 2. 1. रंजक क्रिया द्वारा सूचित पक्ष एवं वृत्ति

8. नकारात्मक क्रियारुप

8.1. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया के नकारात्मक रूप

8.1.1. संयुक्त क्रिया की नकारात्मकता

8.1.1.1. रूपगत परिवर्तन

8.1.1. 2. अर्थगत परिवर्तन

निष्कर्ष

संदर्भ

पंचम अध्याय : वाच्य **181-204**

1. वाच्य के भेद

2. कर्तृ वाच्य

2.1. कर्तृ वाच्य की संरचना

2. 2.कर्तृ वाच्य की विशेषता

3. कर्मवाच्य और भाववाच्य

3.1. वाच्य के अनुसार क्रिया की संरचना

3.1.1. कर्तृवाच्य की क्रिया

3.1. 2. कर्म और भाववाच्य की क्रिया

3.1. 3. कर्म और भाववाच्य क्रिया की विशेष संरचना

4. रुपस्वनिमक परिवर्तन

5. कर्म और भाववाच्य की रुपावली

6. वाक्य स्तर पर अन्य परिवर्तन

6. 1. कर्ता की स्थिति

6. 2. कर्म की स्थिति

6. 3. कर्म और भाववाच्य का प्रयोग

6. 4. कर्म और भाववाच्य सूचक सामान्य क्रियाएँ

7. प्रेरणार्थक क्रिया

8. प्रेरणार्थक वाक्य

निष्कर्ष

संदर्भ

उपसंहार **205-213**

परिशिष्ट **214-220**

सहायक ग्रंथ सूची **221-225**

प्रथम अध्याय

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी

1. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ

संसार में लगभग तीन हजार भाषाएँ बोली जाती हैं। इनमें से कुल बोलियाँ भाषा व्यवस्था की दृष्टि से आपस में कुछ अधिक निकट का संबंध रखती हैं। ऐसी अति निकट की भाषाओं और बोलियों के अपने-अपने कुछ भाषा समुदाय हैं। संसार के लगभग 12 भाषा समुदायों में सबसे बड़ा भाषा समुदाय 'भारत-यूरोपीय' भाषा समुदाय है। इस समुदाय के 10 उप-समुदायों में एक उप-समुदाय 'भारतीय आर्य भाषा उप-समुदाय' है। संसार की प्राचीनतम सशक्त और समृद्ध भाषाओं में भारतीय आर्यभाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। इसे मोटे तौर पर तीन कालों में बाँटा जाता है।[1]

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा	1500 ई. पू. से 500 ई. पू. तक
2. मध्य भारतीय आर्यभाषा	500 ई. पू. से 1000 ई. तक
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा	1000 ई. से अबतक

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का प्राचीनतम रूप वेदों में मिलता है। वेद चार हैं और इनका काल भी ठीक-ठीक निर्धारित नहीं किया जा सका है, फिर भी विद्वान यह मानते हैं कि इनकी रचना ईसा के लगभग डेढ़-दो हजार वर्ष पहले हो गयी थी। इसकी भाषा संस्कृत है। इसी के आधार पर प्राचीन भारतीय आर्यभाषा को दो भागों में विभक्त किया गया है-वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत। वैदिक संस्कृत में वैदिक संहिताओं, ब्राम्हण ग्रंथों, आरण्यकों और उपनिषदों की रचना की गई एवं रामायण, महाभारत आदि ग्रंथ लौकिक संस्कृत में।

मध्य भारतीय आर्यभाषा का समय 500 ई. पू. से 1000 ई. तक माना जाता है। मूलत: इस काल में लोकभाषाओं का विकास हुआ। मध्य भारतीय आर्यभाषा तीन कालों

में विभाजित है। सामान्यतः उन्हें प्रथम प्राकृत, द्वितीय प्राकृत तथा तृतीय प्राकृत कहा जाता है, जिनकी भाषा को क्रमशः पालि, प्राकृत और अपभ्रंश कहा जाता है। इनका समय इस प्रकार है-

पालि	500	ई. पू. से 1 ई. तक
प्राकृत	1	ई. से 500 ई. तक
अपभ्रंश	500	ई. से 1000 ई. तक

पालि को मागधी भाषा भी कहा जाता है। यह बौद्ध धर्म की भाषा है। प्राकृत भाषा में जैन साहित्य की रचना होने लगी। इसके बाद लोकभाषा अपभ्रंश का प्रारंभ हुआ, जिसे सामान्य जनता बोलती थी।

आधुनिक आर्यभाषाओं का विकास इसी अपभ्रंश भाषा से हुआ है। उत्तर भारत में अपभ्रंश के सात क्षेत्रीय रूप प्रचलित थे, जिनसे आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास हुआ। इनका विवरण निम्नवत है।[2]

अपभ्रंश के क्षेत्रीय रूप	विकसित होने वाली आर्यभाषाएँ
1. शौरसेनी अपभ्रंश	पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती
2. पैशाची अपभ्रंश	पंजाबी, लहंदा
3. ब्राचड़ अपभ्रंश	सिन्धी
4. खस अपभ्रंश	पहाड़ी
5. महाराष्ट्री अपभ्रंश	मराठी
6. अर्ध-मागधी अपभ्रंश	पूर्वी हिंदी
7. मागधी अपभ्रंश	बिहारी, ओड़िआ, बंगला, असमिया

ग्रियर्सन ने उपरोक्त आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को सामूहिक रूप से निम्नलिखित समुदायों में विभाजित किया है।[3] पश्चिमोत्तरी समुदाय, दक्षिणी समुदाय तथा पूर्वी समुदाय (बाहरी उपशाखा से संबंधित), मध्य उपशाखा (बाहरी तथा भीतरी की

मध्यवर्तिनी) और केंद्रीय तथा पहाड़ी समुदाय (भीतरी उपशाखा से संबंधित) ग्रियर्सन के इस वर्गीकरण के आधार पर हम आर्य भाषाओं को निम्नलिखित वर्गों में बांट सकते हैं-

1. बाहरी उपशाखा

1.1. उत्तर-पश्चिमी समुदाय

1.1.1. लहंदा

1.1. 2. सिंधी

1. 2. दक्षिणी समुदाय

1.2.1 मराठी

1. 3. पूर्वी समुदाय

1. 3.1. ओड़िआ

1. 3. 2. बंगला

1. 3. 3. असमिया

1. 3. 4. बिहारी

2. मध्य उपशाखा

2.1. बीच का समुदाय

2.1.1. पूर्वी हिंदी (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी)

3. भीतरी उपशाखा

3.1. केंद्रीय अथवा भीतरी समुदाय

3.1.1. पश्चिमी हिंदी (कौरवी, ब्रज, बुन्देली, कन्नौजी, हरियाणवी)

3.1. 2. पंजाबी

3.1. 3. गुजराती

3.1. 4. खानदेशी

3.1. 5. राजस्थानी

4. पहाड़ी समुदाय

4.1. नेपाली/पूर्वी पहाड़ी

4. 2. मध्य पहाड़ी

4. 3. पश्चिमी पहाड़ी

डॉ. ग्रियर्सन के इस वर्गीकरण में थोड़ा परिवर्तन कर डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने आर्यभाषाओं का एक भिन्न वर्गीकरण प्रस्तुत किया है, जो निम्नलिखित है[4] -

उदीच्य	सिंधी, लंहदा, पंजाबी
प्रतीच्य	गुजराती, राजस्थानी
मध्यदेशीय	पश्चिमी हिंदी
प्राच्य	पूर्वी हिंदी, ओड़िआ, बिहारी, बंगला, असमिया
दाक्षिणात्य	मराठी

इस प्रकार हिंदी को केंद्र में रखकर डॉ. हरदेव बाहरी ने भारतीय आर्यभाषाओं को दो वर्गों में विभाजित किया है-[5]

हिंदी वर्ग	हिन्दीत्तर वर्ग
पश्चिमी हिंदी	उत्तरी-नेपाली
पूर्वी हिंदी	पश्चिमी-पंजाबी, सिंधी, गुजराती
राजस्थानी	दक्षिणी-सिंधली, मराठी
पहाड़ी	पूर्वी-ओड़िआ, बंगला, असमिया
बिहारी	

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के उपरोक्त वर्गीकरण से यह स्पष्ट हो गया कि हमारी अध्येय भाषा मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी भारतीय आर्यभाषा के दो स्वतंत्र वर्ग की भाषाएँ हैं। मानक ओड़िआ बाहरी उपशाखा के पूर्वी समुदाय के अंतर्गत आती है तथा पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी मध्य उपशाखा के अंतर्गत। इसके साथ-साथ मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ हिंदीत्तर वर्ग तथा छत्तीसगढ़ी हिंदी

वर्ग के अंतर्गत आती हैं। इन तीनों भाषाओं का विकास अपभ्रंश से ही हुआ है, इसका समय करीब 1000 ई. के आसपास माना जाता है। मानक ओड़िआ का संबंध मागधी अपभ्रंश से है तथा पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का संबंध अर्ध-मागधी अपभ्रंश से है।

मेरे प्रस्तुत शोध प्रबंध का उद्देश्य इन तीनों भाषाओं का व्यतिरेकी अध्ययन करना है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्याकरणिक संवर्गों का अध्ययन करने से पहले ये भाषाएँ आधुनिक भारतीय भाषाओं के कौन-कौन से वर्ग के अंतर्गत आते हैं, यह जानना आवश्यक जान पड़ा, इसलिए यहाँ पर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है और इस वर्गीकरण से यह भी स्पष्ट हो गया कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का संबंध आधुनिक भारतीय आर्यभाषा से है तथा ये तीनों भाषाएँ स्वतंत्र वर्ग से हैं। अगले पृष्ठों में इन तीनों भाषाओं का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया जाएगा।

2. भाषा का नामकरण

2.1. मानक ओड़िआ

'ओड़िआ' ओड़िसा राज्य की मुख्य भाषा है। हिन्दीभाषी लोग ओड़िसा राज्य को उड़ीसा कहते हैं और यहाँ की भाषा को 'उड़ीया' कहते हैं, पर उड़ीया का शुद्ध रुप 'ओड़िया' है।[6] उड़ीसा के लोगों की भाषा को हिन्दी-भाषी लोग साधारणतया 'उड़िया' कहते तथा लिखते हैं। हिन्दी-ध्वनिविज्ञान से अनभिज्ञ उड़िया लोगों को यह बड़ा अजीब-सा लगता है, यद्यपि हिन्दी-भाषा की दृष्टि से यह बहुत हद तक ठीक है। यह ध्यान देने कि बात है कि एक ही पुस्तक में हिन्दी और उड़िया लोगों के लेख में उल्लिखित शब्द के भिन्न-भिन्न रूप पाए जाते हैं, जबकि हिन्दी-लेखक 'उड़िया' लिखते हैं, उड़िया लोग 'ओड़िआ' लिखते हैं। 'ओड़िआ' केवल उड़िया-लिपि में लिखे जानेवाले शब्द का नागरीकरण-मात्र है।[7] इस भाषा के नामकरण के संबंध में विद्वानों का भिन्न-भिन्न मत हैं। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार-"इसे ओड़िआ, ओड्री या उत्कली अथवा ओड्र या उत्कल की

भाषा भी कहते हैं। ये दोनों नाम अंग्रेजी के (orissa) के प्राचीन रूप हैं"।[8] इस प्रकार ग्रियर्सन ने ओड़िआ भाषा का नामकरण क्षेत्र के आधार किया है तथा अंग्रेजी का पर्याय माना है। दूसरी ओर कैलाशचंद्र भाटिया ने इससे भिन्न मतपोषण किया है। उनके अनुसार-"ओड़िआ की व्युत्पत्ति का मूल स्त्रोत 'उड्र' ही है"।[9]

प्राचीन ग्रंथ प्राकृत लंकेश्वर के व्याकरण में अष्टादश भाषाओं के विवरण में 'ओड्रिया' या 'ओलिया' नाम की भाषा का उल्लेख मिलता है। प्राचीन काल में 'उड्री' एक लिपि भी थी जिससे 'ओड़िआ' शब्द बना। ओड़िआ के प्राचीनतम उदाहरण तेरहवीं शताब्दी के एक शिलालेख में उपलब्ध है, जिसमें ओड़िआ शब्द का प्रयोग किया गया है। प्राप्त जानकारियों के अनुसार ओड़िआ भाषा का नामकरण 'उड्र' अपभ्रंश या लिपि से ही हुआ है। प्राचीन काल में ओड़िसा का नाम ओड्र भी था। इसी कारण यहाँ की भाषा का नाम ओड़िआ पड़ा है।

2. 2. पश्चिमी ओड़िआ

पश्चिमी ओड़िआ, पश्चिम ओड़िसा में बोली जाती है। पश्चिम ओड़िसा के अंतर्गत संबलपुर, बरगढ़, बलागींर, झारसुगुड़ा, सुंदरगढ़, कलाहांड़ी, बउद, देवगढ़, नूआपड़ा और सोनपुर आदि 10 जिले आते हैं। हमने 'पश्चिमी ओड़िआ' का नामकरण क्षेत्र के आधार पर किया है। समग्र पश्चिम ओड़िसा में यह भाषा बोले जाने के कारण इसका नाम 'पश्चिमी ओड़िआ' है। इस भाषा को 'संबलपुरी' और 'कोसलि' भी कहा जाता है। पश्चिमी ओड़िसा का मुख्य कार्यस्थल संबलपुर जिला है तथा प्राचीन काल में संबलपुर एक रियासत भी थी। इसी आधार पर इसे 'संबलपुरी' भी कहा जाता है। इसके अलावा इसका एक और नाम 'कोसलि' भी है। कोसलि नाम इसलिए पड़ा क्योंकि पश्चिम ओड़िसा कहे जाने वाला क्षेत्र प्राचीन काल में 'कोसल' के अंतर्गत आता था। सन् 1905 के बाद यह क्षेत्र उत्कल, कलिंग और वर्तमान ओड़िसा में मिला है। इसलिए इसका नाम 'कोसलि' कहने से छत्तीसगढ़ी, बघेली आदि को भी जोड़ना पड़ेगा। इसीलिए हमें पश्मिमी ओड़िआ नाम ही तर्क संगत जान पड़ा है।

2. 3. छत्तीसगढ़ी

छत्तीसगढ़ी आधुनिक छत्तीसगढ़ राज्य में बोली जाती है। इस बोली का नामकरण छत्तीसगढ़ के क्षेत्र के आधार पर पड़ा है। छत्तीसगढ़ी का शब्दार्थ है-'छत्तीस-किलों या गढ़ों का प्रदेश'। छत्तीसगढ़ के इतिहास, लोक संस्कृति एवं पुरातत्व के गंभीर अध्येताओं (लाला प्रद्युम्न सिंह, पण्डित लोचनप्रसाद पाण्डेय, डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र और श्री प्यारेलाल गुप्त) के सुविचरित मत को कांतिकुमार जैन ने इस प्रकार व्यक्त किया है- "इस क्षेत्र में पुराकाल में 36 गढ़ों का अस्तित्व होने के कारण इसे छत्तीसगढ़ कहा जाता है। छत्तीसगढ़ का रतनपूर राज्य का अस्तित्व होने के कारण ही इसे छत्तीसगढ़ कहा जाता है। छत्तीसगढ़ रतनपुर राज्य का अर्थ है रतनपुर राजधानी वाला वह राज्य, जिसमें 36 किले हैं। संवत् 1457 में लगभग 36 गढ़ रतनपूर नामक राज्य का विस्तार शिवनाथ नदी के उत्तर-दक्षिण में था और उसके अंतर्गत रतनपुर एवं रायपुर सम्मिलित थे। रतनपुर की ओर शिवनाथ नदी के उत्तर में राज्य के रक्षा निमित्त 18 गढ़ थे तथा रायपुर के शिवनाथ नदी के दक्षिण में राज्य के रक्षा 18 गढ़ थे। इस प्रकार रतनपुर-रायपुर क्षेत्र का नाम छत्तीसगढ़ और यहाँ की भाषा का नाम छत्तीसगढ़ी पड़ा है"।[10] इस प्रकार 'छत्तीसगढ़ी' का नामकरण क्षेत्र के आधार पर हुआ है।

3. उद्‌भव और विकास

3.1. मानक ओड़िआ

'ओड़िआ' भाषा ओड़िसा राज्य की मुख्य भाषा है। यह राज्य प्राचीन काल में कलिंग, ओड्र और उत्कल नाम से प्रसिध्द था। उड्र राजाओं की लंबी परंपरा से इसका नाम भी 'उड्र' पड़ गया, जो कालांतर में ओड़िसा बन गया। कैलाशचंद्र भाटिया के अनुसार-"ओड़िआ भाषा भारतीय आर्य भाषा के पूर्वी क्षेत्र की बोली है, जिसको मागधी नाम से अभिहित किया जाता है"।[11] मागधी अपभ्रंश से विकसित आर्य-परिवार की चार भाषाओं (ओड़िआ, बंगला, असमिया और बिहारी) में से ओड़िआ का संबध दक्षिणी भाग

से है। मागधी प्राचीन मगध की कथ्य भाषा थी। आर्यों का विशिष्ट केंद्र उत्तर भारत अर्थात् ब्रजमंडल से दूर-दूर तक उत्तर-पश्चिम में शौरसेनी प्रचलित थी। डॉ. उदयनारायण तिवारी के अनुसार-"शौरसेनी प्राकृत आर्यावर्त के शिष्टजनों की काव्य भाषा संस्कृत से ज्यादा प्रभावित थी। संस्कृत के निकटतम संपर्क में आने के कारण शौरसेनी में विकास की गति थम गई। दूसरे पक्ष में मागधी की केंद्रीय प्राकृत, मागधी संस्कृत के आधिपत्य के कारण यद्यपि उत्तर की ओर बढ़ नहीं सकी किन्तु तेजी से पूर्व की ओर फैली"।[12] इससे स्पष्ट होता है कि केंद्रीय आर्यावर्त में शौरसेनी का और मगध तथा मगध से पूर्व क्षेत्रों में मागधी का बोलबाला रहा।

इस प्रकार आधुनिक भारतीय आर्यभाषा के प्राच्य या पूर्वी उपशाखा की चार भाषाओं में एक भाषा ओड़िआ है। मागधी अपभ्रंश से विकसित पूर्वी शाखा में जिन चार भाषाओं का समावेश किया जाता है, वे हैं-

क. ओड़िआ ग. असमिया

ख. बंगला ध. बिहारी

इनमें से बिहारी को हिंदी वर्ग के अंतर्गत रखा जाता है और ओड़िआ, बंगला, असमिया को हिंदीत्तर वर्ग के अंतर्गत। बंगला और ओड़िआ भाषा में कुछ व्याकरणगत समानता है जिसके कारण कतिपय विद्वानों ने एकाधिक बार इसे बंगला की बोली कहा है, किंतु वास्तव में यह भ्रांत धारणा है। ओड़िआ वस्तुतः बंगला की भगिनी है, पुत्री नहीं। इसी प्रकार असमिया भाषा भी ओड़िआ और बंगला भाषा से मिलती जुलती है। ओड़िआ भाषा एक समृद्ध भाषा है, इसमें विशाल साहित्य है तथा यह ओड़िसा राज्य की राजभाषा है।

उत्कल, कलिंग में प्रचलित मागधी का नाम उड्र मागधी था। ईसा के समय तक उड्र मागधी कलिंग में बहु प्रचलित था। प्राप्त शिलालेखों, ताम्रफलकों, सिक्कों में खोदित या लिखित भाषा से पता चलता है कि ओड़िआ के आदि कवि सारलादास की भाषा उड्र अपभ्रंश का परवर्ती रूप है। आधुनिक भुवनेश्वर को धवली अभिलेख के आधार पर राज्य तोसली बताया जाता है। चेदीवंश के तीसरी पीढ़ी के कलिंग नरपति ऐर खारबेल की

राजधानी भी भुवनेश्वर के आसपास थी। मध्यकाल में ओड़िसा की राजधानी कटक, खोर्धा आदि स्थानों में बसाई गई। कटक, भुवनेश्वर और पुरी में प्रचलित भाषा को ही उड्र, उत्कल और कंगोद मंड़ल की राजभाषा की मान्यता मिली। इस प्रकार ओड़िआ भाषा के संबंध में कहा जा सकता है कि ओड़िआ भाषा की विकास यात्रा की प्रथम बिन्दु यदि मागधी है तो विकास की नई मंजिल ओड़िया भाषा है। मागधी को मंजिल तक पहुँचने के लिए उड्र मागधी और उड्र अपभ्रंश का मार्ग तय करना पड़ा है। इसी उड्र अपभ्रंश के कारण इस क्षेत्र की भाषा का नाम भी ओड़िआ पड़ा है।

ओड़िआ भाषा का विकास लगभग 11वीं शताब्दी से माना जाता है। कैलाशचंद्र भाटिया के अनुसार-"दसवीं शताब्दी में लिखित 'बौध्द-गान ओ दूहा' को बंगला से संबंधित माना जाता है, पर भाषिक समानता के आधार पर यह ओड़िआ का पूर्व रूप माना जा सकता है।"[13] सूर्यवंशी राजाओं तक उड्र देश की व्यापक प्रसिध्दि थी। खास तौर पर संस्कृत-पालि का प्रभाव इस भाषा पर पड़ता रहा है। राजा चोड़ गंगदेव ने इसके लिखित रूप के विकास की ओर ग्यारहवीं शताब्दी में ध्यान दिया। बारहवीं तेरहवीं शताब्दी के बाद ओड़िआ अपनी मूलाधारा से विछिन्न हो गयी। तेरहवीं शताब्दी में ओड़िआ का प्राचीनतम निर्देशन प्राप्त हुआ है। पन्द्रहवीं शताब्दी में कुछ-कुछ लिखित वाक्य प्राप्त हुए । सोलहवीं शताब्दी से चैतन्य प्रवर्तित वैष्णव धर्म के प्रभाव से प्राचीन ओड़िआ साहित्य का व्यवस्थित रूप प्रांरभ हुआ। चौदहवीं शाताब्दी में सारलादास ने 'चंड़ीपुराण तथा रामायण' को संक्षिप्त रूप में लिखा। सोलहवीं शताब्दी में बलरामदास ने गीता, रामायण तथा जगन्नाथदास ने 'भागवत पुराण' लिखा। इसके बाद यशोवन्त, अनन्तदास तथा अच्युतानन्ददास ने धार्मिक साहित्य भी ओड़िया में लिखा। सोलहवीं से अठारहवीं शताब्दी के मध्यतक अधिकांशत: संस्कृत से अनुवाद ही किया गया। फलत: ओड़िआ पर संस्कृत का व्यापक प्रभाव पड़ा। इस काल को 'पंचशखा' युग भी कहते हैं। अठारहवीं शताब्दी के उपेन्द्रभंज, फकीर मोहन सेनापति, गंगाधर मेहेर, भिखारीदास आदि साहित्यकारों ने ओड़िआ साहित्य और भाषा को परिष्कृत और परिमार्जित किया,

जो आज की मानक ओड़िआ है।

3. 2. पश्चिमी ओड़िआ

संबलपुर, बरगढ़, बलागींर, झारसुगुड़ा, सुदंरगढ़ आदि जिले पश्चिम ओड़िसा के अंतर्गत आते हैं। यहाँ की भाषा का नाम 'पश्चिमी ओड़िआ' है। पश्चिमी ओड़िआ को 'संबलपुरी' और 'कोसली' भी कहा जाता है। पश्चिमी ओड़िआ एक उपभाषा है और इसमें उपभाषा के समस्त लक्षण विद्यमान हैं। कुछ भाषाविद इसे ओड़िआ की एक उपभाषा मानते हैं, परंतु तुलनात्मक भाषाविज्ञान के दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो इसमें ओड़िआ के लक्षण अल्प मात्रा में दिखाई पड़ते हैं, बल्कि दूसरी ओर हिंदी और छत्तीसगढ़ी भाषा के लक्षण ज्यादा दिखाई देते हैं। इसी कारण से पश्चिम ओड़िसा के प्रमुख भाषाविद डॉ. पाणिग्राही एवं त्रिपाठी का मानना है-"पश्चिमी ओड़िआ (कोसली/संबलपुरी) एक स्वतंत्र भाषा है, ओड़िआ की बोली नहीं"।[14] हमारा प्रस्तुत शोध प्रबंध का उद्देश्य भी यही है कि ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के मध्य कितना साम्य और वैषम्य है, इसको उजागर करना। जिसके फलस्वरूप ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के प्रश्न का समाधान हो जाएगा।

पश्चिमी ओड़िआ या संबलपुरी का उद्‌भव और विकास कब और कैसे हुआ है? यह एक गंभीर अनुसंधान का विषय है। क्या इसे ओड़िआ भाषा के साथ जोड़ना चाहिए या फिर कोसली के साथ? यह प्रश्न हमारे सामने उठ रहा है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो पश्चिम ओड़िसा या संबलपुर क्षेत्र सन् 1905 से पूर्व मध्य प्रदेश के साथ मिलकर था। सन् 1905 अक्टूबर 16 तारीख को यह क्षेत्र मध्यप्रदेश से अलग होकर बंगाल के अंतर्गत स्थित ओड़िसा डिविजन में जा मिला। फलतः यहाँ की भाषा पर हिंदी और छत्तीसगढ़ी का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

पश्चिमी ओड़िआ अन्यान्य भारतीय आर्यभाषाओं के जैसे ही प्राचीन भारतीय आर्यभाषा की सृष्टि है और ओड़िआ भाषा से इसका जन्म अर्वाचीन नहीं हैं। कारण इस क्षेत्र के इतिहास से पता चलता है कि इस क्षेत्र में आर्य लोग पहले आए थे एवं कोसल

होकर ही कलिंग गये थे। उन्होंने कोसल के रास्ते से कलिंग में प्रवेश किया था, इस बात को इतिहासकार तथा भाषाविद् मुक्तकंठ से स्वीकार करते हैं। आर्य सभ्यता के प्रसार काल में छोटा नागपुर क्षेत्र से आर्य कलिंग में पहुँचने से पहले पश्चिम ओड़िसा में पहुँचे थे, ऐसा सुनीति कुमार चटर्जी का मानना है। इसीलिए कलिंग में आर्यभाषा के प्रवेश से पूर्व पश्चिम ओड़िसा में आर्यभाषा की उत्पत्ति ओड़िआ से अर्वाचीन नहीं है। कोसल के अंतर्गत आने के कारण निश्चित रूप से पश्चिमी ओड़िआ की उत्पत्ति अर्ध-मागधी से हुई है। क्योंकि कोसल की अन्य तीन बोली अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति अर्ध-मागधी अपभ्रंश से ही है। इसीलिए पश्चिमी ओड़िआ को ओड़िआ भाषा की उपभाषा के रूप में मानना युक्ति संगत नहीं है। इसके अलावा एक उपभाषा, मूल भाषा की रूप संरचना से इतनी भिन्न नहीं होती कि मूल भाषा-भाषी इसको समझ न सकें। पश्चिमी ओड़िआ की ध्वनि, उच्चारण शैली, शब्द भंड़ार, व्याकरण ओड़िया भाषा से भिन्न है, जिसके कारण ओड़िआ भाषा भाषी लोग पश्चिमी ओड़िआ को समझ नहीं पाते हैं।

पश्चिमी ओड़िआ में साहित्यिक रचना की दृष्टि से एक गौण चेष्टा मात्र है, ऐसा अनेकों का मत है, इस प्रकार की धारणा के वशवर्ती होने से किसी भी भाषा का विकास संभव नहीं है। इस भाषा में प्रचुर मात्रा में लोक साहित्य है जिनमें-डालखाई, रसरकेलि, हुमो गीत तथा अनेक लोक कथायें हैं। पश्चिमी ओड़िया में कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास आदि रचित होने और इस भाषा की व्याकरण, ध्वनि, रूप और भाषा तत्व का वैज्ञानिक विश्लेषण करने से इस भाषा को समुचित मर्यादा प्राप्त हो सकती है। पश्चिमी ओड़िआ के विकास क्षेत्र में ओड़िआ भाषा का विरोध करना आत्मघाती होगा। हमेशा हमें याद रखना चाहिए कि ओड़िआ हमारी मातृभाषा है और पश्चिमी ओड़िआ हमारी कथित आंचलिक भाषा है। दूसरे पक्ष में ओड़िआ भाषा को भी उसकी संकीर्णता को त्याग करना चाहिए। पश्चिम ओड़िसा की राजभाषा ओड़िआ है, पश्चिमी ओड़िआ नहीं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पश्चिमी ओड़िआ अपने आपको परिष्कृत और परिमार्जित कर मानक रूप धारण करने में लगी है। इस भाषा में कहानी, कविता, नाटक आदि साहित्यिक रचना भी

होने लगी है। सत्यनारायण बहिरदार, लक्ष्मण पति, खगेश्वर सेठ, कुंजबिहारी दास, हलधर नाग आदि पश्चिमी ओड़िआ के प्रमुख साहित्यकार हैं।

3. 3. छत्तीसगढ़ी

'छत्तीसगढ़ी' छत्तीसगढ़ की मुख्य भाषा है। छत्तीसगढ़ पहले मध्यप्रदेश के अंतर्गत आता था। 1 नवबंर सन् 2000 को छत्तीसगढ़ मध्यप्रदेश से अलग होकर स्वतंत्र राज्य के रुप में स्थापित हुआ। इस क्षेत्र की भाषा छत्तीसगढ़ी थी जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में छत्तीसगढ़ की राजभाषा की मान्यता प्राप्त कर चुकी है। छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों के अनेक मत हैं। सुनीति चटर्जी के अनुसार-"छत्तीसगढ़ी मागधी की ही एक उपभाषा है"।[15] ग्रियर्सन के अनुसार-"जहाँ शौरसेनी प्राकृत से पश्चिमी हिंदी का विकास होता है, बिहार में बोली जाने वाली बोलियों का उत्पत्ति का सूत्र मागधी से है। मध्य की हिंदी पूर्वी बोलियाँ शौरसेनी और मागधी के बीच अर्थात् अर्ध-मागधी से उद्भूत है"।[16]

इनमें से ग्रियर्सन का मत मान्य है। छत्तीसगढ़ी पूर्वी हिंदी की एक प्रमुख बोली है और इसकी उत्पत्ति अर्ध-मागधी अपभ्रंश से हुई है। अर्ध-मागधी से तात्पर्य है-मागधी और शौरसेनी क्षेत्रों की बीच की भाषा शैली। इसमें दोनों के लक्षण मिलते हैं। पूर्वी हिंदी की तीन बोलियाँ- अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति इसी से हुई। डॉ. बाबूराम सक्सेना के अनुसार-"अवधी की दक्षिण सीमा में छत्तीसगढ़ी है जो कि पूर्वी हिंदी का ही एक रूप है। उसमें अनेक ऐसे लक्षण हैं जो इसे अवधी से भिन्न करती हैं। वे पूर्वी हिंदी के तीन विशिष्ट बोलियों को स्वीकारते हुए अवधी को प्रमुख मानते हैं और बघेली को उसकी बोली मानते हुए छत्तीसगढ़ी को एक समर्थ बोली माना है"।[17]

छत्तीसगढ़ की मुख्य भाषा शैली होने के कारण इस क्षेत्र की भाषा का नाम छत्तीसगढ़ी पड़ा है। छत्तीसगढ़ में प्रचलित छत्तीसगढ़ी अपने अतिशय प्राचीन रूप में अवधी के निकट रही होगी। शताब्दियों से छत्तीसगढ़ में उत्तर-भारत के शासक अपने राज्य का विस्तार और प्रसार करते रहे हैं। उन्हीं राजाओं के साथ उत्तर-भारत की विशेषकर अवध प्रदेश की जनता का भी आगमन हुआ। इसी कारण से छत्तीसगढ़ी को

छत्तीसगढ़ की मूल बोली नहीं माना जाता है। छत्तीसगढ़ी बोली छत्तीसगढ़ में उत्तर प्रदेश से जबलपुर और मण्डला मार्ग से आई बताई जाती है। रतनपुर राज्य के हैहयवंशी संस्थापक उत्तरप्रदेश से छत्तीसगढ़ पहुँचे थे। उनकी अपनी भाषाई प्रवृत्तियाँ थीं। छत्तीसगढ़ में बसने के कारण इन प्रवृत्तियों पर यहाँ की भाषाओं का पर्याप्त प्रभाव पड़ा और उनका स्वरूप परिवर्तित होने लगा।

आधुनिक काल में छत्तीसगढ़ी और अवधी की समानता के आधार पर तथा मध्यकालीन अवधी साहित्य के भाषा विषयक अध्ययन के बल पर विद्वानों का मानना है कि आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व छत्तीसगढ़ी और अवधी में उतनी ही समानता और विभेदात्मकता रही होगी, जितनी कभी किसी भाषा की दो बोलियों में होती है। छत्तीसगढ़ी का जो स्वरूप आज हमें उपलब्ध है, उसमें भौगोलिक कारणों से छत्तीसगढ़ी के आधुनिक स्वरूप का निर्माण हुआ है। छत्तीसगढ़ की अपनी ऐतिहासिक और भौगोलिक विषमताओं के कारण छत्तीसगढ़ पर बंगला, ओड़िआ, भोजपुरी, बुन्देली, मराठी आदि भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो छत्तीसगढ़ में हिंदी का प्रचार प्रसार होने के कारण हिंदी से प्रभावित ही रही है।

4. क्षेत्र और सीमाएँ

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी किन-किन क्षेत्रों में बोली जाती है, उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है-

4.1. मानक ओड़िआ

सन् 2001 के जनगणना के अनुसार ओड़िसा राज्य में मानक ओड़िआ बोलने वालों की कुल जन संख्या 36, 706, 920 और क्षेत्रफल 155, 707 किलोमीटर है।[18] इसके विस्तृत आँकड़े इस प्रकार है-

क्षेत्र	**जनसंख्या**	**क्षेत्रफल**	
अनुगुल	1,139, 341	6, 347	वर्ग कि.मी.
बालेश्वर	2, 023, 056	3, 703	""
भद्रक	1, 332, 249	2,788	" "
कटक	2, 340, 686	3, 915	" "
गंजाम	3, 136, 937	8, 033	""
ढेंकानाल	1, 65, 983	4, 597	" "
गजपति	5, 18, 448	3, 056	" "
जगतसिंहपुर	1, 056, 556	1, 759	" "
जाजपुर	1, 622, 868	2, 885	" "
केंदुझर	1, 561, 521	8, 337	" "
केंद्रापड़ा	1, 301, 856	2, 546	" "
खुर्द्रा	1, 874, 405	2, 888	" "
मयूरभंज	2, 221, 782	10, 410	" "
मालकानगिरी	4, 80, 231	6, 115	" "
नवरंगपुर	1, 018, 171	5,135	" "
नयागढ़	8, 63, 134	3,954	" "
पुरी	1, 498, 604	30, 555	" "

उपरोक्त क्षेत्रों में मुख्य रूप से मानक ओड़िआ बोली जाती है। ओड़िआ भाषा की सीमाएँ इस प्रकार है-उत्तर में बंगला, उत्तर-पश्चिम में बिहार की उपभाषाएँ, दक्षिण में तेलुगु तथा दक्षिण-पश्चिम में छत्तीसगढ़ी। इसके साथ-साथ मुंड़ा परिवार की भी अनेक भाषाएँ इसके दक्षिण पश्चिम भाग में विद्यमान हैं, जिनका प्रभाव ओड़िआ भाषा पर पड़ा है।

4. 2. पश्चिमी ओड़िआ

पश्चिम ओड़िसा, ओड़िसा राज्य का ही एक भाग है, जहाँ पर पश्चिमी ओड़िआ बोली जाती है। सन् 2001 के जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 90, 14, 431 और क्षेत्रफल 521, 89 किलोमीटर है।[19] इसके विस्तृत आँकड़े इस प्रकार है-

क्षेत्र	**जनसंख्या**	**क्षेत्रफल**	
कलाहांड़ी	1, 335, 494	8, 917	वर्ग कि. मी.
झारसुगुड़ा	509, 716	2, 202	" "
देवगढ़	274, 108	2, 781	" "
नुआपड़ा	530, 690	3, 408	" "
बरगढ़	1, 343, 33,6	5, 832	" "
बलांगीर	1, 337, 194	6, 552	" "
बौद	373, 372	4, 289	" "
संबलपुर	935, 613	6, 702	" "
सुंदरगढ़	1, 830, 673	9, 942	" "
सोनपुर	541, 835	2, 284	" "

उपरोक्त क्षेत्रों में मुख्य रूप से पश्चिमी ओड़िआ बोली जाती है इसके अलावा छत्तीसगढ़ के रायपुर, रायगढ़, सारंगढ़, बस्तर तथा बिहार के कुछ स्थानों पर बोली जाती है। इसके उत्तर में बिहार की भाषा मगही, पश्चिम में छत्तीसगढ़ी, पूर्व में ओड़िआ तथा दक्षिण में तेलुगु का प्रचलन है।

4. 3. छत्तीसगढ़ी

छत्तीसगढ़ी मुख्य रूप से छत्तीसगढ़ में बोली जाती है। सन् 2001 के जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 20, 833, 803 और क्षेत्रफल 135, 191 वर्ग किलोमीटर है ।[20] इसके विस्तृत आँकड़े इस प्रकार है-

क्षेत्र	**जनसंख्या**	**क्षेत्रफल**	
रायपुर	3, 016, 930	13, 445	वर्ग कि.मी.
धमतरी	706, 591	4, 081	" "
महासमुंद	860, 357	4, 963	" "
दुर्ग	2, 890, 436	8, 702	" "
राजनंदगाँव	1, 283, 224	8, 023	" "
कवर्धा	584, 552	3, 958	" "
बिलासपुर	1, 998, 355	8, 569	" "
कोरबा	1, 011, 823	5, 769	" "
जांजगीर	1, 3,17, 431	4, 467	" "
रायगढ़	1, 265, 529	6, 528	" "
जशपुर	743, 160	6, 457	" "
सरगुजा	1, 172, 094	16, 034	" "
कोरिआ	586, 37	5, 978	" "
बस्तर	1, 306, 673	17, 016	" "
दन्तेवाड़ा	719, 487	15, 610	" "
कांकेर	650, 934	6, 610	" "

उपरोक्त क्षेत्रों में छत्तीसगढ़ी मुख्य रूप से बोली जाती है। इसके अलावा छत्तीसगढ़ के बाहर पश्चिम ओड़िसा के बरगढ़, झारसुगड़ा, नुआपड़ा, सुंदरगढ़ तथा मण्डला, बालाघाट, चांदा, नागपुर, आदि क्षेत्रों में बोली जाती है। छत्तीसगढ़ी आर्य एवं आर्येत्तर परिवार की अनेक बोलियों से घिरी हुई है। इसके उत्तर में भोजपुरी, पूर्वोत्तर में मगही, पूर्व में पश्चिमी ओड़िआ, दक्षिण में तेलुगु, पश्चिम में मराठी एवं पश्चिमोत्तर में बघेली का प्रचलन है।

5. संक्राति-क्षेत्र

दो भाषाओं या बोलियों के सीमावर्ती क्षेत्र को 'संक्रांति-क्षेत्र' कहा जाता है। दो बोलियों के मध्य यदि कोई प्राकृतिक व्यवधान न हो, तो सामान्यतः दोनों बोलियाँ एक-दूसरे के क्षेत्र का अतिक्रण करती हैं। ये बोलियाँ कितनी दूर तक किस अनुपात से अतिक्रमण करती हैं, इसका निर्णय करना गणित के समान निश्चयात्मक नहीं है। इस स्थान में संधिस्थल की मिश्रित बोली का प्रयोग होता है, जिसमें दोनों की विशेषताएँ विद्यमान रहती है। इसे 'संक्रमण क्षेत्र' भी कहते हैं।

मेरी अध्येय भाषाएँ हैं-मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी। मानक ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी को जोड़नेवाली बीच की कड़ी पश्चिमी ओड़िआ है। छत्तीसगढ़ का पूर्वी क्षेत्र उत्तर से दक्षिण तक ओड़िसा की सीमा को छूती है। जशपुर के दक्षिण से हमदो नदी का पूर्वी भाग चाँपा, सवस्ती और रायगढ़ जिले से दक्षिण की ओर महानदी को पार करके सारंगढ़ और फूलझर की रियासत तथा रायपुर, महासमुंद आदि क्षेत्र ओड़िआ प्रभावित क्षेत्र हैं। दक्षिण में भानुप्रतापुर और कांकेर की छत्तीसगढ़ी में भी ओड़िआ प्रभाव परिलक्षित होता है। ठीक इसके विपरीत छत्तीसगढ़ी का विस्तार ओड़िआ क्षेत्र में है। संबलपुर, बरगढ़, झारसुगुड़ा, सोनपुर, नूआपड़ा और पाटना के आसपास भी छत्तीसगढ़ी फैल गई है।

संक्राति क्षेत्र में द्विभाषिकता पाई जाती है। प्रथम भाषा के रूप में मातृभाषा का प्रयोग किया जाता है। दूसरी भाषा से शिक्षा और व्यवसाय चलता है। छत्तीसगढ़ की सीमा में ओड़िआ प्रभावित क्षेत्र के लोग अपने घर में ओड़िआ का प्रयोग करते हैं। किंतु बाहर छत्तीसगढ़ी का प्रयोग करते हैं। छत्तीसगढ़ के जो लोग संबलपुर आदि जिलों में जाकर बस गए हैं, वे घर में छत्तीसगढ़ी का प्रयोग करते हैं और बाहर ओड़िआ बोलते हैं। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी एक दूसरे से कितने अनुपात में प्रभावित हैं तथा उनमें कितनी समानता और असमानता है, इसका अध्ययन आगे के अध्यायों में किया जाएगा।

6. क्षेत्रीय रूप

6.1. मानक ओड़िआ

'ओड़िआ' एक समृद्ध भाषा है, लेकिन इसकी कितनी उपभाषाएँ और बोलियाँ हैं इसका कोई सुनिश्चित वर्गीकरण हमारे सामने नहीं है। इसका कारण है-ओड़िआ भाषा पर सर्वेक्षण तथा भाषावैज्ञानिक कार्य का न होना। सर जार्ज ग्रियर्सन के अनुसार केवल 'भत्री' ही ओड़िआ की यथार्थ विशुद्द बोली है।[21] ग्रियर्सन का यह मत भ्रांत सिध्द हो चुका है, क्योंकि 'भत्री' ओड़िआ भाषा की बोली नहीं है। 'भत्री' छत्तीसगढ़ी की एक बोली है। भत्री छत्तीसगढ़ के बस्तर जिलें में प्रयुक्त होती है। यह बोली ओड़िआ और मराठी से प्रभावित रूप है। ओड़िआ भाषाविदों के अनुसार ओड़िआ भाषा के निम्नलिखित क्षेत्रीय रूप हैं-

क. पश्चिमी रूप - संबलपुरी
ख. उत्तरी रूप - बालेश्वरी
ग. दक्षिणी रूप - गंजामी

6.1.1. संबलपुरी

संबलपुर, बरगढ़, सुंदरगढ़, बलागींर, झारसुगुड़ा आदि ओड़िसा के 12 जिलों में बोली जानेवाली भाषा का नाम 'संबलपुरी' है। संबलपुरी ओड़िआ भाषा की बोली है या स्वतंत्र भाषा है, इस पर विवाद है। इसका उल्लेख हम पिछले पृष्ठों में कर चुके हैं। यह भाषा हमारे शोध प्रबंध की तीन भाषाओं में से एक है। उपरोक्त 10-12 जिला अभी ओड़िसा में होने के कारण हमने यहाँ की भाषा को ओड़िआ के अंतर्गत रखा है लेकिन हम इसे ओड़िआ की बोली नहीं मान सकते हैं। पिछले पृष्ठों में इसका कारण हम बतला चुके हैं। जो भी हो पश्चिम ओड़िसा में बोली जानेवाली कथित भाषा का नाम संबलपुरी है। यह भाषा छत्तीसगढ़ी तथा हिंदी से प्रभावित है।

6.1. 2. गंजामी

ओड़िसा राज्य के दक्षिण भाग में प्रचलित ओड़िआ का नाम 'गंजामी' है। गंजाम,

कोरापुट, फूलवाणी आदि क्षेत्रों के जनसाधारण इस बोली का प्रयोग करते हैं। दक्षिणी ओड़िआ तेलुगु, हिंदी और विभिन्न आदिवासी भाषाओं से प्रभावित हैं। विशेष रूप से मुण्डा, देशिया, सउरा और रेली वर्ग के लोगों की भाषा से गंजामी प्रभावित हैं। जिसके कारण मानक ओड़िआ से भिन्न प्रतीत होती हैं।

6.1. 3. बालेश्वरी

ओड़िसा के उत्तर प्रांत में प्रचलित कथित भाषा का नाम 'बालेश्वरी' है। यह बोली मुख्य रूप से बालेश्वर, भद्रक, मयूरभंज और केंदुझर में प्रचलित है। ओड़िसा का उत्तरी भाग बंगाल के निकट है। जिससे यहाँ की बोली पर बंगला भाषा का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। ग्रियर्सन के अनुसार-"ओड़िसा के उत्तरी क्षेत्र के लोग ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं, जो बंगला भाषा में आरंभ होकर ओड़िआ में खत्म होती है या फिर ओड़िआ में आरंभ होकर बगंला में समाप्त होती है"।[22]

इस प्रकार भले ही ओड़िसा राज्य में ओड़िआ के विभिन्न रूप प्रचलित हैं, लेकिन समग्र ओड़िसा में ओड़िआ भाषा समझी जाती है। कविता, कहानी, नाटक आदि साहित्यिक- विधाओं, प्रशासन, विद्यालय और संवाद पत्र-पत्रिकाओं में मानक ओड़िआ का ही प्रयोग होता है। ओड़िआ भाषा ओड़िसा राज्य की राजभाषा है।

6. 2. पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी

पश्चिमी ओड़िआ का शुद्ध रूप संबलपुर में बोली जाती है, जिसके कारण इसे 'संबलपुरी' भी कहा जाता है। पश्चिम ओड़िसा के अंतर्गत आनेवाले क्षेत्र 1905 से पहले कोसल प्रदेश के अंतर्गत आते थे अर्थात् छत्तीसगढ़ के साथ मिलकर था यह क्षेत्र। पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढी की उत्पत्ति भी अर्ध-मागधी से हुई है। जिसके कारण दोनों क्षेत्रों की भाषा की क्षेत्रीय रूपों में समानता है। जो निम्नलिखित है-

क. हलबी

ख. भतरी

ग. भूलिया

घ. आगरिया

ङ. सदरी

6. 2.1. हलबी

'हलबी' एक खास लड़ाकू जाति की भाषा है, जो पश्चिम ओड़िसा, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र राज्य के संधिस्थल बस्तर में बोली जाती है।

6. 2. 2. भतरी

'भतरी' बस्तर, रायपुर, और कलाहांड़ी जिले के बीच में बोली जानेवाली भतरा लोगों की जातीय बोली है।

6. 2. 3. भूलिया

रायगढ़, बरगढ़, संबलपुर, बलागींर आदि जिलों मे हाथ करघे से कपड़े बुनकर आजीविका चलानेवाली 'भुलिया' नाम की एक जाति है। उनकी जातीय बोली 'भूलिया' कहलाती है।

6. 2. 4. आगरिया

पूरे पूर्वी छत्तीसगढ़ एवं सुदंरगढ़, बरगढ़ आदि क्षेत्रों में एक खेतिहर जाति का नाम 'आगरिया' है, जिनकी जातीय बोली 'आगरिया' है।

6. 2. 5 सदरी

सुंदरगढ़ एवं पूर्वी रायगढ़ जिले के पहाड़ी इलाकों में कई आदिम जातियाँ हैं- भूयाँ, उरांग, खाड़िया, कुर्कू आदि जातियों की अपनी-अपनी बोलियाँ हैं और एक जाति की बोली दूसरे के लिए दुर्बोध्य होती है। उन आदिम जातियों की संपर्क भाषा का नाम 'सदरी' है।

उपरोक्त जनवाणियाँ पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के अंतर्गत आती हैं। ये जनवाणियाँ कब से कैसे, कथित होती हैं आदि प्रश्न स्वतंत्र शोध के विषय हैं।

7. लिपि

7.1. मानक ओड़िआ

लिपि की दृष्टि से 'ओड़िआ' लिपि का प्रमुख स्थान है । इस लिपि का उद्‌भव कब हुआ यह तो ठीक से नहीं कहा जा सकता, फिर भी अशोक के शिलालेख तथा हाथी गुफाओं में उत्कीर्ण खारबेल के शिलालेखों से इसका संबंध जरूर रहा होगा। चौथी शताब्दी से सातवीं शताब्दी तक कलिंग भी गुप्त साम्राज्य के अधीन रहा, फलतः यहाँ गुप्तलिपि का प्रचलन हुआ। ग्यारहवीं शताब्दी में सौंदर्यवृद्धि के लिए लिपिचिन्हों के नीचे कुछ चिन्ह लगाये जाने लगे। तेरहवीं शताब्दी तक ओड़िसा की वर्तमान लिपि विकसित हुई। ओड़िआ की वर्तमान लिपि पर उत्तर तथा दक्षिण की अपूर्व लिपियों का प्रभाव भी पड़ा, विशेषतः कुटिल लिपि के प्रभाव का। ओड़िआ लिपि का प्रारंभ तथा ताड़पत्र-लेखन का विकास एक साथ हुआ और ताड़पत्रों पर लिखने की सुविधा के लिए ही ओड़िआ लिपि में शिरोरेखा नहीं, वरन् गोलाई लिये हुए रेखाएँ हैं। लिपि विशेषज्ञों के मतानुसार ताड़पत्रों पर लिखे जाने का कारण ही ओड़िआ अक्षरों की आकृति गोलाई लिये हुए हो गयी।

7. 2. पश्चिमी ओड़िआ

पश्चिमी ओड़िआ की लिपि 'ओड़िआ' है। कहानी, कविता, नाटक, आदि सभी विधाएँ इस लिपि में लिखी जाती हैं। इसके अलावा यह देवनागरी लिपि में भी लिखी जा सकती है। सन् 1905 से पूर्व पश्चिमी ओड़िआ देवनागरी में लिखी जाती होगी। पश्चिम ओड़िसा, ओड़िसा राज्य में मिलने के पश्चात इस भाषा की लिपि ओड़िआ हो गई है।

7. 3. छत्तीसगढ़ी

छत्तीसगढ़ी, पूर्वी हिंदी की एक बोली है। इसकी कोई स्वतंत्र लिपि नहीं है। हिंदी की भाँति छत्तीसगढ़ी भी 'देवनागरी' लिपि में लिखी जाती है।

अब हम यहाँ पर व्याकरणिक संवर्गों से क्या अभिप्राय है, व्याकरणिक संवर्ग कितने हैं, उनकी परिभाषा, स्वरुप तथा भाषा में उनका महत्व एवं व्यतिरेकी अध्ययन

आदि बातों पर संक्षेप में विचार करेंगे।

8. व्याकरण का स्वरुप

व्याकरण भाषा की रचना या संघटन का परिचायक है। जैसे वास्तुशास्त्र मकान बनाने के लिए नियम या ढंग बताते हैं, उसी प्रकार व्याकरण भी भाषा का निर्माण बताता है।[23] पतंजलि के अनुसार जिस से साधु शब्द का ज्ञान हो, उसे 'व्याकरण' कहते हैं। व्याकरण का दूसरा नाम शब्दानुशासन भी है। इसी बात को कामताप्रसाद गुरु ने इस प्रकार कहा है-"किसी भी भाषा का सर्वांगपूर्ण व्याकरण वही है, जिस से उस भाषा के सब शिष्ट रुपों और प्रयोगों का पूर्ण विवेचन किया जाए और उसमें यथासंभव स्थिरता लाई जाए"।[24] हमारे पूर्वजों ने व्याकरण का यही उद्येश्य माना है। व्याकरण के नियम बहुधा लिखी हुई भाषा के आधार पर निश्चित होते हैं, क्योंकि उसमें शब्दों का प्रयोग उच्चरित भाषा की अपेक्षा अधिक सावधानी से किया जाता है।

व्याकरण शब्द इस प्रकार बना है-(वि+आ+कृ+ल्युट्)। इसमें 'वि' और 'आ' उपसर्ग हैं, 'कृ'-धातु है एवं 'ल्युट्'-प्रत्यय है। जिसका का अर्थ है-विग्रह, विश्लेषण, पृथक।[25] व्याकरण में वे नियम समझाए जाते हैं, जो शिष्टजनों द्वारा स्वीकृत शब्दों के रुप में और प्रयोग मे दिखाई देते हैं। व्याकरण भाषा के अधीन है और भाषा के अनुसार बदलता रहता है। व्याकरण के संबंध में यह बात स्मरण रखने योग्य हैं कि भाषा को नियमबद्ध करने के लिए व्याकरण नहीं बनाया जाता, वरन् भाषा पहले बोली जाती है और उस के आधार पर व्याकरण की उत्पति होती है।[26] किंतु लोग व्याकरण की अपेक्षा साहित्य को अधिक महत्व देते हैं, वे भ्रम में हैं, वास्तविकता यह है कि दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं।

8.1. व्याकरण की प्रकृति

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कोशकार स्व. रामचंद्र वर्मा ने व्याकरण और भाषा की प्रकृति के भिन्न-भिन्न कार्यक्षेत्रों को स्पष्ट करते हुए लिखा है-"प्रत्येक भाषा की प्रकृति उस भाषा के व्याकरण से बिलकुल भिन्न और स्वतंत्र होती है। व्याकरण में उन्हीं बातों

का विचार करता है, जो उसकी प्रकृति की क्रयात्मक अभिव्यक्ति के कारण हमारे सामने आती है। हाँ व्याकरण के नियमों और तथ्यों का विचार करके हम उस प्रकृति का कुछ कुछ परिचय पा सकते हैं।.....फिर भी भाषा की प्रकृति है बिलकुल अलग चीज"।[27]

भाषा प्रकृतितः विषमरूपी होती है जब कि व्याकरण में समरूपता की खोज की जाती है। अतः भाषा और व्याकरण के बीच सामंजस्य स्थापित करना प्रायः कठिन प्रतीत होता है। इस कठिनाई का निराकरण मानकीकरण के माध्यम से किया जाता है, यद्यपि भाषा में क्रमिक- विकास की प्रक्रिया के फलस्वरुप मानक भाषा में भी न्यूनाधिक रुप से परिवर्तन-परिवर्धन होता रहता है, तथापि मानक भाषा में भाषा के अन्य प्रचलित रूपों की तुलना में विचलन या विषमरूपता कम पाई जाती है। कदाचित यही कारण है कि कालक्रम से भाषा विश्लेषण अर्थात् व्याकरण के अर्थ में परिवर्तन आया है तथा उस का मॉडल भी एक सा नहीं रह पाया है। पारंपरिक व्याकरण में अर्थ का विशद विवेचन मिलता है, परंतु व्याकरणिक विश्लेषण न तो पूर्णतः अर्थाश्रित था और न ही पूर्णतः रूपाश्रित। इसके साथ-साथ अर्थ और रूप में सह-सबंध के विषय में भी स्पषटतया कोई सैद्धांतिक उपागम नहीं किया गया, वह अनुशासनात्मक अधिक था, वर्णनात्मक-व्याख्यात्मक कम। ब्लूमफील्ड (1933) से लेकर हॉकिट (1958) तक भाषाविश्लेषण में वर्णनात्मकता का प्राधान्य रहा। इसके पश्चात् व्याकरण के जितने भी मॉड़ल सामने आए, उस में मूलभूत समस्या अर्थ और वाक्य के मध्य संबंध स्थापना से संबंधित रही है।[28]

8. 3. व्याकरणिक संवर्गों से तात्पर्य

व्याकरणिक संवर्गों पर भारतीय तथा पाश्चात्य वैयाकरणों ने अपने ग्रंथों में विस्तार से चर्चा की है। व्याकरणिक संवर्ग के लिए अंग्रेजी में 'Grammatical Categories' शब्द प्रचलित है। अरस्तू ने अपने व्याकरण में 'Categoes' शब्द का प्रयोग किया है। 'categoe' का अर्थ है वर्ग या संवर्ग, जो व्याकरणिक तत्वों से

संबंधित है। कोटि का संबंध भी संवर्ग से है। अतः व्याकरण के संवर्ग ही व्याकरणिक कोटियाँ हैं।[29]

8. 4. व्याकरणिक संवर्गों के प्रकार

दूर्योधन महारणा के अनुसार व्याकरणिक संवर्ग या कोटियाँ दो हैं-[30]

1. प्रकार्यात्मक कोटियाँ

2. रूपात्मक कोटियाँ

प्रकार्यात्मक कोटियों के अंतर्गत उद्देश्य, विधेय, कर्ता और कर्म आते हैं तथा रुपात्मक कोटियाँ के अंतर्गत लिंग, वचन, काल आदि आते हैं। उपर्युक्त दोनों प्रकार की कोटियाँ व्याकरणिक तो हैं ही और सभी भाषाओं में पाए जाने के कारण सार्वभौम प्रकृति भी हैं। फिर भी दोनों में कुछ मौलिक अंतर है, जो निम्नलिखित है-

किन्हीं दो भाषाओं की प्रकार्यात्मक कोटियों में कोई भेद नहीं होता है, क्योंकि यह कोटि शब्दों के कोशीय अर्थ एवं वाक्य के कारकीय संबंध पर आधारित है।

रूपात्मक कोटि प्रकार्यात्मक कोटि का पुनः कोटि बंधन मात्र है। जैसे क्रिया कोटि को काल, पक्ष, वृत्ति आदि के साथ-साथ लिंग, वचन, पुरुष के अनुसार कोटिबंधन किया जाता है। वैसे ही संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि नामिक कोटियों को लिंग, वचन, पुरुष, कारक के अनुसार कोटिबंधन किया जाता है। इस दृष्टि से प्रकार्यात्मक कोटियों को मुख्य एवं रुपात्मक कोटियों को गौण कोटि माना जा सकता है। इस प्रकार समस्त व्याकरणिक संवर्गों या कोटियों को मुख्यतः दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1. नामिक कोटियाँ-Nominal Categories-लिंग, वचन, पुरुष और कारक।

2. क्रियापरक कोटियाँ-Verbal Categories-पक्ष, काल, वृत्ति और वाच्य।

किसी भी भाषा में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया आदि शब्द (Lexical Items) कोशीय इकाईयाँ होती हैं। किंतु वाक्य में जब इन शब्दों का प्रयोग करते हैं तब ये दूसरे शब्दों से मिलकर अर्थगत संबंध की स्थापना करते हैं। यह संबंध कई प्रकार का होता है। इसमें संख्या, पुरुष, लिंग, पूर्णता या अपूर्णता आदि संबंध निर्धारक और विशेषक जो

तत्व हैं ये कोशीय न होकर विशुद्ध व्याकरणिक तत्व हैं। इस बात को स्पष्ट करने के लिए हिन्दी का एक उदाहरण लिया जा सकता है-

'बेटी' एक संज्ञा है। कोशीय अर्थ की दृष्टि से यह माता-पिता से उत्पन्न संतान का वाचक है। किन्तु इस संतान के बारे में किसी भी श्रोता को यह जिज्ञासा हो सकती है कि वह पुरुष है या स्त्री है। 'बेटी' में ई-कार है उससे यह सूचना मिलती है कि यह संतान स्त्री वाचक है। हम इसे अर्थ को व्याकरणिक तत्व कह रहे हैं। यदि हम कहना चाहें कि यह संतान पुरुष है तो उसके लिए अलग शब्द का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं होती। संज्ञा के अंतिम ईकार के स्थान पर आकार कर दें तो इस रुपान्तर से ही सूचना मिलती है कि संतान पुरुष है। इसलिए लिंग को एक व्याकरणिक तत्व माना जाता है, लेकिन हिन्दी के कई ऐसे शब्दों में से इस प्रकार भौतिक या शारीरिक लिंग की व्याख्या करना संभव नहीं है। पत्थर, इंतजार पुलिंग हैं, पुड़िया, पुस्तक स्त्रीलिंग हैं। इस व्यवस्था का तात्पर्य क्या है? हिन्दी भाषा के शब्दों में लिंग एक विशुद्ध व्याकरणिक कोटि है, प्राणीशास्त्रीय लिंग से उसका कोई संबंध नहीं है। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि जो अर्थ कोशीय इकाईयों के द्वारा प्रगट नहीं होता, जो अर्थ भौतिक या प्राकृतिक व्यवस्था में निहित नहीं है किंतु व्याकरणिक संकल्पना के रूप में व्याकरणिक रूपों के आधार पर जिन अर्थों की अभिव्यक्ति की जाती है, उनको व्याकरणिक संवर्गों का नाम दिया जाता है। अंग्रेजी में इनको 'Grammatical Categories' कहते हैं।

अतः भाषा में मुख्य रूप से दो प्रकार की कोटियों की संकल्पना की गई है-[31]

1. लौकिक कोटियाँ (logical categories)-वास्तविक पदार्थ, कोशीय अर्थ का बोध
2. व्याकरणिक कोटियाँ (grammatical categories)-व्याकरणिक सूचनाएँ, लिंग, वचन, पुरुष, पक्ष, काल, वृत्ति, वाच्य

लौकिक कोटियों (logical categories) से तात्पर्य भाषा की उन कोटियों से है जिनसे जगत् की लौकिक अर्थ का बोध होता है। व्याकरणिक कोटियों (grammatical

categories) से अर्थात जगत के किसी व्यक्ति, पदार्थ या भाव का बोध नहीं होता बल्कि भाषा व्याकरण में निहित किसी ऐसी सूचना का बोध होता है, जिसका अस्तित्व केवल व्याकरण तक सीमित होता है।

भाषा में कुल आठ व्याकरणिक कोटियों की सत्ता मानी जाती है, जिनमें से चार का संबंध मूलरूप से संज्ञा से है और चार का क्रियाओं से-[32]

1. संज्ञा से संबंध-लिंग (gender), वचन (number), पुरुष (person),कारक (case)
2. क्रिया से संबंध-वाच्य (voice), पक्ष (aspect), वृत्ति (mood) और काल (tense)

व्याकरणिक कोटियाँ हर भाषा की निजी संपत्ति होती है और इसलिए इनके प्रयागो-नियम हर भाषा में अलग-अलग होते हैं। ये संख्या या आकार में सीमित होती हैं। इसलिए दो भाषाओं के व्यतिरेकी विश्लेषण में व्याकरणिक कोटियों का विश्लेषण केंद्रीय माना जाता है।

9. व्यतिरेकी अध्ययन

भाषा का वैज्ञानिक विश्लेषण ही भाषा विज्ञान की प्रक्रिया है। इसका क्षेत्र विस्तार एवं व्यापक है। इसकी कई शाखाएँ प्रचलित हैं। इन शाखाओं में व्यतिरेकी भाषाविज्ञान एक है। समस्त शाखाओं को भाषा विज्ञान के दो पक्षों सैद्धान्तिक एवं अनुप्रयुक्त पक्ष के अतंर्गत रख सकते हैं। व्यतिरेकी भाषाविज्ञान अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान का अंग है। अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान (Applied Linguistics) में भाषा वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रायोगिक पक्ष पर बल दिया जाता है। व्यतिरेकी भाषा विज्ञान और व्यतिरेकी विश्लेषण अलग-अलग नहीं है। इसी का अन्य पर्याय नाम भी हैं-व्यतिरेकी अध्ययन, भेदात्मक व्याकरण और व्यतिरेकी व्याकरण।

भाषा विज्ञान में हर भाषा अपने अस्तित्व को बनाये रखती है। दो भाषाओं की तुलना में कुछ समान तत्व और असमान तत्व विद्यमान होते हैं। इन समानताओं और असमानताओं का वर्णन भाषा विज्ञान की एक शाखा तुलनात्मक भाषा विज्ञान और व्यतिरेकी भाषा विज्ञान करता है।

व्यतिरेकी भाषा विज्ञान, भाषा विज्ञान के उस प्रकार को कहते हैं, जिसमें दो या अधिक भाषाओं की विभिन्न स्तरों पर तुलना करके आपसी विरोधों या व्यतिरकी का पता लगाते हैं। दो भाषाओं की तुलना करने पर दो बातें हमारे सामने आती हैं-

1. दोनों भाषाएँ किन-किन बातों में समान हैं?

2. दोनों भाषाएँ किन-किन बातों में असमान हैं?

व्यतिरेकी अध्ययन करते समय दो भाषाओं की संरचनाओं में विद्यमान संरचनात्मक असमानताओं और समानताओं का विभिन्न स्तरों पर तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। तुलना ध्वनि व्यवस्था, व्याकरणिक संरचना, शब्दावली, लिपि आदि स्तरों पर हो सकती है।

प्रत्येक भाषा की प्रकृति में अपनी निजी विशिष्टता होती है और भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार की अनेक विशिष्टताएँ दिखाई पड़ती हैं। इन विशिष्टताओं को समझने का आधार तुलना ही हो सकती है। इस प्रकार विशिष्टाताओं को ध्यान में रख कर दो या दो से अधिक भाषाओं के विभिन्न भाषायी तत्वों (ध्वनि, रुप आदि) के तुलनात्मक विश्लेषण को व्यतिरेकी अध्ययन की संज्ञा दी जाती है। तुलनात्मक अध्ययन और व्यतिरेकी अध्ययन एक ही प्रकार के तकनीकी विकास है। दोनों में दो भाषाओं का तुलनात्मक वर्णन किया जाता है, लेकिन दोनों में भिन्नता है। तुलनात्मक अध्ययन समानताओं और असमानताओं दोनों पर बल देता है। व्यतिरेकी अध्ययन इससे भिन्न है। क्योंकि व्यतिरेकी अध्ययन में असमानताओं पर ज्यादा बल दिया जाता है।

इस प्रकार व्यतिरेकी विश्लेषण अध्येय भाषाओं में अंतर्निहित विशिष्टताओं को उजागर करता है। इसका संबंध भाषा के ऐतिहासिक पक्षों का अध्ययन करने से नहीं है और न ही उनकी समानताओं का अध्ययन करने से है। व्यतिरेकी अध्ययन का उद्येश्य भाषाओं में निहित समानताओं के स्थान पर भाषाओं में विद्यमान असमानताओं अथवा विभिन्नताओं को ढूढँना है। इसमें यह भी देखने का प्रयास किया जाता है कि इन विषमताओं को किस प्रकार स्पष्ट किया जाए ताकि संबद्ध विषय को स्पष्ट करने में सहायता मिल सके।

व्यतिरेकी अध्ययन अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान का विषय है और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान भाषा-शिक्षण का सहयोगी है। भाषा शिक्षण की प्रक्रिया भी मातृभाषा एवं अन्य भाषा के संदर्भ में अलग-अलग होती है। व्यतिरेकी अध्ययन का मुख्य संबंध अन्य भाषा-शिक्षण से है। व्यतिरेकी अध्ययन से भाषा शिक्षण में निम्नलिखित उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं-

1. अन्य भाषा शिक्षण में होनेवाली कठिनाइयाँ एवं अधिक्रम।
2. अन्य भाषा सीखते समय संभावित मातृभाषा के व्याघात स्थल एवं प्रकार।
3. मातृभाषा के आरोपण या स्थानांतरण की स्थिति एवं प्रक्रिया।
4. पाठ्यबिन्दुओं का निर्धारण।
5. पाठ्यबिन्दुओं का चयन एवं अनुस्तरण।
6. वैज्ञानिक व्याकरण को अध्येता के लिए शैक्षणिक व्याकरण में परिवर्तन।
7. व्यतिरेकी अध्ययन का उपयोग भाषा शिक्षण के अलावा अनुवाद क्षेत्र में भी किया जाता है।
8. भाषावैज्ञानिक सिद्धान्त के रुप में व्यतिरेकी अध्ययन विभिन्न भाषाओं के बीच पायी जानेवाली समानताओं के आधार पर सर्वभौम व्याकरण (universal grammar) की खोज करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी आधुनिक भारतीय आर्यभाषा के अंतर्गत आते हैं। मानक ओड़िआ की उत्पत्ति मागधी अपभ्रंश तथा पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति अर्ध-मागधी अपभ्रंश से हुई है। इस अध्याय में मैंने इन तीनों भाषाओं का सामान्य परिचय देने का प्रयास किया है। आगे के अध्यायों में हम मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की ध्वनि व्यवस्था, व्याकरणिक संवर्ग आदि का व्यतिरेकी अध्ययन करेंगे। भाषा में व्याकरणिक संवर्गों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि भाषा की संरचना इन्हीं पर आधारित होती हैं। लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, पक्ष, वृत्ति और वाच्य व्याकरणिक संवर्ग के अंतर्गत आते हैं। ये आठ वर्ग प्रत्येक भाषा के व्याकरण के मुख्य अंग होते हैं। इनको दो वर्गों में बाँटा जाता है-नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष, कारक) और क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष, वाच्य, वृत्ति)। व्याकरणिक संवर्ग हर भाषा की निजी संपत्ति होती हैं और इसलिए इनके प्रयोग-नियम हर भाषा में अलग-अलग होते हैं। ये संख्या या आकार में सीमित होती हैं। इसलिए दो भाषाओं के व्यतिरेकी विश्लेषण में व्याकरणिक संवर्गों का विश्लेषण केंद्रीय माना जाता है। व्यतिरेकी विश्लेषण के माध्यम से दो भाषाओं में निहित विशिष्टताओं को उद्‌घाटित किया जाता है। मेरी अध्येय तीनों भाषाएँ एक दूसरे के सन्निकट होने के कारण एक दूसरे से प्रभावित हैं। इन भाषाओं में पर्याप्त समानताएँ तथा विषमताएँ हैं। इन्हीं समानताओं तथा विषमताओं का अध्ययन अगले अध्यायों में किया जाएगा।

संदर्भ

1. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी भाषा-पृ. सं.-8

2. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी भाषा-पृ. सं.-20

3. ग्रियर्सन, जर्ज आब्रहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण-अनुवाद खण्ड-1-पृ. सं.-235-36
(अनुवादक-डॉ. उदयनारायण तिवारी)

4. चटर्जी, सुनीति कुमार-दि ओरिजिन एण्ड डेवलपमेंट ऑफ बेंगली लैंग्वेज-पृ. सं.-6

5. बाहरी, हरदेव-हिन्दी उदभव, विकास और रुप-पृ. सं.-47

6. वर्मा, धीरेन्द्र-हिन्दी भाषा का इतिहास-पृ. सं.-57

7. धल, गोलक बिहारी-ध्वनि विज्ञान-पृ. सं.-2

8. ग्रियर्सन, जर्ज अब्राहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण अनुवाद खण्ड-1-पृ. सं.-247

9. भाटिया, कैलाशचंद्र-भारतीय भाषाएँ-पृ. सं.-18

10. जैन, कांति कुमार-छत्तीसगढ़ी बोली, व्याकरण और कोश-पृ. सं.-27

11. भाटिया, कैलाशचंद्र-भारतीय भाषाएँ-पृ. सं.-18

12. तिवारी, उदयनारायण-हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास-पृ. सं.-119

13. भाटिया, कैलाशचंद्र-भारतीय भाषाएँ-पृ. सं.-19

14. पाणीग्राही, निलमाधव और त्रिपाठी, प्रफुल्ल कुमार-संबलपुरी कोसलि व्याकरण-भूमिका

15. चटर्जी, सुनीति कुमार-दि ओरिजन एण्ड डेंवलपमेंट ऑफ बेंगली लैग्वेज-पृ. सं.-150

16. ग्रियर्सन, जर्ज अब्रहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण-अनुवाद खण्ड-6-पृ. सं.-2

17. सक्सेना, बाबूराम-अवधी का विकास-पृ. सं.-3

18. भार्गव, गोपाल एण्ड भट्‌ट, एस. सी.-लैंण्ड एण्ड पिपुल-ओड़िसा-पृ. सं.-43

19. भार्गव, गोपाल एण्ड भट्‌ट, एस. सी.-लैण्ड एण्ड पिपुल-ओड़िसा-पृ. सं.-43

20. भार्गव, गोपाल एण्ड भट्‌ट, एस. सी.-लैण्ड एण्ड पिपुल-छत्तीसगढ़-पृ. सं.-27

21. ग्रियर्सन, जर्ज अब्रहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण-अनुवाद खण्ड-1-पृ. सं.-287

22. ग्रियर्सन, जर्ज अब्रहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण-अनुवाद खण्ड-1-पृ. सं.-288

23. वर्मा, रामचन्द्र-अच्छी हिन्दी-पृ. सं.-16

24. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-2

25. वामन, शिवराय आप्टे-संस्कृत हिन्दी कोश-पृ. सं.-988

26. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-5-6

27. वर्मा, रामचन्द्र-अच्छी हिन्दी-पृ. सं.-76

28. कर, चित्तरंजन-हिन्दी परसर्गों का अर्थवाक्यपरक अध्ययन-पृ. सं.-81-83

29. वर्मा, रामलाल-हिन्दी-असमिया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-3

30. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं-1-2

31. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-109

32. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण-पृ. सं.-110

द्वितीय अध्याय

ध्वनि संरचना

किसी भी भाषा का विश्लेषण करने से पहले उस भाषा की ध्वनियों का अध्ययन आवश्यक है। अतः मैंने प्रस्तुत अध्याय में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की ध्वनियों का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। ध्वनि विवेचन से इन भाषाओं की ध्वनियों में स्थित समानता और असमानता सामने आ पाएगी। इन तीनों भाषाओं की ध्वनियों का विश्लेषण करने से पहले ध्वनि के संबंध में किंचित विवेचन आवश्यक जान पड़ता है।

किसी वस्तु से उत्पन्न किसी भी प्रकार की आवाज़ को सामान्य रुप से 'ध्वनि' कहते हैं। ध्वनि का अर्थ है-नाद। गाड़ी मोटर का चलना, पेड़ से फल गिरना आदि ध्वनि हैं। अर्थात् किसी तरह की निकली हुई श्रवणीय आवाज़ को ध्वनि कहते हैं। इस दृष्टि से ध्वनि का अर्थ व्यापक और विस्तृत हो जाता है। भाषा विज्ञान के अंतर्गत केवल मनुष्य के मुख से निःसृत आवाज को ही ध्वनि माना गया है। अर्थात् जब हम भाषा के संदर्भ में ध्वनि की चर्चा करते हैं तो वह भौतिक जगत में उत्पन्न होनेवाली ध्वनि से अलग है। भाषाविज्ञान का संबंध लिखित भाषा से न होकर ध्वन्यात्मक भाषा से होता है- ऐसी ध्वन्यात्मक भाषा जो उत्पादन, संवहन और ग्रहण की प्रक्रियाएँ रखती हैं। इसलिए इस ध्वनि को सामान्य से कुछ भिन्न दर्जा देने के लिए 'भाषा-ध्वनि' (speech sound) कहा जाता है।[1] भाषा ध्वनि का तात्पर्य है-जिसे मनुष्य अपने मुख के निश्चित प्रयत्न द्वारा किसी ध्येय को स्पष्ट करने के लिए वक्ता उच्चरित करे और श्रोता जिसे उसी अर्थ में ग्रहण करे। ध्वनि के भाषा वैज्ञानिक अर्थ में केवल व्यक्त-वाक् का ही अंतर्भाव होता है। अव्यक्त वाक् नहीं। भाषा का प्रमुख उद्देश्य भावों-विचारों का विनिमय है। इसका मूलाधार है-व्यक्त वाक्। भाषा में केवल सार्थक ध्वनियों का प्रयोग होता है, निरर्थक ध्वनियों का नहीं और ध्वनियाँ अलग से सार्थक नहीं होतीं किंतु ये आपस में मिलकर सार्थक शब्द, रूप, वाक्य तथा प्रोक्ति का निर्माण करती हैं। सरल शब्दों में भाषा ध्वनि

उच्चरित भाषा की लघुतम इकाई है। भाषाविज्ञान तथा व्याकरण ग्रंथों में ध्वनि के दो प्रमुख भेद स्वर और व्यंजन के रुप में मिलते हैं, जो आज भी सर्वस्वीकृत हैं।

स्वर शब्द 'स्व' धातु से बना है, जिसका अर्थ होता है-स्वर करना। इसकी व्युत्पत्ति है-'स्वयं राजन्ते' अर्थात् जो स्वयं बिना किसी अवलंब के स्थित रहे। इससे अलग व्यंजन का संबंध अज् धातु से है। इसका अर्थ होता है-प्रकट करना। गोलक बिहारी धल के अनुसार-"स्वर वे सघोष ध्वनियाँ हैं, जिनके उच्चारण में वायु प्रवाह फेफड़ों से निसृत होकर निर्बाध रुप से कंठबिल तथा मुखरंध्र में होकर बाहर निकलती है और जिनके उच्चारण में वायुमार्ग में न तो रुकावट ही उत्पन्न होती है और न ऐसी संकीर्णता ही, जिससे घर्षण उत्पन्न हो। इन ध्वनियों के अतिरिक्त शेष ध्वनियाँ व्यंजन हैं"।[2]

स्वर और व्यंजन में न केवल इतना अंतर है कि एक में वायु-प्रवाह निर्बाध रुप से और दूसरे में सबाध रुप से निःसृत होती है, बल्कि इन दोनों प्रकार की ध्वनियों में प्रमुख भिन्नता इनकी मुखरता में भी है। जो ध्वनि जितनी दूर तक सुनाई देती है वह उतनी मुखर मानी जाती है। इस दृष्टि से स्वरों की मुखरता व्यंजनों की मुखरता से कहीं अधिक है। इस प्रकार स्वर और व्यंजन में अंतर है।

प्रत्येक भारतीय भाषाओं का मूलाधार वैदिक संस्कृत है। इस भाषा में कुल मिलाकर 52 ध्वनियाँ थीं, जिनमें 13 स्वर और 39 व्यंजन हैं।[3] वे ध्वनियाँ निम्नलिखित हैं-

नौ साधारण स्वर-अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ

चार संध्यक्षर-ए, ओ, ऐ, औ

पाँच कंठ्य-क्, ख्, ग्, घ्, ङ्

पाँच तालव्य-च्, छ्, ज्, झ्, ञ्

सात मूर्धन्य-ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण

पाँच दंत्य-त्, थ्, द्, ध, न्

पाँच ओष्ठय-प्, फ्, ब्, भ्, म्

चार अंतस्थ-य (तालव्य), र (मूर्धन्य), ल (दंत्य), व (ओष्ठ्य)

तीन ऊष्म-श (तालव्य), ष (मूर्धन्य), स (दंत्य)

एक महाप्राण-ह

एक शुद्ध नासिका ध्वनि-अनुस्वार

तीन अघोष ऊष्म-विसर्जनीय, जिह्वामूलीय, उपधमानीय

इस प्रकार संस्कृत में कुल 13 स्वर और 39 व्यंजन ध्वनियाँ थीं। धीरे-धीरे पालि, प्राकृत और अपभ्रंश में इनकी संख्या घटती गई। भारतीय भाषाएँ अपनी आवश्यकताओं के अनुसार ध्वनियों को अपनाती गई हैं। हमारा प्रमुख ध्येय मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की ध्वनियों का विश्लेषण करना है। अतः आगे की पृष्ठों में इन भाषाओं की ध्वनियों में पाई जानेवाली समानता और असमानताओं का विवेचन करेंगे।

1. स्वर ध्वनि

जैसे की मैं पिछले पृष्ठों में उल्लेख कर चुका हूँ कि भाषाविज्ञान का संबंध लिखित भाषा से न होकर ध्वन्यात्मक भाषा से होता है। अतः हम यहाँ पर शब्दोच्चारण की विधि के अनुसार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी भाषा में पाई जानेवाली समान स्वर ध्वनियों का विवेचन करेगें। इन तीनों भाषाओं के स्वरों में निम्नलिखित समानता है-

	मानक ओड़िआ[4]	पश्चिमी ओड़िआ[5]	छत्तीसगढ़ी[6]
ह्रस्व स्वर	अ	अ	अ
	इ	इ	इ
	उ	उ	उ
दीर्घ स्वर	आ	आ	आ
	ए	ए	ए
	ओ	ओ	ओ

हिन्दी भाषा में प्रयुक्त स्वर ध्वनियाँ निम्नलिखित हैं-

ह्रस्व	दीर्घ
अ	आ
इ	ऑ
उ	ई
	ऊ
	ए
	ऐ
	ओ
	औ

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगडढ़ी के अ, आ, इ, उ, ए और ओ आदि 6 स्वर ध्वनियों में उच्चारण की दृष्टि से समानता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में दीर्घ स्वर 'ई' और 'ऊ' का उच्चारण 'इ' और 'उ' के रुप में होता है। छत्तीसगढ़ी में 'ई' और 'ऊ' का भी प्रयोग होता है। संध्य स्वर 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण 'अइ' और 'अउ' के रूप में होता है। हिन्दी में 10 स्वर ध्वनियाँ हैं। अतः हम यहाँ पर इन 6 स्वर ध्वनियों का विश्लेषण करेगें।

1.1. स्वरों का वर्गीकरण

प्रायः सभी भाषाओं की स्वर ध्वनियों का रूप एक जैसा है। भोलानाथ तिवारी ने स्वरों के वर्गीकरण का पाँच आधार माना है।[7]

1. मात्रा के आधार पर-ह्रस्व और दीर्घ
2. जीभ के भाग के आधार पर-अग्र, मध्य और पश्च
3. हवा के मुख और नाक के रास्ते से निकलने के आधार पर-निरुनासिक और अनुनासिक

4. ओष्ठों की स्थिति के आधार पर-वृत्तामुखी और अवृत्तामुखी

5. जीभ के उठने के आधार पर-संवृत, अर्ध संवृत, अर्ध विवृत, विवृत

इन्हीं आधारों पर मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्वरों को निम्नलिखत वर्गों में बाँटा जा सकता है-

1.1.1. मात्रा के आधार पर

जिन स्वरों के उच्चारण में कम समय लगता है, उन्हें ह्रस्व स्वर कहते हैं और जिन स्वरों के उच्चारण में अधिक समय लगता है, उन्हें दीर्घ स्वर कहते हैं।[8]

ह्रस्व - अ, इ, उ

दीर्घ - आ, ए, ओ

1.1. 2. जीभ के भाग के आधार पर

अग्र, मध्य और पश्च-स्वर ध्वनियों के उच्चारण में जीभ का महत्वपूर्ण योगदान है। स्वरों के उच्चारण में मुख-विवर को विशेष प्रकार की आकृति देने में जीभ के मध्य और पश्च भाग महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। इन दोनों भागों को मिलाकर, इस मिले भाग को पुनः तीन भागों में बाँट सकते हैं-अग्र भाग, मध्य भाग और पश्च भाग। यह पुनर्विभाजित अग्र भाग जिन स्वरों के उच्चारण में काम करता है उन्हें अग्र स्वर, जिनमें मध्य भाग काम करता है उन्हें मध्य स्वर तथा जिनमें पश्च भाग काम करता है उन्हें पश्च स्वर कहते हैं।[9]

अग्र स्वर - इ, ए

मध्य स्वर - अ

पश्च स्वर - आ, उ, ओ

1.1. 3. हवा के मुख और नाक के रास्ते से निकलने के आधार पर

निरुनासिक और अनुनासिक-जिन स्वरों के उच्चारण में हवा केवल मुँह से निकलती है। निरुनासिक या मौखिक स्वरों के उच्चारण के समय कौआ ऊपर उठकर नासिका-विवर को बन्द कर देता है, अतः हवा नाक से नहीं निकलती है। अनुनासिक

स्वर उनको कहते हैं जिन स्वरों के उच्चारण कौआ ऊपर उठकर नासिका विवर के रास्ते को बन्द नहीं करता और रास्ता बन्द न होने से हवा का कुछ अंश मुख से तथा कुछ नाक से निकलता है।[10]

निरनुनासिक - अ, आ, इ, उ, ए, ओ

अनुनासिक - अँ, आँ, इँ, उँ, एँ, ओं

1.1. 4. जीभ के उठने के आधार पर

जब स्वर के उच्चारणार्थ मुख-विवर को विशेष रुप देने के लिए जीभ का सक्रिय भाग बिल्कुल नीचे रहता है तो मुख-विवर सर्वाधिक खुला रहता है, ऐसी स्थिति को विवृत कहते हैं। अर्ध विवृत में जीभ का भाग विवृत अवस्था की तुलना में कुछ ऊपर उठता है। अर्ध संवृत में जीभ का भाग अर्ध विवृत की तुलना में कुछ और ऊपर ऊठता है। संवृत स्थिति में जीभ का भाग काफी ऊपर चला जाता है।[11]

संवृत - इ, उ

अर्ध संवृत - ए, ओ

अर्ध विवृत - अ

विवृत - आ

1.1. 5. ओष्ठों की स्थिति के आधार पर

जिन स्वरों के उच्चारण में ओष्ठ वृत्ताकार या गोले हो जाएँ, उन्हें वृत्तामुखी कहते हैं और जिन स्वरों के उच्चारण में ओष्ठ वृत्ताकार नहीं होते, उन्हें अवृत्तामुखी स्वर कहते हैं।

वृत्तामुखी - उ, ओ

अवृत्तामुखी - अ, आ, इ, ए

इस प्रकार स्वर ध्वनियों को मुख्यतः पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है।

1. 2. स्वरों का ध्वन्यात्मक विवरण

स्वरों का ध्वन्यात्मक विवरण से तात्पर्य है-स्वरों का वर्गीकरण, उच्चारण तथा

शब्द में किस तरह से उनका प्रयोग होता है, उनका विवरण देना है। नीचे मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्वर ध्वनियों का विवरण तुलनात्मक रुप से दिया जा रहा है-

/अ/-यह अवृत्तमुखी, अर्ध विवृत, ह्रस्व स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का मध्य भाग कुछ ऊपर उठता है और अवृत्ताकार होंठ किंचित खुल जाते हैं। शब्दों में 'अ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	अलग	काजल	-
मा. ओ.	अचल	सबल	सागर
प. ओ.	अएन	बलद	निअ
छ.	असल	कपसा	-

'अ' ध्वनि का प्रयोग मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में शब्द के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थानों पर प्रयोग होता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में केवल आदि और मध्य में ही होता है। मा. ओ. में अंत्य 'अ' का उच्चारण होता है, जो वृत्ताकार है लेकिन छत्तीसगढ़ी में इसका उच्चारण पूर्व में संयुक्ताक्षर होने से ही होता है।

/आ/-यह अवृत्तमुखी, विवृत, दीर्घ, पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ नीचे रहती है तथा अवृत्ताकार होंठ फैल जाते हैं। शब्दों में 'आ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	आम	लात्	काला
मा. ओ.	आम्ब	काम	पाळा
प. ओ.	आयज्	दुआर्	नलिआ
छ.	आरा	काल्	चारा

'आ' स्वर का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों

स्थितियों में होता है। इन तीनों भाषाओं में हिन्दी के 'अ' का परिवर्तन 'आ' में हो जाता है, ऐसा परिवर्तन उस समय होता है जब द्वितीय अक्षर संयुक्ताक्षर हो।

/इ/-यह अवृत्तमुखी, संवृत, ह्रस्व, अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का अग्र भाग ऊपर उठता है तथा मांस-पेशियों में थोड़ी दृढ़ता रहती है। शब्दों में 'इ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	इसका	मिलना	-
मा. ओ.	इटा	माठिआ	रोहि
प. ओ.	इछेन्	माइपो	बिहेइ
छ.	इकट्	चिला	परइ

'इ' स्वर का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थितियों में होता है। 'अ' स्वर के साथ 'इ' युक्त होने से संध्यस्वर 'ऐ' हो जाती है-

मा. ओ.	अइराबत-ऐराबत
प. ओ.	पइसा-पैसा
छ.	कइसन-कैसन

/ई/-यह अवृत्तमुखी, संवृत्त, दीर्घ, अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का अग्र भाग काफी ऊपर उठ आता है और स्वर रेखा के समीप पहुँच जाता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में यह स्वर नहीं है। शब्दों में 'ई' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	ईमली	कबीर	कई
मा. ओ	-	-	-
प. ओ.	-	-	-
छ.	ईंटा	कीरा	तरी

/उ/-यह वृत्तमुखी, संवृत, ह्रस्व, पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का पश्च भाग ऊपर उठता है तथा होंठ वृत्ताकार रहता है। शब्दों में 'उ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	उसका	गुरू	पशु
मा. ओ.	उठ	केंउट	काछु
प. ओ.	उठान्	नेउल्	पुआल्
छ.	उधार्	खुर्	कोउ

'उ' स्वर का प्रयोग इन तीनों भाषा में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थितियों में होता है। इन भाषाओं में 'अ' के साथ 'उ' स्वर का संयोग होने से 'औ' संध्यस्वर बनता है।

/ऊ/-यह वृत्तमुखी, संवृत्त, दीर्घ, पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में भी जीभ का पिछला भाग काफी ऊपर उठकर स्वर रेखा के समीप पहुँच जाता है तथा ओंठ पूर्ण वृत्ताकार हो जाता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में यह स्वर नहीं है। 'ऊ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	ऊपर	धूप	बिकाऊ
मा. ओ.	-	-	-
प. ओ.	-	-	-
छ.	ऊना	टूरा	करू

/ए/-यह अवृत्तमुखी, अर्ध-संवृत, दीर्घ, अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में होंठ कुछ खुले रहते हैं तथा जीभ का अग्र भाग कुछ उठा रहता है। शब्दों में 'ए' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
हि.	एक	केला	उसके
प. ओ.	एक	नेता	केते
प. ओ.	एनता	केनता	एते
छ.	एति	केरा	परे

'ए' स्वर का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थितियों में होता है।

/ऐ/-यह अवृत्तमुखी, अर्ध-विवृत, अग्र स्वर है। हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में इस स्वर का प्रयोग होता है लेकिन मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'अइ' के रुप में उच्चरित होती है। जैसे-

	आ.	म.	अं.
हि.	ऐसा	कैसा	सनै
मा. ओ.	-	-	-
प. ओ.	-	-	-
छ.	ऐसन्	पैसा	कै

/ओ/-यह वृत्तमुखी, अर्ध-संवृत, दीर्घ, पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का पिछला भाग ऊपर उठता है और होंठ वृत्ताकार रहते हैं। शब्दों में 'ओ' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	ओठ	कोठा	-
प. ओ.	ओढ़ा	चोर	उसो
छ.	ओगर	कोर	चुरो

'ओ' स्वर का प्रयोग पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य में होता है, जबकि मानक ओड़िआ में केवल आदि और मध्य में ही होता है।

/औ/-यह वृत्तमुखी, अर्ध-विवृत, पश्च स्वर है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में इस ध्वनि का उच्चारण 'अउ' के रुप में होता है। जैसे-

	आ.	म.	अं.
हि.	औरत	कौन	
मा. ओ.	-	-	-
प. ओ.	-	-	-
छ.	औंसार	झौघा	सौ

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के अ, आ, इ, उ, ए और ओ आदि 6 ध्वनियों में उच्चारण की दृष्टि से समानता है। इन स्वरों का प्रयोग शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य स्थिति में होता है। केवल छत्तीसगढ़ी में 'अ' का प्रयोग शब्दांत में नहीं होता है तथा मानक ओड़िआ में 'ओ' का प्रयोग शब्दांत में नहीं होता है।

1. 3. अनुनासिक स्वर

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में सभी स्वरों के अनुनासिक रुप उपलब्ध होते हैं। अनुनासिक स्वर का उच्चारण स्थान निरनुनासिक स्वर के समान होता है, किंतु कोमलतालु और अलिजिह्वा के नीचे झुके होने के कारण फुसफुस् से आनेवाले वायु प्रवाह मुखरंध्र से भी बाहर निकलता है। स्वरों के अनुनासिकता के कारण शब्द भेद और अर्थ भेद दोनों होते हैं। इन तीनों भाषाओं के निरनुनासिक और स्वरों का अंतर प्रदर्शित करने के लिए स्वरों के दोनों रुपों के उदाहरण दिए जा रहे हैं-

	मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
	नि.	अ.	नि.	अ.	नि.	अ.
अ/अँ	निअ	निअँ	अटा	अँटा	अतर्	अँतर्
	(लेना)	(नींव)	(आटा)	(कमर)	(इत्र)	(अंतर)
आ/आँ	निआ	निआँ	आट्	आँट्	सास्	साँस्
	(लेना)	(आग)	(आठ)	(गाढ़ा)	(सास्)	(श्वास्)
इ/इँ	माइ	माइँ	माइ	माइँ	रोहि	रोहिं
	(मादा)	(मामी)	(मादा)	(मामी)	(रोयेगा)	(रोयेंगे)
उ/उँ	उइ	उँइ	उड़ा	उँड़ा	उच्	उँच्
	(दीमक)	(उगना)	(उड़ाना)	(उठाना)	(उठाना)	(ऊँचा)
ए/एँ	से	सें	जुए	जुएँ	फेटा	फेंटा
	(वो)	(आवाज)	(आग)	(दामाद)	(साफ)	(खूब मिलाना)
ओ/ओं	पोइ	पोइं	गोड़	गोंड़	ओठ्	ओंठ्
	(सब्जी)	(धूप सेंकना)	(पैर)	(एक जाति)	(होंठ)	(ऊँट)

इस प्रकार इन तीनों भाषाओं के स्वरों में अनुनासिकता पायी जाती है तथा अर्थ भेद स्पष्ट रुप से परिलक्षित होता है।

1. 4. स्वर-गुच्छ

स्वर गुच्छ एवं संध्यस्वर में अंतर होता है। जब दो स्वर मिलकर अक्षर का निर्माण करते हैं किंतु जब दो या अधिक स्वर पास-पास बीच में बिना किसी व्यंजन के उपस्थित होते हैं, तब उन्हें 'स्वर-गुच्छ' कहा जाता है। स्वर गुच्छ के स्वर स्पष्टतः पृथक-पृथक अक्षरों का निर्माण करते हैं। संस्कृत में दो स्वर समीप में अवस्थित नहीं होते। उनके समीप होने पर उनमें संधि का नियम घटित होता है। मध्यकालीन आर्यभाषा में यह नियम शिथिल हो गया, फलतः वहाँ अनेक स्वर गुच्छ दिखाई देते हैं। हिंदी में भी स्वर गुच्छ पर्याप्त संख्या में हैं। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के

स्वर गुच्छों को द्वि-स्वर गुच्छों, त्रि-स्वर गुच्छों और चतुस्वर-गुच्छों में विभक्त किया जा सकता है। इन स्वर गुच्छों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं-

1. 4.1. द्वि-स्वर गुच्छ

	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
अइ	बइठा	बइठा	धइल
अउ	चउरा	दउरा	नउ
अए	घएता	घएता	गए
आइ	जाइ	काइ	पराइ
आउ	काउ	झाउ	घराउ
आए	जाए	राएत	खाए
इअ	दिअ	निअ	पिअर
इआ	लिआ	खिआ	पिआ
उआ	कुआ	रुआ	बुआ
उइ	बुइ	उइल्	दुइ
उए	सुए	जुए	दुए
एउ	देउल	नेउल्	नेउरा
एओ	सेओ	सेओ	लेओना
ओआ	गोआला	गोआला	खोआ
ओइ	भोइ	कोइलि	कोइलि

1. 4. 2. त्रि-स्वर गुच्छ

इएइ	खिएइ	इएइ पिएइ	इअइ खिअइ
इआआ	निआअँणा	इआउ लिआउखड़ा	अइआ गँवइआ
उएइ	सुएइ	एइआ बुरेइआड़े	इआए खिआए

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में स्वर गुच्छ

पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं, लेकिन पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में स्वर गुच्छों का प्रयोग बहुत ज्यादा होता है, मानक ओड़िया में कभी-कभी इनका प्रयोग होता है।

1.4.3. स्वर संयोग स्थिति-तालिका (स्वर गुच्छ)

	अ	आ	इ	उ	ए	ओ
अ	x	x	√	√	√	x
आ	x	x	√	√	√	x
इ	√	√	x	x	x	x
उ	x	√	√	x	√	x
ए	x	x	x	√	x	x
ओ	x	√	√	x	x	x

2. व्यंजन

जिन ध्वनियों के उच्चारण के क्रम में मुख-विवर से वायु के निर्गमन में कहीं-न-कहीं अवरोध होता है, उन्हें 'व्यंजन' कहते हैं। मानक ओड़िआ[12], पश्चिमी ओड़िआ[13] और छत्तीसगढ़ी[14] में निम्नलिखित समानता है-

प् त् ट् च् क्

फ् थ् ठ् छ् ख्

ब् द् ड् ज् ग्

भ् ध् ढ् झ् घ्

म् न्

स् य् ह्

व् ल्

र्

उपरोक्त 28 व्यंजन ध्वनियों में समानता पाई जाती है। हिन्दी में प्रयुक्त व्यंजन

ध्वनियाँ निम्नलिखित हैं-

क्, ख्, ग्, घ्, ङ्

च्, छ्, ज्, झ्, ञ्

ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्

त्, थ्, द्, ध्, न्

प्, फ्, ब्, भ्, म्

य्, र्, ल्, व्

श्, स्, ष्, ह

2.1. व्यंजनों का वर्गीकरण

स्वरों की भाँति व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण भी प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में समान है। भोलानाथ तिवारी के अनुसार व्यंजनों के वर्गीकरण के चार आधार हैं[15]-

1. स्थान के आधार पर
2. प्रयत्न के आधार पर
3. प्राणत्व के आधार पर
4. घोषत्व के आधार पर

इन्हीं आधारों पर मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्यंजन ध्वनियों को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है-

2.1.1. स्थान के आधार पर

स्थान का अर्थ है-उच्चारण का स्थान। उच्चारण स्थान के आधार पर मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्यंजनों को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है-

ओष्ठ्य - प्, फ्, ब्, भ्, म्, व्

दंत्य - त्, थ्, द्, ध्, न्

वर्त्स - न्, र्, ल्, स्, ज्

तालव्य - च्, छ्, ज्, झ्

मूर्धन्य - ट् ठ्, ड्, ढ्

स्वरयंत्रमुखी - ह्

2.1. 2. प्रयत्न के आधार पर

प्रयत्न का अर्थ है, विशेष यत्न (प्र+यत्न)। व्यंजनों के उच्चारण में मुँह में किये गए यत्न को प्रयत्न कहते हैं। इस आधार पर तीनों भाषाओं के व्यंजनों को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है-

स्पर्श - क्, ख्, ग्, घ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्, थ्, द्, ध्, प्, फ्, ब्, भ्

संघर्षी - स्, ह्

स्पर्श संघर्षी- च्, छ्, ज्, झ्

नासिक्य - न्, म्

पार्श्विक - ल्

प्रकंपित - र्

अर्धस्वर - य्, व्

2.1. 3. प्राणत्व के आधार पर

'प्राण' का अर्थ है 'हवा'। कुछ ध्वनियों के उच्चारण में हवा की मात्रा कम होती है तो कुछ में अधिक। इस आधार पर व्यंजनों के निम्नलिखित भेद हैं-

अल्पप्राण - क्, ग्, च्, ज्, ट्, ड, त्, द्, प्, ब्

महाप्राण - ख्, घ्, छ्, झ्, ठ्, ढ, थ्, ध्, फ्, भ्

2.1. 4. घोषत्व के आधार पर

हमारे गले में दो झिल्लियाँ होती हैं, जो वायु के वेग से काँपकर बजने लगती हैं। इन्हें स्वरतंत्री कहते हैं। स्वर-तंत्रीयों में होने वाली कंपन के आधार पर व्यंजनों के दो भेद किए जाते हैं-

सघोष - ग्, घ्, ज्, झ्, ड्, ढ्, द्, ध्, न्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, स्, ह्

अघोष - क्, ख्, च्, छ्, ट्, ठ्, त्, थ्, प्, फ्, स्

इस प्रकार व्यंजन ध्वनियों को वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

2. 2. व्यंजनों का ध्वन्यात्मक विवरण

व्यंजनों का ध्वन्यात्मक विवरण से तात्पर्य है-व्यंजनों का वर्गीकरण, उच्चारण स्थान तथा शब्दों में किस तरह से उनका प्रयोग होता है, उनका विवरण देना है। मानक ओड़िआ में व्यंजन ध्वनियों का प्रयोग शब्दांत में नहीं होता है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्यंजन ध्वनियों का ध्वन्यात्मक विवरण तुलनात्मक रूप से निम्नलिखित है-

तालव्य

/**क्**/-यह कोमल तालव्य, अल्पप्राण, अघोष स्पर्श ध्वनि है। इसके उच्चारण में जीभ का पश्च भाग कोमलतालु को स्पर्श करता है। शब्दों में 'क्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	कपाल	सकल	-
प. ओ.	कलस्	चकर्	नाक्
छ.	कचार्	ढकना	सक्

/**ख्**/-यह कोमल तालव्य, महाप्राण, अघोष,स्पर्श ध्वनि है। इसके उच्चारण में जीभ का पश्च भाग कोमलतालु को स्पर्श करता है। शब्दों में 'ख्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	खजा	बखरा	-
प. ओ.	खलि	माखन्	पाख्
छ.	खर्	अखर	काँख्

/**ग्**/-यह कोमल तालव्य, अल्पप्राण, सघोष स्पर्श ध्वनि है। इसका उच्चारण 'क्'

समान होता है। शब्दों 'ग्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	गध	अलगा	-
प. ओ.	गजा	लुगा	बग्
छ.	गरू	ओगर	लाग्

/घ्/-यह कोमल तालव्य, महाप्राण, सघोष स्पर्श ध्वनि है। इसका उच्चारण 'ख्' के समान होता है। शब्दों में 'घ्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	घोड़ा	बाघुणि	-
प. ओ.	घर्	चघा	बाघ्
छ.	घाम्	चेघा	चघ्

प्रतिवेष्टित

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के प्रतिवेष्टित व्यंजनों में ट्, ठ्, ड्, ढ् आते हैं। इनका उच्चारण जिह्वानोक को मोड़कर तालवग्र का स्पर्श किया जाता है।

/ट्/-यह अल्पप्राण, अघोष, प्रतिवेष्टित स्पर्श ध्वनि है। शब्दों 'ट्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	टगर	मटर	-
प. ओ.	टाको	कटा	नाट्
छ.	टुक्	पाटा	काट्

/ठ्/-यह अल्पप्राण, अघोष, प्रतिवेष्टित स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'ठ्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	ठक	काठुरिआ	-
प. ओ.	ठेल्	गुठलि	पाठ्
छ.	ठेस्	कठवा	गाँठ्

/ड्/-यह अल्पप्राण, सघोष, प्रतिवेष्टित स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'ड्' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	डेणा	अंडा	-
प. ओ.	डाहार	पडा	मुड्
छ.	डहर	आंडा	संड्

/ढ्/-यह अल्पप्राण, सघोष, प्रतिवेष्टित स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'ढ्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	ढमणा	-	-
प. ओ.	ढुलिआ	-	-
छ.	ढरका	-	-

दंत्य

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्पर्श व्यंजनों में त्, थ्, द्, ध् आते हैं। इसके उच्चारण में जिह्वा की नोक दाँतों के पिछले भाग को छूती है।

/त्/-यह अल्पप्राण, अघोष, दंत्य स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'त्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	तोर	पाताल	-
प. ओ.	तमर्	सतर	लात्

छ.	ताल्	नाता	भात्

/थ्/-यह अल्पप्राण, अघोष, दंत्य स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'थ्' व्यंजन का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	थय	कथा	-
प. ओ.	थालि	पथर्	रथ्
छ.	थापड़	पथरा	गाँथ्

/द्/-यह अल्पप्राण, सघोष, दंत्य स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'द्' व्यंजन का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	दालि	बादल्	-
प. ओ.	दाएल्	कादो	लद्
छ.	दार्	खदर्	कद्

/ध्/-यह अल्पप्राण, सघोष, दंत्य स्पर्श ध्वनि है। शब्दों में 'ध्' व्यंजन का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	धला	साधु	-
प. ओ.	धान्	गधरा	बध्
छ.	धउँरा	खिंधोल	बाँध्

द्वयोष्ठय

मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के द्वयोष्ठय स्पर्शों में प्, फ्, ब्, भ् आते हैं। इनके उच्चारण में दोनों होंठ मिल जाते हैं।

/प्/-यह अल्पप्राण, अघोष ओष्ठ्य स्पर्श व्यंजन है। शब्दों में 'प्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	पाणि	कपाळ	-
प. ओ.	पाएन्	कपाल्	खराप्
छ.	पानि	कापार्	खाप्

/फ्/-यह महाप्राण, अघोष, ओष्ठय स्पर्श व्यंजन है। शब्दों में 'फ्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	फल	सफल	-
प. ओ.	फुल्	सफा	कफ्
छ.	फर्	बफौरी	कफ्

/ब्/-यह अल्पप्राण, सघोष, ओष्ठय स्पर्श व्यंजन है। शब्दों में 'ब्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	बण	कुबेर	-
प. ओ.	बल्	कबार्	गरब्
छ.	बक्	सबो	हब्

'ब्' व्यंजन का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थितियों में होता है।

/भ्/- यह महाप्राण, सघोष, ओष्ठय स्पर्श व्यंजन है। शब्दों में 'भ्' ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	भात	गभा	-
प. ओ.	भल्	लुभरा	जीभ्
छ.	भरम्	चुभुक्	गरभ्

स्पर्श संघर्षी

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्पर्श संघर्षी व्यंजनों में च्, छ्, ज्, झ् आते हैं। इनका उच्चारण स्पर्श के समान होता है, पर यह स्पर्श संघर्ष के साथ उन्मोचित होता है। इन भाषाओं में ये तालव्य ध्वनियाँ हैं।

/च्/-यह अल्पप्राण, अघोष, तालव्य स्पर्श संघर्षी है। शब्दों में 'च्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	चमार	नाचिब	-
प. ओ.	चमड़ा	कुचिया	काच्
छ.	चरूहा	कचार्	साँच्

/छ्/-यह महाप्राण, अघोष, तालव्य, स्पर्श संघर्षी है। शब्दों में 'छ्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	छता	बाछुरि	-
प. ओ.	छात्	माछि	माछ्
छ.	छक्	बोछरा	कांछ्

/ज्/-यह अल्पप्राण, सघोष, तालव्य, स्पर्श संघर्षी है। शब्दों में 'ज्' व्यंजन का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	जमि	गजा	-
प. ओ.	जागा	खजा	बाज्
छ.	जोर्	सजा	आज्

/झ्/-यह महाप्राण, सघोष, तालव्य, स्पर्श संघर्षी है। शब्दों में 'झ्' ध्वनि का प्रयोग इस तरह से होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	झरणा	मझिआँ	-
प. ओ.	झमेला	सिझा	अरझ्
छ.	झूल	अरझा	रीझ्

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के 'ध्य' ध्वनि से 'ज्' का विकास हुआ है। 'झ्' ध्वनि प्राचीन आर्यभाषा में अप्रधान ध्वनि थी, मध्यकाल में आर्यभाषा के प्रभाव से प्रधानता पाई।[16]

नासिक्य

मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में न्, म् नासिक्य व्यंजन हैं। इनके उच्चारण में वायु नाक से निकलती है।

/न्/-यह अल्पप्राण, सघोष, वर्त्स, नासिक्य व्यंजन है। शब्दों में 'न' का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	नाक	कानन	-
प. ओ.	नलिआ	हेनता	मन्
छ.	नाच्	खिनवा	थन्

/म्/-यह अल्पप्राण, सघोष, द्वयोष्ठय, नासिक्य व्यंजन है। शब्दों में 'म्' का प्रयोग इस प्रकार होता है--

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	मास	आमर	-
प. ओ.	मोर्	दामुर्	दाम्
छ.	माछि	सामर्	लाम्

पार्श्विक

इसके उच्चारण में वायु प्रवाह जीभ के किनारों को छूकर निकलती है।

/ल्/-यह अल्पप्राण, सघोष, वत्स, पार्श्विक व्यंजन है। शब्दों में 'ल्' व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	लुहा	कलम	-
प. ओ.	लाल्	कलरा	साल्
छ.	लामा	पलो	काल्

लोड़ित

इसके उच्चारण में जीभ वर्त्स के समीप पहुँच जाती है तथा वायु प्रवाह से स्पंदन होता है।

/र्/-यह अल्पप्राण, घोष, वर्त्स, लुंठित व्यंजन है। शब्दों में इसका प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	रज	सरस	-
प. ओ.	राजा	करत्	टार्
छ.	रात्	खरसि	पार्

संघर्षी

इनके उच्चारमण में दो उच्चारणायव परस्पर इतने समीप आ जाते हैं कि उनके मध्य निकलनेवाली वायु में घर्षण होता है।

/स्/-यह अघोष, वर्त्स-संघर्षी व्यंजन है। शब्दों में इसका प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	साग	मुसा	-
प. ओ.	सत्	सुरसो	आकास्
छ.	सास्	उसल्	ठेंस्

/ह्/-यह सघोष, काकल्य, संघर्षी व्यंजन है। शब्दों इसका प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	हाट	काहाणि	-
प. ओ.	हल्	चाहानि	रह्
छ.	हमर्	सहर	दह्

अर्धस्वर

इसके उच्चारण में दोनों ओंठ परस्पर मिले रहते हैं और उन दोनों के मध्य कुछ भाग खुला रहता है तथा जीभ का पिछला भाग कोमलतालु की ओर उन्मुख रहता है।

/य्/-यह अल्पप्राण, सघोष, ओष्ठ्य, अर्धस्वर व्यंजन है। शब्दों में इस व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	हाय	गायक	-
प. ओ.	गाय	गायक	राय्
छ.	येला	अपखया	गाय्

/व्/-यह अल्पप्राण, सघोष, ओष्ठ्य अर्धस्वर है। शब्दों में इस व्यंजन का प्रयोग इस प्रकार होता है-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	-	हवा	-
प. ओ.	-	हवा	-
छ.	वोमा	खेवन्	आव्

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /व्/ व्यंजन का प्रयोग संयुक्ताक्षरों के साथ होता है।

उत्क्षिप्त

इनके उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ एक दूसरे के निकट आ जाती हैं और भीतर से आती हवा उनमें कंपन पैदा करती हुई उनके बीच से निकलती है। जीभ ऊपर उठकर पूर्व कठोरतालु के पास जाकर झटके से नीचे आती है। हवा की मात्रा कम होती है। यह ध्वनियां 'ड' और 'ढ' के संस्वन हैं।

/ड़/-यह अल्पप्राण, सघोष, उत्क्षिप्त, मूर्धन्य ध्वनि है। यह ध्वनि केवल शब्द के आदि और मध्य में ही प्रयुक्त होती है। जैसे-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	-	बाड़ि	माड़
प. ओ.	-	गाड़ि	माड़
छ.	-	काड़ि	गाड़

/ढ़/-यह महाप्राण, सघोष, उत्क्षिप्त, मूर्धन्य ध्वनि है। यह ध्वनि भी केवल शब्द के मध्य और अंत्य में ही प्रयुक्त होती है। जैसे-

	आ.	म.	अं.
मा. ओ.	-	गढ़ा	गढ़
प. ओ.	-	गढ़ा	गढ़
छ.	-	माढ़ा	गाढ़

उत्क्षिप्त ध्वनि /ड़/ और /ढ़/ का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में शब्द के आरंभ में प्रयुक्त नहीं होती हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में क्, ख्, ग्, घ्, च्, छ्, ज्, झ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्, थ्, द्, ध्, न्, प्, फ्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, स्, ह, ड़ और ढ़ आदि व्यंजनों का प्रयोग होता है तथा शब्दों के आदि, मध्य और अंत्य तीनों स्थितियों में व्यवहृत होती हैं, केवल मानक ओड़िआ में व्यंजनों का प्रयोग शब्दांत में नहीं होता है।

2. 3. व्यंजन संयोग

एक से अधिक व्यंजन-संयोग को व्यंजन संयोग कहते हैं। व्यंजन संयोग अपने वर्गीय व्यंजनों के साथ भी हो सकता है और भिन्न वर्गीय व्यंजनों के साथ भी। दूसरे एक रूप व्यंजन संयोग तथा भिन्न रूप व्यंजन संयोग भी मिलते हैं। इस प्रकार व्यंजन संयोग के चार प्रकार हुए।[17]

1. वर्गीय व्यंजन संयोग
2. भिन्न वर्गीय व्यंजन संयोग
3. एक रुप व्यंजन संयोग
4. भिन्न रुप व्यंजन संयोग

शब्दांर्गत व्यंजन संयोग के स्थान के दृष्टि से इन्हें तीन वर्गों में रखा जा सकता है-

1. आदि व्यंजन संयोग
2. मध्य व्यंजन संयोग
3. अंत्य व्यंजन संयोग

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लगभग द्वि-व्यंजनात्मक संयोग ही मिलते हैं तथा आदि व्यंजन-संयोग का नितांत अभाव है। प्राप्त सामग्री के आधार पर इन भाषाओं के व्यंजन संयोग निम्नलिखित है-

	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
क् क्	पक्का	पक्का	धाक्का
क् ख्	दुक्ख	दक्खिन्	दक्खिन्
क् त्	भक्त	भक्ति	सक्ति
क् स्	बाक्स	बक्सा	बक्सा
ख् त्	तख्ता	तख्ता	तख्ता
ग् ग्	बग्ग	बग्ग	बग्ग

च् च्	कंच्चा	लुच्चा	केंच्चा
ज् ज्	उज्जल	उज्जर	उज्जर
ट् ट्	भट्टा	खट्टा	साट्टा
ट् ठ्	मिट्ठा	सिट्ठा	सिट्ठा
त् त्	उत्तर	पत्ता	पात्ता
द् द्	गद्दा	गद्दा	गद्दा
प् प्	खप्पर	खप्पर	अप्पन
प् त्	सप्ताह	हप्ता	हाप्ता
प् ट्	चेप्टा	चेप्टा	चेप्टा
ब् ब्	डब्बा	डब्बा	अब्बर

2. 3.1. अनुनासिक व्यंजन और अन्य व्यंजन संयोग

न् ट्	कन्टोप	कन्टोप	कन्टोप
न् ठ्	कन्ठि	कन्ठि	कन्ठि
न् ड्	पन्डा	पन्डा	पान्डा
न् ढ्	ठन्ढा	ठन्ढा	ठान्ढा
न् च्	पन्चायत	पन्चायत	पन्चायत
न् ज्	पन्जा	पन्जा	पान्जा
न् ख्	पन्खा	पन्खा	पान्खा
न् त्	तन्ति	छन्ति	छन्ति
न् द्	सुन्दर	कन्दा	कान्दा
न् ध्	गन्धक	गन्धक	गन्धक
न् स्	कन्स	कन्स	कन्स
म् छ्	गाम्छा	गम्छा	गम्छा
म् प्	चम्पा	चम्पा	चाम्पा
म् भ्	दम्भ	खम्भा	खाम्भा

2. 3. 1.1. अनुनासिक और अनुनासिक व्यंजन संयोग

न् न्	अन्न	रन्न	भन्न

2. 3.1. लुंठित और अन्य व्यंजन संयोग

र् क्	कर्कट	मर्कट	मर्कट
र् ख्	गुर्खा	चर्खा	चार्खा
र् ग्	बर्ग	सर्ग	मुर्गा
र् च्	खर्चा	मिर्चा	मिर्चा
र् छ्	बर्छा	बर्छा	बार्छा
र् ज्	फर्जि	दर्जि	मर्जि
र् त्	कुर्ता	सुर्ता	सुर्ता
र् द्	जर्दा	पर्दा	पार्दा
र् म्	कर्म	कर्मा	कार्मा
र् प्	सर्प	खर्पा	खुर्पा
र् स्	बर्सा	बर्सा	गोर्सी

2. 3. 3. पार्श्विक और अन्य व्यंजन

ल् ग्	फाल्गुन	अल्गा	भोल्गा
ल् थ्	पाल्थि	पाल्थि	पोल्थि
ल् द्	मल्दुआ	जल्दि	जल्दि
ल् ट्	ओल्टा	उल्टा	उल्टा
ल् म्	डाल्मा	डाल्मा	पहल्मान
ल् प्	कल्पना	कल्पना	काल्पना
ल् ह्	ओल्हा	चुल्हा	दुल्हा

2. 3. 4. ऊष्म और अन्य व्यंजन

स् क्	परिस्कार	इस्कुल	अस्कट

स् ट्	स्टाम	इस्टाम	इस्टाम
स् त्	बस्ता	सस्ता	सास्ता
स् प्	इस्पात	इस्पात	इस्पात
स् म्	चस्मा	चस्मा	चास्मा

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में मध्यस्थित के विशुद्ध व्यजंन गुच्छ नहीं मिलते हैं। व्यंजन संयोग और व्यंजनानुक्रम में अंतर है। व्यंजन गुच्छ की विशेषता यह है कि एक अक्षर के साथ उसका पूरा भाग उच्चरित होता है, जबकि व्यंजनानुक्रम में दो व्यंजन लिखित रुप में एक साथ रहते हुए भी एक व्यंजन पूर्ववर्ती अक्षर के साथ चला जाता है तथा दूसरा व्यंजन परवर्ती अक्षर के साथ आ मिलता है। इस प्रकार विशुद्ध व्यंजनगुच्छ केवल आदि और अंत्य व्यंजन संयोग में ही उपलब्ध होते हैं। ऊपर दिए गए उदाहरणों में से स्पष्ट है कि इन तीनों भाषाओं में द्वि-व्यंजनात्मक संयोग (एक ही व्यंजन) का प्रयोग बहुत ही कम है तथा अन्य व्यंजनों के साथ अधिक है।

2. 3. ध्वनि परिवर्तन

भाषा परिवर्तनशील है। भाषा प्रवाह में ध्वनि परिवर्तन होना स्वाभाविक है। किसी भी भाषा में ध्वनि परिवर्तन उच्चारण की सुविधा, बोलने में शीघ्रता, बलाघात, विदेशी ध्वनियों का अपने भाषा में अभाव आदि कारणों से होता है। अतः उच्चारण अवयवों द्वारा उच्चरित ध्वनियों में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। कहीं कुछ ध्वनियों का लोप हो गया और कहीं आगम। कहीं कुछ ध्वनियाँ किसी रूप में परिवर्तित हो गई तो कुछ दूसरी ध्वनि दूसरे रुप में। अनेक स्थानों पर ह्रस्व ध्वनियाँ दीर्घ हो गईं तो कुछ स्थानों पर दीर्घ धनियाँ ह्रस्व हो गईं। घोष अघोष हो गए, अघोष घोष। इसे ध्वनि परिवर्तन कहते हैं।

आधुनिक भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा का सूक्ष्म तथा विस्तृत अध्ययन कर ध्वनि विकास की अनेक दिशाएँ इंगित की हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं[18]

1. आगम 6. मात्रा भेद 11. ऊष्मीकरण

2. लोप	7. घोषीकरण	12. अनुनासिकरण
3. विपर्यय	8. अघोषीकरण	13. संधि
4. समीकरण	9. महाप्राणीकरण	14. भ्रामक व्युत्पत्ति
5. विषमीकरण	10. अल्पप्राणीकरण	15. विशेष परिवर्तन

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में प्रमुख ध्वनि परिवर्तन के दिशाओं का विवेचन किया जा रहा है-

आगम

शब्दों में किसी नई ध्वनि का आकर जुड़ जाना आगम कहलाता है। यह आगम स्वर और व्यंजन दोनों में होता है-

स्वरागम

स्त्री-इस्त्री-इस्त्री-इस्त्री

स्कूल-इस्कूल-इस्कूल-इस्कूल

स्नान-असनान-असनान-असनान

इन उदाहरणों में 'इ', 'उ' आदि स्वरों का आगम हुआ है।

व्यंजनागम

जेल-जेहल-जहल-जहल

ओष्ठ-ओठ-ओठ्-ओंठ्

इन उदाहरणों में 'ह' आदि व्यंजनों का आगम हुआ है।

लोप

शब्द में किसी ध्वनि का लुप्त हो जाना लोप कहलाता है-

कपड़ा-कप्ड़ा-कप्ड़ा-कप्ड़ा

स्थापना-थापना-थापना-थापना

इन उदाहरणों में 'प्', 'स्' आदि व्यंजनों का लोप हुआ है।

विपर्यय

इसमें किसी शब्द के स्वर-व्यंजन या अक्षर एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं और दूसरे स्थान के पहले स्थान पर आ जाते हैं-

पागल-पगला-पगला-पगला

लज्जा-लाज-लाज्-लाज्

ब्राह्मण-बाम्हन-बाम्हन-बाम्हन

समीकरण

इसमें एक ध्वनि दूसरी ध्वनि को प्रभावित कर अपना रूप देती है-

चक्र-चक चक चक

जुल्म- जुलुम जुलुम जुलुम

विषमीकरण

इसमें दो एक समान ध्वनियों से एक ध्वनि किसी समान ध्वनि के प्रभाव से अपना स्वरुप छोड़कर दूसरी बन जाती है-

मुकुट-मउर मउर मउर

तिलक - टिकलि टिकलि टिकलि

मात्रा भेद

इसमें स्वर कभी ह्रस्व से दीर्घ और कभी दीर्घ से ह्रस्व हो जाते हैं-

ह्रस्वीकरण

आलाप-अलाप अलाप अलाप

दीर्घीकरण

अद्य-आजि आज् आज्

हस्त-हाथ हाथ हाथ

घोषीकरण

इसमें अघोष ध्वनियाँ घोष हो जाती हैं-

पाक-पाग पाग पाग

बक-बग बग बग

घटिका-घड़ि घड़ि घड़ि

अघोषीकरण

इसमें घोष ध्वनियाँ अघोष हो जाती हैं-

छाद-छात छात् छात्

महाप्राणीकरण

कभी-कभी अल्पप्राण ध्वनियाँ महाप्राण हो जाती हैं-

गृह-घर घर् घर्

हस्त-हाथ हाथ हाथ

अल्पप्राणीकरण

कभी कभी महाप्राण ध्वनियाँ अल्पप्राण हो जाती हैं-

अस्तान-आस्तान आस्तान आस्तान

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के ध्वनियों में परिवर्तन होता है।

2. 4. व्यतिरेकी पक्ष

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के ध्वनियों में कुछ उच्चारणगत समानता है तो कुछ असमानता। पिछले पृष्ठों में मैंने समानताओं का विवेचन किया है, अब इन भाषाओं के ध्वनियों में पाई जाने वाली व्यतिरेकी पक्ष पर विचार किया जायेगा।

/अ/

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में उच्चारण के स्तर पर 'अ' ध्वनि में असमानता है। पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में शब्दांत 'अ' का लोप हो जाता है, हिन्दी की भाँति। जबकि मानक ओड़िआ में 'अ' का लोप नहीं होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
घर	घर	घर्	घर्
काम	काम	काम्	काम्
भात	भात	भात्	भात्

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि मानक ओड़िया में 'अ' का उच्चारण विवृत होता है, जो अंग्रेजी के (not के o) से साम्य रखता है।[19] इसके अलावा मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में शब्दों के मध्य में प्रयुक्त 'अ' ध्वनि छत्तीसगढ़ी में 'आ' हो जाती है-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
पथर	पथर्	पाथरा
जड़ा	जड़ा	जाड़ा
गरा	गरा	गारा

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'अ' ध्वनि के एक ही रुप है, जबकि छत्तीसगढ़ी में इसके तीन संस्वन हैं।[20]

/अ/

अति ह्रस्व

करअथे-कर रहा है

करथे-करता है

थोड़ा विलंवित

चलअ-चलो

चल्-चल्

विलंवित

समअझथँ-समझता हूँ

समझअथँअ-समझा रहा हूँ

/आ/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के आदि और मध्य में प्रयुक्त 'आ' ध्वनि छत्तीसगढ़ी में 'अ' हो जाती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
चाचा	काका	काका	कका
आकार	आकार	आकार्	अकार्
आकास	आकास	आकास्	अकास्

/ऑ/

हिन्दी में प्रयुक्त इस स्वर ध्वनि का प्रयोग मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं है। हिन्दी में इस ध्वनि का प्रयोग इस प्रकार होता है-

डॉक्टर, कॉलेज, मॉडल आदि।

/इ/ और /ई/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'ई' ध्वनि का उच्चारण 'इ' के रूप में होती है, जबकि छत्तीसगढ़ी में इन ध्वनियों का प्रचलन है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मक्खी	माछि	माछि	माछी
मुनी	मुनि	मुनि	मुनी
पगड़ी	पगड़ि	पगड़ि	पगड़ी

इसके अलावा मानक ओड़िआ के शब्दांत 'इ' पश्चिमी ओड़िआ में शब्द के मध्य में 'ए' हो जाती है, जबकि छत्तीसगढ़ी में यथावत रहती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
पानी	पाणि	पाएन्	पानि
आँख	आखि	आँएख्	आँखि
रात	राति	राएत्	रात

हिन्दी 'इ' का छत्तीसगढ़ी में 'अ' तथा 'आ' भी हो जाती है-

कितना-कतका

जितना-जतका

इमली-अमली

/उ/ और /ऊ/

'उ' और 'ऊ' ध्वनि का उच्चारण मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में ह्रस्व रूप में होता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में इनका उच्चारण ह्रस्व और दीर्घ के रूप में होती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
ऊन	उन	उन्	ऊन्
दूर	दुर	दुर्	दूर्
भालू	भालु	भालु	भालू

कभी-कभी पश्चिमी ओड़िआ के शब्दों में प्रयुक्त 'उ' ध्वनि का मानक ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में 'ओ' हो जाती है-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
कोइलि	कुइलि	कोइली
गोलि	गुलि	गोलि
खोपा	खुपा	खोपा

/ऋ/

इस ध्वनि का उच्चारण इन तीनों भाषाओं में 'रु' के रूप में होती है तथा छत्तीसगढ़ी में कभी-कभी हिन्दी की भाँति 'रि' के रूप में होती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
ऋतु	रुतु	रुतु	रुतु/रितु
ऋण	रुण	रुण	रुण/रिण

ऋषि	रुसि	रुसि	रुसि/रिसि

/ऐ/ और /औ/

इन दोनों स्वरों को संध्य स्वर कहते हैं। इनका उच्चारण 'अइ' और 'अउ' के रूप में होती है।[21]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
चैत	चइत	चइत्	चइत्
कैदी	कइदि	कइदि	कइदी
नौकर	नउकर	नउकर्	नउकर्
दौलत	दउलत	दउलत्	दउलत्

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्वर ध्वनियों में उच्चारणगत असमानता पाई जाती है।

व्यंजन

नासिक्य व्यंजन-/ण्/

छत्तीसगढ़ी में 'ण्' ध्वनि का प्रयोग नहीं। 'ण्' ध्वनि 'न' में परिवर्तित हो जाती है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में इस ध्वनि का प्रचलन है, किंतु यह ध्वनि केवल शब्द के मध्य में और अंत्य में ही आती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
रामायण	रामायण	रामायण्	रामायन्
कारण	कारण	कारण्	कारन्
मरण	मरण	मरण्	मरन्
कँणवा	कँणा	कँणा	काना

अर्ध स्वर-/य्/ और /व्/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'य्' और 'व्' का प्रयोग शब्द के मध्य में ही होती है। जबकि छत्तीसगढ़ी में इस ध्वनि का प्रयोग शब्द के आदि में भी होती है।

इसके अतिरिक्त मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'य' और 'व' क्रमशः 'इ' और 'आ' में परिवर्तित हो जाती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
गाय	गाइ	गाइ	गाय
गाँव	गाँ	गाँ	गाँव

इसके अलावा 'य' के पूर्व 'इ' होने पर तथा 'व' के पूर्व 'उ' स्वर होने पर छत्तीसगढ़ी में 'अ' युक्त प्रयोग होता है-

प्यास-पिआस

पार्श्विक- /ल्/

मानक ओड़िआ में 'ल्' ध्वनि के दो रूप हैं-एक पूर्ण और दूसरा अपूर्ण। 'ल्' ध्वनि और यह ध्वनि वैदिक काल में प्रयुक्त होती थी, किंतु इसका उच्चारण के संबंध में संदेह है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में (बंगला, ओड़िया, मराठी) में यह 'ल्ह' की तरह प्रयुक्त होती है।[22] लेकिन मानक ओड़िआ में इसका उच्चारण स्पष्ट है, किन्तु पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में 'ल्' के एक ही रुप है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
दल्	दल	दल्	दल्
फल्	फल	फल्	फल्
बेल्	बेल	बेल्	बेल्

'ल् ' ध्वनि का प्रयोग शब्दांरभ में नहीं होता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के 'ल्' छत्तीसगढ़ी में 'र्' हो जाती है-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
छेलि	छेल्	छेरि
थालि	थाएल्	थारि

दालि दाएल् दार्

'ल्' का प्रयोग मानक ओड़िआ में केवल शब्द के आदि में ही प्रयोग होता है।

लुंठित-/र्/

छत्तीसगढ़ी में 'र्' ध्वनि का परिवर्तन मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के 'ड़' के में रूप होती है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
झगड़ा	झगड़ा	झगड़ा	झागरा
पारा	पड़ा	पड़ा	पारा
गुड़	गुड़	गुड़	गुर्

/श्/ और **/ष्/**

हिन्दी में 'श्' और 'ष्' का उच्चारण स्वतंत्र रूप से होता है, जबकि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में 'स्' के रूप में होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
शत्रु	सत्रु	सत्रु	सत्रु
शंकर	संकर	संकर	संकर
शरीर	सरीर	सरीर	सरीर
षट्	सट	सट्	सट्
कष्ट	कस्ट	कस्ट	कस्ट

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्यंजन ध्वनियों में उच्चारणगत तथा प्रयोगगत भिन्नताएँ पाई जाती हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में अ, आ, इ, उ, ए और ओ स्वर ध्वनियों में समानता है। हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में 'ई', 'ऊ' का भी प्रचलन है। हिन्दी में 'ऑ' स्वर का प्रयोग होता है। इन भाषाओं में 'ऐ' और 'औ' संध्यस्वर हैं। इनका उच्चारण क्रमशः 'अइ' और 'अउ' के रूप में होता है। 'ऋ' का उच्चारण इन भाषाओं में 'रु' के रुप में होता है। मानक ओड़िआ में शब्दांत 'अ' का उच्चारण होता है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं होता है। छत्तीसगढ़ी में 'अ' स्वन के तीन संस्वन भी हैं। मानक ओड़िया और पश्चिमी ओड़िया में दीर्घ 'ई' और 'ऊ' का उच्चारण 'इ और 'उ' के रूप में होता है। मानक ओड़िआ में अनुनासिकता तथा स्वर गुच्छों का प्रचलन कम है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इनका प्रचलन खूब है। इन भाषाओं में व्यंजन ध्वनियों के उच्चारण तथा प्रयोग में लगभग समानता है। छत्तीसगढ़ी में 'ण' ध्वनि नहीं है तथा इसके स्थान पर 'न' का प्रयाग होता है। मानक ओड़िआ में 'ल्' के दो रुप हैं-'ल्' और 'ल्' जो ड्डि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं है। 'ल्' ध्वनि छत्तीसगढ़ी में 'र्' हो जाता है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में 'श्' और 'ष्' का उच्चारण 'स्' के रूप में होता है, जबकि हिन्दी में तीनों ध्वनियों का उच्चारण स्वतंत्र रूप से होता है। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्वर-व्यंजन ध्वनियों के उच्चारण तथा प्रयोग के धरातल पर कुछ समानताएँ हैं तो कुछ असमानताएँ । अगले अध्याय में इन भाषाओं के नामिक संवर्गों का अध्ययन किया जाएगा।

संदर्भ

1. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण-पृ. सं.-11

2. धल, गोलक बिहारी-ध्वनि विज्ञान-पृ. सं.-65

3. मैकडानल, आर्थर एन्थोनी-वैदिक व्याकरण-पृ. सं.-2-3
   (अनुवादक-मोतीलाल बनारसीदास)

4. महापात्र, विजयप्रसाद-ओड़िआ भाषा विभव-पृ. सं.-92-93

5. पाणिग्राही, नीलमाधव और त्रिपाठी, प्रफुल्ल-समलपुरि कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-48

6. शेष, शंकर-छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन-पृ. सं.-67

7. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी भाषा-पृ. सं.-100

8. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण-पृ. सं.-17-18

9. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण-पृ. सं.-24

10. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण-पृ. सं.-21

11. महापात्र, विजयप्रसाद-ओड़िया भाषा विभव-पृ. सं.-93-94

12. पाणिग्राही, नीलमाधव और त्रिपाठी, प्रफुल्ल-समलपुरि कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-4

13. शेष, शंकर-छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन-पृ. सं.-67

14. तिवारी, भोलानाथ-हिन्दी भाषा-पृ. सं.-102

15. तिवारी, उदयनारायण-हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास-पृ. सं.-374

16. ओझा, त्रिभुवन-प्रमुख बिहारी बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन-पृ. सं.-41

17. शर्मा, राजमणि-आधुनिक भाषा विज्ञान-पृ. सं.-250

18. ग्रियर्सन, जर्ज अब्रहम-भारत का भाषा सर्वेक्षण-भाग-5-पृ. सं.-
   (अनुवादक-उदयनारायण तिवारी)

19. मलहोत्रा, रमेशचंद्र-मानक छत्तीसगढ़ी व्याकरण-पृ. सं.-8

20. महान्ति, पंचानन-ओड़िया भाषावैज्ञानिक चर्चार नूतन दिंगत-पृ. सं.-101

21. बिम्स, जॉन-आधुनिक भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन-पृ. सं.-245

तृतीय अध्याय

नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष और कारक)

प्रथम अध्याय में मैंने व्याकरणिक संवर्गों का स्वरूप, भाषा में व्याकरणिक संवर्गों का महत्व तथा प्रकारों पर प्रकाश डाला है। प्रस्तुत अध्याय में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के नामिक संवर्गों का विश्लेषण किया जाएगा।

व्याकरणिक संवर्गों पर भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने अपने ग्रंथों में विस्तार से चर्चा की है। व्याकरणिक संवर्ग के लिए अंग्रेजी में 'Grammatical Categories' शब्द प्रचलित है। अरस्तू ने अपने व्याकरण में 'Categoes' शब्द का प्रयोग किया है। 'Categoes' का अर्थ वर्ग या संवर्ग, जो व्याकरणिक तत्वों से संबंधित तत्वों से संबंधित है। 'कोटि' का संबंध भी संवर्ग से है। अतः व्याकरण के संवर्ग ही 'व्याकरणिक कोटियाँ' हैं।[1] भाषा में व्याकरणिक संवर्गों का महत्वपूर्ण स्थान है। भाषा में कुल सात व्याकरणिक कोटियों की सत्ता मानी जाती है, जिनमें से तीन का संबंध मूलरुप से संज्ञा से है और चार का क्रियाओं से।[2]

संज्ञा से संबद्ध-लिंग (gender), वचन (number), पुरुष (person) और कारक(case)

क्रिया से संबद्ध : वाच्य (voice), पक्ष (aspect), वृत्ति (mood) और काल (tense)

इन दोनों वर्गों को नामिक संवर्ग (संज्ञा से संबद्ध) और क्रियापरक संवर्ग (क्रिया से संबद्ध) नाम से अभिहित किया जा सकता है।[3] प्रस्तुत अध्याय में नामिक संवर्गों (लिंग, वचन, पुरुष और कारक) का विश्लेषण किया जाएगा। सर्वप्रथम मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के 'वचन व्यवस्था' पर विचार करेंगे।

1. वचन

वचन एक व्याकरणिक संवर्ग है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के जिस रूप से संख्या का बोध होता है, उसे 'वचन' कहते हैं। भाषा में वचन का अभिप्राय है भाषा में व्यवहृत वस्तु या पदार्थ द्योतक शब्द की संख्या का बोध। यहाँ हिन्दी के कुछ

उदाहरण दिये जा रहे हैं-

गणनीय		अगणनीय	
एकल	अनेक	एकल	अनेक
सूर्य, चन्द्र	मनुष्य, कुत्ता	पानी, दूध	चीनी, गेहूँ

इस प्रकार गणना के आधार पर वस्तु या पदार्थ के द्योतक शब्दों में वचन का प्रादुर्भाव हुआ होगा। किन्तु इतना निश्चित है कि वस्तुगत संख्या की अपेक्षा वचन की सीमा अत्यधिक संकुचित है, क्योंकि विश्व के अनन्त पदार्थों को भाषागत वचन अपने दो या तिन रुपों में समाहित कर लेता है। इसमें बहुवचन रूप की क्षमता असीमित है, जो दो से लेकर अनन्त पदार्थों को अपनी सीमा में बांध सकता है।

भारतीय आर्यभाषा का इतिहास बड़ा मनोरंजक है। यद्यपि संस्कृत में द्वि-वचन था, पर उसका प्रयोग अधिक नहीं था। संभवतः इसीलिए पालि में द्वि-वचन का लोप हो गया और मध्यकालीन भाषा में द्वि-वचन का अस्तित्व केवल अपवादों में सिमटकर रह गया।[4] जैसे-

संस्कृत

एकवचन	द्वि-वचन	बहुवचन
अश्व	अश्वौ	अश्वाः
नदी	नद्यौ	नद्यः
कमलम्	कमलै	कमलानि

इस प्रकार संस्कृत में तीन वचन का प्रचलन था। मध्यकालीन आर्यभाषा में दो ही वचन थे-एकवचन और बहुवचन। आधुनिक आर्यभाषाओं में यही प्रवृत्ति दिखती है। मानक ओड़िआ[5], पश्चिमी ओड़िआ[6] और छत्तीसगढ़ी[7] में भी दो वचनवाली व्यवस्था है।

1.1. वचन एवं संज्ञाओं का वर्गीकरण

संज्ञाओं का वर्गीकरण दो दृष्टि से किया जा सकता है-

1. गणनीयता की दृष्टि से

2. प्रयत्न की दृष्टि से

1.1.1. गणनीयता की दृष्टि से

गणनीयता की दृष्टि से संज्ञाओं को दो भागो में विभाजित किया जाता है-

1. एकवचन

2. बहुवचन

व्यक्ति या पदार्थ एक है तो एकवचन तथा दो या अधिक है तो बहुवचन होता है। किन्तु सभी संज्ञाएँ गणनीय नहीं होतीं। कुछ संज्ञाओं में वचन भाव गौण होता है और वे अगणनीय होती हैं। इसी आधार पर संज्ञाओं को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है-

1.1.1.1. समूहवाचक संज्ञा

कुछ संज्ञाएँ समूहवाचक होती हैं। जैसे-सभा, भीड़, परिवार आदि। अभिव्यंजना की दृष्टि से ऐसे नामिक शब्द बहुत्व सूचक हैं। किन्तु समूह की एकता अथवा अनेकता की दृष्टि से गिना जा सकता है।

1.1.1. 2. पिण्डवाचक

कुछ नाम पिण्डवाचक (mass) होते हैं, जिनका वचन की दृष्टि से विभेद करना सरल नहीं है। जैसे-

द्रव्यवाचक-सोना, चाँदी, पत्थर आदि।

द्रववाचक-पानी, तेल, दूध आदि।

1.1.1. 3. अमूर्तवाचक

अमूर्तवाचक संज्ञाओं में वचन भाव गौण होता है। जैसे-

भाववाचक संज्ञाएँ-भय, बल आदि।

क्रियावाचक संज्ञाएँ-आना, जाना आदि।

पिण्डवाचक संज्ञाओं की तरह भाववाचक संज्ञाओं का भी स्वल्पता या बहुलता की अभिव्यक्ति परिणामवाचक शब्दों द्वारा की जा सकती है। लेकिन गणनीयता की दृष्टि से

इनके वचन का द्योतन नहीं होता। इस प्रकार वचन की दृष्टि से संज्ञाओं को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है-

संज्ञा.- 1. गणनीय-एकवचन, बहुवचन

2. अगणनीय-पिण्डवाचक, भाववाचक

1.1. 2. प्रयत्न की दृष्टि से

मानक ओड़िआ में वचन व्यवस्था व्याकरण के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक आदि भाषेतर भावनाओं से जुड़ी हैं।[8] पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में संज्ञाओं का वर्गीकरण प्राणीत्व, मूर्तता आदि भौतिक गुणों तथा आदर, अनादर जैसे सामाजिक मूल्यों के आधार पर किया जा सकता है। इन्हीं आधारों पर इन तीनों भाषाओं के संज्ञाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1. प्राणीवाचक
2. अप्राणीवाचक

1.1. 2.1. प्राणीवाचक संज्ञा

प्राणीवाचक संज्ञाओं को मानवत्व के आधार पर दो वर्गों में रखा जाता है-

1. मानववाचक
2. मानवेतर

1.1. 2. 2. मानववाचक

मानववाचक संज्ञाओं को कई वर्गों में बाँटा जा सकता है-

	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
सामान्य मानववाचक	बेटी	झिअ	झि	बेटी
व्यक्तिवाचक	केवँट	केउँट	केउँट्	केंवटा
उपाधिवाचक	वर्मा	महान्ति	साहु	नाएक
मित्रवाचक	मित्र	सांग	सांग्	संग

1.1. 2. 3. अप्राणीवाचक

अप्राणीवाचक संज्ञाओं के अन्तर्गत ऐसी संज्ञाएँ आती हैं, जिन्हें एकल या सामूहिक रूप से गिना जा सकता है। इसी वर्ग के अन्तर्गत वे संज्ञाएँ भी आ सकती हैं, जो एक निश्चित परिमाण सूचक हैं और जिन्हें परिमाण की दृष्टि से गिना जा सकता है। जैसे-

	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
सामान्य परिमाणवाचक	किलो	किलो	किलो	किलो
समयवाचक	दिन	दिन	दिन्	दिन्
मुद्रावाचक	पैसा	पइसा	पइसा	पेइसा

परिमाणवाचक संज्ञाओं के अन्तर्गत उन आधार या पात्रवाचक संज्ञाओं को रखा जा सकता है, जिसमें द्रव या द्रव्य पदार्थों को रखा जा सकता है और उन पात्र या आधार के अनुसार उन्हें भी गिना जा सकता है। जैसे- लात, थापड़ आदि भी गणनीय होते हैं।

1. 2. वचन का द्योतन

जैसे कि पिछले पृष्ठों में कहा जा चुका है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में दो ही वचन मिलते हैं-एकवचन और बहुवचन। इन तीनों भाषाओं में सामान्यतः वचन सूचक प्रत्यय के प्रयोग बिना संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन की सूचना देते हैं। बहुवचन सूचक प्रत्ययों द्वारा एकवचन सूचक प्रातिपादिकों का रूपांतरण किया जाता है। कभी-कभी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में कुछ एकक सूचक प्रत्ययों, शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है, जो एकवचन संज्ञा प्रातिपादिक के साथ प्रयुक्त होता है। बहुवचन सूचक प्रत्ययों के अतिरिक्त समूहवाचक शब्दों, संख्या एवं परिणामवाचक शब्दों तथा प्रातिपादिक एवं विशेषण की द्विरुक्ति द्वारा भी बहुवचन की सूचना भी दी जाती है।[9]

1. 2.1. एकवचन का द्योतन

व्यक्ति या पदार्थ एक है तो उसे एकवचन कहते हैं। मानक ओड़िआ, पश्चिमी

ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में बिना प्रत्यय युक्त संज्ञा एकवचन की सूचना देते हैं। कभी-कभी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'पर' प्रत्यय के प्रयोग द्वारा भी एकवचन की सूचना मिलती है। इसी आधार पर महारणा ने रूप, अर्थ एवं प्रयोग के आधार पर एकवचन सूचक प्रत्ययों को तीन वर्गों में बाँटा है।[10]

1. एकक चिन्ह
2. एकक परिणाम सूचक
3. पूर्वाश्रयी निर्देशक

पश्चिमी ओड़िआ में एकक सूचक प्रत्यय मानक ओड़िआ के समान है, कुछ क्षेत्रों में अलग है। किन्तु छत्तीसगढ़ी में इनसे भिन्नता पायी जाती है। नीचे इनके अन्तर को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण दिए जा रहे हैं-

1. 2.1.1. एकक चिन्ह

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग सामान्यतः अप्राणीवाचक एकवचन संज्ञा के साथ होता है, लेकिन छत्तीसगढ़ी में ऐसा प्रयोग नहीं पाया जाता है। मूल संज्ञा के पूर्व /-एक/ का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
एक घन्टा	घन्टा-घन्टा-ए>घन्टे	घन्टा-ए>घन्टे	एक घान्टा
एक सेर	सेर-ए>सेरे	सेर-ए>सेरे	एक सेर
एक पैसा	पइसा-ए>पइसे	पइसा-ए>पइसे	एक पेइसा

इन उदाहरणों में मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के आकारांत एवं अकारांत प्रातिपादिकों का अंत्य स्वर लोप हो जाता है। हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में मूल संज्ञा के पूर्व /-एक/ का प्रयोग किया जाता है। अब हम इनका वाक्य में प्रयोग देखेंगे।

हि. एक घन्टे के बाद जाऊंगा।

मा. ओ. घन्टे परे जिबि।

प. ओ. घन्टे परे जिमिं।

छ. एक घान्टा के बाद जाहौं।

मानक ओड़िआ में /-ए/ की भाँति /-क/ का प्रयोग एकक सूचना के लिए किया जाता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
एक किलो	किलो-किलो>क-किलोक	किले	एक किलो

इस प्रकार मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग संज्ञा के साथ होने से एक निश्चित परिमाण का सूचना देता है-संज्ञा+परिमाण। किन्तु छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति /-एक/ का प्रयोग उसी रूप में होता है, लेकिन ये उसके विपरीत होता है-परिमाण+संज्ञा।

1. 2.1. 2. एकक परिमाण सूचक शब्द प्रत्यय

एकवचन संज्ञा प्रातिपादिकों के साथ मानक ओड़िआ में जण, खन्ड़े, गोटे आदि, पश्चिमी ओड़िआ में जण्, खड़े, गुटे आदि और छत्तीसगढ़ी में एक, एकठि, एककुटि, एकठन् आदि प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	एक लड़का आए।	सीता कागज मांग रही है।
मा. ओ.	पिला गोटे आसु।	सीता खन्डे कागज मागुछि।
प. ओ.	पिला गुटे आसु।	सीता कागज खड़े मागुछे।
छ.	टूरा एकठन् आवै।	सीता कागज एककुटि मांगत हवै।

मानववाचक संज्ञाओं के साथ मानक ओड़िआ में गोटे, गोटिए और पश्चिमी ओड़िआ में गुटे तथा हिन्दी में 'एक' और छत्तीसगढ़ी में एकठि, एकठन् आदि शब्द प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मुझे एक लड़की चाहिए।	
मा. ओ.	मोर झिअ गोटे दरकार।	<-निर्दिष्ट-शिष्ट>
	मोर झिअ गोटिए दरकार।	<-निर्दिष्ट+शिष्ट>

	मोर झिअ गोटाक दरकार।	<-निर्दिष्ट-शिष्ट>
	मोर झिअ गोटिक दरकार।	<-निर्दिष्ट+शिष्ट>
प. ओ.	मोर् झि गुटे दरकार।	<-निर्दिष्ट-शिष्ट>
छ.	मोर छोकरी एकठिन् दारकार।	<-निर्दिष्ट-शिष्ट>

इसी प्रकार मानवेतर प्राणिवाचक, अप्राणीवाचक एककसूचक प्रातिपादिकों के साथ मानक ओड़िआ में गोटे, गोटिए, गोटाक, गोटिक तथा पश्चिमी ओड़िआ में 'गुटे' और छत्तीसगढ़ी में 'एकठिन्' शब्दों का प्रयोग होता है।

1. 2. 2. बहुवचन का द्योतन

हिन्दी भाषा की भाँति मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में संज्ञा प्रातिपादिकों के साथ 'पर' प्रत्यय के योग से एकवचन संज्ञाओं को बहुवचन में परिणत किया जाता है। इन तीनों भाषाओं में बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग संज्ञा शब्द की वाचकता के अनुसार होता है। मानक ओड़िआ की भाँति पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग प्रायः अर्थ पर आधारित है। अर्थात् संज्ञा शब्द की वाचकता जैसे-प्राणी, अप्राणी में मानव और मानवेतर प्राणी आदि के साथ-साथ प्राणी या वस्तु के प्रति वक्ता के मनोभाव के अनुसार इनका प्रयोग होता है। कुछ प्रत्ययों को 'शब्द प्रत्यय' कहा जाता है। ये प्रत्यय चल प्रकृति के होते हैं, जो प्रातिपादिक के दोनों तरफ (पूर्व एवं पश्चात) प्रयुक्त हो सकते हैं।[11] अब हम देखेंगे कि इन तीनों भाषाओं में कौन-कौन से बहुवचन सूचक प्रत्यय है और उनका प्रयोग किस प्रकार से होता है?

1. 2 . 2.1. बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग

मानक ओड़िआ में /-माने/[12], पश्चिमी ओड़िआ में /-माने/[13] और छत्तीसगढ़ी में /-मन/[14] मुख्य रुप से बहुवचन सूचक प्रत्यय हैं। किन्तु इनके अलावा और भी बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है। प्रयोगगत भिन्नता के आधार पर महारणा ने मानक

ओड़िआ के बहुवचन सूचक प्रत्ययों को चार भागों में वर्गीकृत किया है।[15] इसके समानान्तर पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के बहुवचन सूचक प्रत्ययों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
/-ए, -ङ्क/	/-ए, कर/	/-कारा/
/-मान/	/-मान/	/-मन्/
/गुड़ा-/	/गुड़ा-/	-
/जाक/, /तक/, /मन्दा/	/जाक/, /सभे/, /जह/, /गुरदु/,	/सब/, /जमो/ ,/जम्मा/, /अकन/

1. 2 . 2.1.1. शून्य

कभी-कभी प्राणीवाचक प्रातिपादिक बिना किसी प्रत्यय के बहुवचन की सूचना देते हैं। जैसे-

हि.	इस गाँव के लोग पाठ नहीं पढ़े हैं।
मा.ओ.	ए गाँर लोक पाठ पढ़ि नाहान्ति।
प.ओ.	इ गाँर लोक् पाठ् नाइँ पढ़िं।
छ.	इ गाँव के मइनसे पाठ् नईं पढ़िन्हें।

1. 2 . 2.1. 2. /-ए/, /-ए/, /-मन/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में बहुवचन के अर्थ में मानववाचक प्रातिपादिकों के साथ /-ए/ का प्रोयग होता है। इसकी यौगिक प्रक्रिया में आकारांत प्रातिपादिक के अंत्य /अ/ और /-आ/ का विकल्प से लोप हो जाता है। छत्तीसगढ़ी में ऐसा प्रयोग नहीं है। इसकी जगह /-मन/ का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
लोग	लोक-ए>लोके	लोक-ए>लोके	मइनसे-मन>मइनसेमन
बच्चे	पिला-ए>पिले	पिला-ए>पिले	लइका-मन>लइकामन

1. 2 . 2.1. 3. /-ङक/, /-कर/, /-कारा/

/-ङक/ का प्रयोग केवल मानक ओड़िआ में होता है। इससे प्राणीवाचक प्रातिपादिकों के सविभक्तिक बहुवचन रुप बनते हैं। पश्चिमी ओड़िआ में /-कर/ और छत्तीसगढ़ी में /-कारा/ का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
माँ से	माङकठारु	माँकरनु	माँकाराले

1. 2 . 2.1. 4. /मान/, /मान/, /मन/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के /मान/, /माने/ तथा छत्तीसगढ़ी के मन बहुप्रचलित बहुवचन प्रत्यय है। /मन/ प्रत्यय छत्तीसगढ़ी में ओड़िया के द्योतक प्रत्यय /माने/ से आया प्रतीत होता है।[16] इन शब्दों के साथ अविभक्तिक स्थिति में बहुवचन सूचक प्रत्यय /-ए/ एवं /ङक/, /मानङक/ प्रत्यय जोड़कर सामान्यतः प्राणीवाचक विशेषतः मानववाचक प्रातिपादिकों के साथ प्रयोग किया जाता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
लड़के	पिलामाने	पिलामाने	टूरामन
लड़कियाँ	झिअमाने	टुकेलमाने	टूरीमन
बैल	बलदमाने	बलदमाने	बइलामन
लड़कियों के	झिअमानङकर	टुकेलमानकर	टूरीमनके
गायों के लिए	गाईमानङक पाईं	गाईमानकर लागि	गायमनबर

1. 2 . 2.1. 5. /गुड़ा/

/गुड़ा/ बहुवचन सूचक शब्द प्रत्यय का मूल रुप है। मानक ओड़िआ में यह अनिर्दिष्टता सूचक /-ए/, निर्दिष्टता सूचक /-क/ एवं शिष्टता सूचक /-इ/ युक्त होकर निम्नलिखित रुपों में प्रयोग पाया जाता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
बैल	बलद गुड़े	बलद गुड़ा	बइलामान
	बलद गुड़िए		
	बलद गुड़ाक		

1. 2 . 2.1. 6. समग्रतावाचक

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में निम्नलिखित शब्द समग्रतासूचक हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
महीनाभर	मासजाक	मासजाक	महीनाभर
घरभर	घरजाक	घरजाक	घरभर
बच्चे	पिलाजाक	पिलाजाक	लइकामन

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में गणनीय एवं सभी अगणनीय प्रातिपादिकों के साथ /जाक/ का प्रयोग हो सकता है। छत्तीसगढ़ी में /भर/ और /मन/ का प्रयोग होता है। इसके अलावा मानक ओड़िआ में तक, मन्दा आदि तथा पश्चिमी ओड़िआ में गुरदु, खोब आदि तथा छत्तीसगढ़ी में 'कतका' आदि का प्रयोग पाया जाता है।

1. 2 . 2.1. 7. समूहवाचक शब्द

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में मानवेतर प्राणीवाचक प्रातिपादिकों के साथ निम्नलिखित समूहवाचक शब्द जोड़ा जाता है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
गायों का झुंड	गाई गोठ	गाय गोठ्	गाय गोहोड़ि
सूअरों का झुंड	घुसुरी पल	घुसुरी गुहुड़ि	घुसरी गोहड़ि
चिंटियों का कतार	पिंपुड़ि मंदा	चाँटि गदा	चाँटि गादा

1. 2 . 2.1. 8. परिमाणवाचक शब्द

बहुवचन सूचक प्रत्ययों से बहुलता की सूचना तो मिलती है, किन्तु कोई निश्चित संख्या या परिमाण की सूचना नहीं मिलती। ऐसी स्थिति में प्रातिपादिकों के पूर्व एक से अधिक संख्या अथवा परिमाणवाचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जिससे उस निश्चित संख्या या परिमाण के अनुसार बहुत्व की सूचना मिलती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
दस आदमी	दस जण मनुष्य	दस जण मुनुस	दसझिन् मइनसे
सभी पेड़	सबु गछ	सबु गछ्	सब रुक
जितना कागज	जेते कागज	जेते कागज	जतका कागज

1. 2 . 2.1. 9. द्विरिक्ति

इन तीनों भाषाओं में गणनीय वर्ग के प्रातिपादिक या विशेषण की द्विरुक्ति द्वारा बहुवचन की सूचना दी जाती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
बड़ा-बड़ा घर	बड़-बड़ घर	बड़-बड़ घर्	बड़खा-बड़खा घर्
छोटे-छोटे पेड़	छोट-छोट गछ	छोट्-छोट् गछ्	छोटे-छोटे रुक
सुंदर-सुंदर लड़की	सुंदर-सुंदर झिअ	सुंदर-सुंदर टुकेल्	सुंदर-सुंदर टूरी

इस प्रकार हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में वचन व्यवस्था की दृष्टि से सुछ समानता है तो कुछ असमानता है। हिन्दी में /-ए/, /-एँ/, /-आँ/ और /-ओं/, मानक ओड़िआ में /-मान/, /-माने/, /-गुड़ा/ आदि, पश्चिमी ओड़िआ में /-मान/, /-माने/, /-जाक्/ आदि और छत्तीसगढ़ी में /-मन/, /-मनन/ आदि बहुवचन सूचक प्रत्यय हैं।

2 . लिंग

भाषा में लिंग एक प्रमुख व्याकरणिक संवर्ग है। संज्ञा शब्द के जिस रूप से यह जाना जाय कि वह पुरुष जाति के लिए प्रयुक्त हुआ है या स्त्री जाति के लिए, उसे

'लिंग' कहते हैं। पाणिनी-व्याकरण में लिंग के लिए 'व्यक्ति' शब्द का प्रयोग किया गया है। यथार्थ में लिंग शब्द का अर्थ 'चिन्ह' होता है। चिन्ह या निशान ही इस बात की ओर संकेत करता है कि संज्ञा की जाति स्त्रीलिंग है या पुलिंग। इस प्रकार संज्ञा के जिस रूप से यह ज्ञात हो कि वह पुरुष जाति का है अथवा स्त्री जाति का, उसे 'लिंग' कहते हैं। इस प्रकार लिंग शब्द का सामान्य अर्थ प्राणी के यौन लक्षण से सूचित लिंग ही समझा जाता है। व्याकरण के संदर्भ में लिंग का यही अर्थ ग्रहण करने पर बहुत बड़ा भ्रम उत्पन्न हो जाता है। क्योंकि व्याकरण में लिंग का अर्थ इससे सर्वथा भिन्न है। अंग्रेजी व्याकरण में लिंग के अर्थ में प्रयुक्त 'Gender' शब्द जिस मूलशब्द (लेटिन-Genus) से उत्पन्न है, उसका अर्थ है 'श्रेणी' या 'प्रकार' (class of kind)।[17] इस दृष्टि से व्याकरण में लिंग का तात्पर्य संज्ञा शब्दों के श्रेणीकरण या विभाजन से भाषा के आदिम स्वरुप में संभवतः शब्दों का लिंग निर्धारण प्राकृतिक लिंगों के अनुसार हुआ होगा, पर जैसे-जैसे भाषा विकसित होती गई, वैसे-वैसे भाषाई लिंग प्राकृतिक लिंगों से सर्वथा पृथक हो गए। प्राकृतिक दृष्टि से स्त्री एवं मादा जीवधारियों के अंगादि सूचक शब्द पुलिंग शब्द मान लिए गए और पुरुषों के संदर्भ में अत्यधिक जटिल बन गए। इस जटिलता का कारण संभवतः वस्तुओं के अंर्तवर्ती गुणों की अनुभूति ही होगी। इस अनुभूति के बल पर वस्तुओं के लिंग का निर्धारण स्थूल प्राकृतिक लिंगों पर आधारित न होकर उसके सूक्ष्म गुणों के आधार पर किया गया।[18]

लिंग पदार्थ का एक स्वाभाविक धर्म है। मनुष्यों में तथा पशु-पक्षियों में स्वाभाविक लिंग की स्थिति बिलकुल स्पष्ट है। पुरुष, स्त्री, लड़का, माता, पिता आदि शब्दों में लिंग पदार्थ के स्वाभाविक धर्म के रूप में सामने आते हैं। पुलिंग और स्त्रीलिंग ये दोनों प्रत्यय से ही ज्ञात होते हैं। अतः निर्जीव पदार्थों में जहाँ ये दोनों लिंग नहीं होते, इनको 'नपुसंक लिंग' के अन्तर्गत रखा जाता है। नपुसंक का अर्थ हुआ पुलिंग और स्त्रीलिंग का अभाव। इस प्रकार साधारणतः लिंग तीन होते हैं।

संस्कृत में संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, कृदंत के संदर्भ में लिंग का विचार किया

जाता है। हिन्दी में संज्ञा, विशेषण, संबंधकारक चिन्ह, कृदंत, सहायक-क्रिया और क्रिया-विशेषण में भी लिंग होता है। किन्तु मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का लिंग विधान अत्यंत सरल है। इन तीनों भाषाओं में बंगला, असमिया और बिहारी भाषा के समान लिंग भेद कम है। इस संदर्भ में चटर्जी का मत है कि-"कोल भाषाओं के प्रभाव से बंगला आदि पूर्वी भाषाओं से लिंग भेद उठ गया है। इसके अतिरिक्त इस लिंग भेद की शिथिलता का कारण इन भाषाओं का स्वाभाविक विकास हो सकता है"।[19]

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लिंगों का विभाजन जीववैज्ञानिक एवं अर्थ के आधार पर होने पर भी लिंग का व्याकरणिक प्रकार्य अवश्य उल्लेखनीय है। यद्यपि इन भाषाओं में क्रिया लिंग से प्रभावित नहीं होती है किन्तु कुछ विशेषण, विशेष्य लिंग के अनुसार रुपांतरित होते हैं। इन भाषाओं में कुछ संज्ञाएं केवल पुलिंग होते हैं तथा कुछ केवल स्त्रीलिंग। कुछ संज्ञाएँ उभयलिंगों में प्रयुक्त होती हैं। इनके अतिरिक्त पुलिंग संज्ञाओं को स्त्रीलिंग प्रत्ययों से युक्त कर स्त्रीलिंग बनाया जाता है। व्याकरणिक दृष्टि से इन तीनों भाषाओं में दो ही लिंग हैं-

1. पुलिंग
2. स्त्रीलिंग

2.1. भाषा में लिंग विभाजन का आधार

भाषा में लिंग विभाजन के कई आधार हैं। महारणा के अनुसार लिंग विभाजन के तीन मुख्य आधार हैं, जो निम्नलिखित हैं-[20]

1- जीववैज्ञानिक आधार

2-अर्थपरक आधार

3-व्याकरणिक आधार

2.1.1. जीववैज्ञानिक आधार

इसमें संज्ञाओं के यौन लक्षण के साथ-साथ वस्तु के प्राणीत्व, आकार या अन्य प्राकृतिक गुणों के आधार पर लिंग ग्रहण किया जाता है।

2.1. 2. अर्थपरक आधार

कभी-कभी वक्ता की भावना अथवा अन्य सामाजिक या सांस्कृतिक कारण भी लिंग विभाजन का आधार होता है।

2.1. 3. व्याकरणिक आधार

व्याकरणिक स्तर पर संज्ञा शब्द के भौतिक आकार जैसे-ध्वनि संरचना, शब्द में प्रयुक्त व्युत्पादक एवं साधक प्रत्ययों की दृष्टि से विभिन्न लिंगों में वर्गीकरण मिलता है।

सभी भाषाओं में लिंग का विभाजन ऊपर लिखित किसी एक आधार पर नहीं हुआ है। जिन भाषाओं में व्याकरणिक प्रकार्य की दृष्टि से लिंग विद्यमान हैं, उनमें लिंग के वर्गीकरण का आधार कुछ तो प्राकृतिक होता है, कुछ अर्थपरक और कुछ व्याकरणिक भी।

2. 2. लिंगसूचक व्युत्पादक प्रत्यय

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के लिंग सूचक प्रत्ययों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है-

1. प्रथम वर्ग के वो प्रत्यय हैं, जो संज्ञा, विशेषण या धातु से जुड़कर पुलिंग या स्त्रीलिंग संज्ञा प्रातिपादिकों को व्युत्पन्न करते हैं।

2. द्वितीय वर्ग के वे प्रत्यय हैं, जो प्राणिवाचक पुलिंग संज्ञा प्रातिपादिक से जुड़कर स्त्रीलिंग संज्ञा प्रातिपादिकों को व्युत्पन्न करते हैं। इस द्वितीय वर्ग के प्रत्ययों को पारंपरिक व्याकरण में स्त्री प्रत्यय के नाम से अभिहित किया जाता है।

2. 2.1. पुलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में मूल प्रातिपादिकों से जुड़कर पुलिंग संज्ञा शब्दों को व्युत्पन्न करनेवाले व्युत्पादक प्रत्यय निम्नलिखित हैं-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
अक-लेखक, पाठक	अक्-गायक्, जनक्	आ-लबरा, भूखा
आर-कुंभार, लुहार	आ-डाढ़िआ, रुघा	आक्-तैराक्, लड़ाक्
आरि-सुनारि, शंखारि	आर्-चिन्हार्, सुतिहार्	आर्-पोंढ़ार्, चिन्हार्
आलि-चढ़ालि, खेलालि	आरि-भिखारि, पुझारी	इया-लरिया, गोनिया
इआ-हलिआ, बणिआ	इआ-गुनिआ, ढुलिआ	इहा-धमनिहा, खोरनिहा
उआ-मुतुरा,हगुरा	आलि-जुगालि,चढ़ालि	एरा-लुटेरा, गधेरा
उरिआ-नाउरिआ,काठुरिआ	इहा-कमिहा, रेंधिहा	ऐआ-बचवैआ, जवैआ
कार-नाटककार, कथाकार	उआ-मदुआ, नाटुआ	औआ-चलौआ, घरौआ
खोर-जिदखोर, निशाखोर	दार्-दुकानदार्, ठिकादार्	दार्-छड़िदार, जबावदार्
दार-जमिदार, भागिदार	निआँ-बाहारनिआँ, बजनिआँ	वान्-धनवान्, पहलवान्
बाला-पानबाला, गाड़िबाला	बाला-झुरिबाला, घरबाला	हार्-सुतिहार्, बनिहार्

2. 2. 2. स्त्रीलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में निम्नलिखित स्त्रीलिंग सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है-

मा. ओ.	प. ओ.	छ.
आणी-चाकराणी, महाराणी	इ-भानजि, काकि	ई-कुमारी, डउकी
ई-मयूरी, सिंही	एइ- डरहेइ, बिहेइ	इन्-पापिन्, साँपिन्
उणी-लुहारुणी, सुनारुणी	एन्-केंउटेन्, तेलेन्	निन्- बघनिन्, घँसनिन्

इस प्रकार इन तीनों भाषाओं में मुख्य रूप से उपरोक्त पुलिंग और स्त्रीलिंग सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

2. 3. लिंग परिवर्तन

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लिंग परिवर्तन (पुलिंग से स्त्रीलिंग) के लिए निम्नलिखित पर प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है-

2. 3.1.- इन तीनों भाषाओं में आकारांत शब्द प्रायः पुलिंग होते हैं। इनसे गुरुता का भाव प्रकट होता है। इसके विपरीत ईकारांत शब्द प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं। इन भाषाओं के आकारांत पुलिंग शब्दों को स्त्रीलिंग में परिवर्तन करने के लिए ईकारांत में बदला जाता है। जैसे-

हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
राजा	रानी	राजा	राणी	रजा	रानी	राजा	रानी
घोड़ा	घोड़ी	घोड़ा	घोड़ी	घोड़ा	घोड़ी	घोड़ा	घोड़ी
बुढ़ा	बुढ़ी	बुढ़ा	बुढ़ी	बुढ़ा	बुढ़ी	बुढ़ा	बुढ़ी
साला	साली	सला	साली	सला	साली	सारा	सारी

इस प्रकार इन तीनों भाषाओं में हिन्दी की भाँति लिंग परिवर्तन में समानता है।

2. 3. 2.-इसके अलावा हिन्दी में (इन्, आइन, आनी, नी आदि), मानक ओड़िआ में (आणी, उणी आदि), पश्चिमी ओड़िआ में (एइ, एन् आदि) और छत्तीसगढ़ी में (इन्, निन् आदि) प्रत्ययों के माध्यम से पुलिंग शब्दों को स्त्रीलिंग में परिवर्तन किया जाता है। जैसे-

हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
नाती	नातिन	नाति	नातुणी	नाति	नतनेन्	नाति	नतनिन्
तेलि	तेलिन	तेलि	तेलुणी	तेलि	तेलेन्	तेलि	तेलिन्
बाघ	बाघिन	बाघ	बाघुणी	बाघ	बघनेन्	बाघ	बघनिन्
चाकर	चाकरानी	चाकर	चाकराणी	चाकर	चकारेन्	चाकर	चाकरिन्
लोहार	लोहारिन्	लुहार	लुहारुणी	लुहार	लुहारेन्	लोहरा	लोहारिन्

इससे स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ में (आणी, उणी), पश्चिमी ओड़िआ में (एइ, एन्) और छत्तीसगढ़ी में (निन्, इन्) प्रत्ययों का खूब प्रचलन है। केवल ईकारांत को छोड़कर इन तीनों के स्त्री प्रत्ययों में पर्याप्त अन्तर है।

2. 3. 3. लिंगसूचक सहगामी शब्द

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के मानवेतर प्राणीवाचक शब्दों से कोई निश्चित लिंग की सूचना नहीं मिलती है। ऐसे शब्दों को उभय लिंग की कोटि में रखा जा सकता है। उभय लिंग सूचक शब्दों को पुलिंग एवं स्त्रीलिंग का स्पष्टीकरण के लिए संज्ञा के पूर्व निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग किया जाता है-

हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
नर भालु	मादा भालु	अण्डिरा भालु	माई भालु	अँररा भालु	माईं भालु	एँडरा भालु	माई भालु
नर सामर	मादा सामर	अण्डिरा साम्बर	माई साम्बर	अँररा सामर	माईं सामर	एँररा सामर	माई सामर

इस प्रकार उभय लिंग संज्ञाओं का लिंग निर्धारण करते समय मानक ओड़िआ में (अण्डिरा-माई)[21], पश्चिमी ओड़िआ में (अँररा-माईं)[22] और छत्तीसगढ़ी में (एँडरा-माई)[23] का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी के 'नर-मादा' की भाँति। ऐसे संज्ञाओं में भालु, कोइली, बिलेइ आदि मानवेतर प्राणी हैं।

2. 3. 4. स्वतंत्र स्त्रीलिंगवाचक शब्द

इन भाषाओं में कुछ स्त्रीलिंग वाचक शब्द हैं, जो पुलिंग शब्दों की स्त्रीलिंग की सूचना देते हैं, उनसे व्युत्पन्न नहीं होते हैं। अन्य भारतीय भाषाओं की भाँति। अर्थात् अर्थ की दृष्टि से समानता रखने पर भी वाचक शब्दों के रुपों में समानता नहीं होती। इनमें अधिकांश रिश्ते सूचक होते हैं। जैसे-

हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
पिता	माता	बापा	माँ	बुआ	माँ	बुआ	माँ
ससुर	सास	ससुर	सास	ससुर	सास	ससुर	सास
जिजा	दीदी	भेणोई	नानी	गईं	नानी	भाँटो	दीदी

2. 4. सार्वनामिक निर्देश एवं लिंग

इन भाषाओं में सर्वनाम प्रातिपादिकों से पुलिंग या स्त्रीलिंग की सूचना नहीं मिलती है। किन्तु प्रश्नवाचक सर्वनाम प्रातिपादिक प्राणीत्व के आधार पर अलग-अलग होते हैं। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
कौन	किए	किए	कउन् <+प्राणी>
क्या	कँण	काणाँ	का <-प्राणी>

इसके अलावा प्राणीत्व के आधार पर अन्य पुरुष वाचक सर्वनाम प्रातिपादिकों के साथ अलग-अलग वचन सूचक प्रत्यय एवं पूर्वाश्रयी निर्देशक प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह	से	से	ओ <+प्राणी, +एक>
वह	सेटा	सेटा	ओला <-प्राणी, +एक>
वे	सेमाने	सेमाने	ओमन <+प्राणी, +एक>
वे	सेगुड़िक	सेटामाने	ओमनला <-प्राणी, +एक>

2. 5. विशेषणों पर लिंग का प्रभाव

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में आकारांत विशेषण के लिंग के अनुसार रुपातंरित होते हैं। संज्ञा यदि पुलिंग है तो विशेषण का परिवर्तन नहीं होता। यदि स्त्रीलिंग का है तो अंत्य आ>ई हो जाता है। जैसे-

हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.
काला घोड़ा	काली घोड़ी	कला घोड़ा	काली घोड़ी	कला घोड़ा	काली घोड़ी	करिआ घोड़ा	कारी घोड़ी
मोटा लड़का	मोटी लड़की	मोटा पिला	मोटी झिअ	मोटा पिला	मोटी टुकेल्	मोटा टूरा	मोटी टूरी

2. 6. क्रिया पर लिंग का प्रभाव

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में कर्ता, कर्म आदि के लिंग का प्रभाव क्रिया पर नहीं पड़ता है, जैसे हिन्दी में क्रिया प्रभावित होती हैं। जैसे-

	पुलिंग	स्त्रीलिंग
हि.	राम फल खाता है।	सीता फल खाती है।
मा. ओ.	राम फल खाए।	सीता फल खाए।
प. ओ.	राम फल् खाएसि।	सीता फल् खाएसि।
छ.	राम फर् खाथे।	सीता फर् खाथे।

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लिंग परिवर्तन, लिंग सूचक प्रत्ययों आदि की दृष्टि से कुछ समानता है तो कुछ विषमता है।

3. पुरुष

वाक्य संरचना के केन्द्र में 'पुरुष' भी एक अंश है। भाषा व्यवहार में वक्ता और श्रोता का उल्लेख होता है और कभी दोनों से भिन्न व्यक्ति का भी उल्लेख होता है। इन्हीं तीनों को तीन पुरुष कहते हैं। सत्यकाम वर्मा के अनुसार-"कर्ता से क्रिया के स्वाभाविक संबंध की अभिव्यक्ति जिस माध्यम से मिलती है, उसे पुरुष कहते हैं"।[24] किसी वाक्य से यह सूचना मिलती है कि वह वक्ता से संबद्ध है या श्रोता से संबद्ध है या अन्य किसी से। इन तीनों को क्रमशः उत्तम, मध्यम और अन्य पुरुष कहते हैं। सामान्यतः क्रिया के रुपों से इन तीनों पुरुष का संकेत मिलता है। सर्वनामों के लिए भी तीनों पुरुषों के लिए भिन्न शब्द मिलते हैं। पुरुष भी शब्द रूप को परिवर्तित करनेवाला तथा शब्दों के परस्पर अन्वय को स्पष्ट करनेवाला एक तत्व है। अतएव यह तत्व 'व्याकरणिक कोटि' है।[25]

प्रत्येक उक्ति में कोई न कोई पुरुष निर्देशित रहता है। अतः पुरुष कोटि को 'निर्देशक कोटि' (Deictic Category) माना गया है। नामिक कोटि के अन्तर्गत पुरुष कोटि की विशेषता यह है कि यह अन्य व्याकरणिक कोटियों की तरह रुपात्मक नहीं है। इसकी अभिव्यक्ति सर्वनामों द्वारा होती है, जिन्हें 'पुरुषवाचक सर्वनाम' कहते हैं।[26]

3.1. पुरुष का वर्गीकरण

वक्ता, श्रोता तथा अन्य व्यक्ति की दृष्टि से पुरुष का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है-

1. वक्ता-उत्तम पुरुष/अन्य पुरुष
2. श्रोता-मध्यम पुरुष/द्वितीय पुरुष
3. अन्य व्यक्ति या वस्तु-अन्य पुरुष/तृतीय पुरुष

अधिकांश भाषाओं में तीन पुरुष की व्यवस्था है, किन्तु शब्द स्तर पर एवं अन्विति स्तर पर इसमें भेद पाए जाते हैं। जैसे-हिन्दी में 'आप' अर्थ की दृष्टि से द्वितीय पुरुष का सर्वनाम है। किन्तु इसका प्रयोग तृतीय पुरुष में होता है। अंग्रेजी में आप का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, क्योंकि तू, तुम एवं आप के लिए 'you' का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार भाषाओं में पुरुष संबंधी व्यतिरेकी पायी जाती है।

3. 2. पुरुष के अभिलक्षण

उत्तम पुरुष एवं मध्यम पुरुष में केवल मानवों का ही उल्लेख होता है। किन्तु अन्य पुरुष में मानव, मानवेतर प्राणी अथवा वस्तु में से किसी का भी उल्लेख किया जा सकता है। अन्य पुरुष जब मानव नहीं होता है तो वह मानवेतर <-मानव>प्राणी<+प्राणी> हो सकता है, अथवा कोई वस्तु <-प्राणी>। वस्तु की स्थिति में भी वह मूर्त <+मूर्त> या अमूर्त <-अमूर्त> हो सकता है। मूर्त रुप में भी किसी पदार्थ या स्थान का संकेत कर सकता है। ऊपरलिखित विशेषताओं की दृष्टि से पुरुष की प्रारंभिक अभिलक्षण की श्रृंखला निम्न प्रकार से बनती है-

<पुरुष>-<_+मानव>

<-मानव>-<_+प्राणी>

<-प्राणी>-<_+वस्तु>

<+वस्तु>-<_+मूर्त>

<+मूर्त>-<_+स्थान>

इससे स्पष्ट है कि <-मानव> अभिलक्षण अन्यपुरुष का भी हो सकता है। इसके अतिरिक्त उत्तम एवं मध्यम पुरुष की तुलना में अन्यपुरुष का वर्गीकरण कई दृष्टियों से किया जा सकता है। देशमुख के अनुसार निम्न प्रकार है-[27]

अ. उक्ति की हर स्थिति में उत्तम एवं मध्यम पुरुष की उपस्थिति अनिवार्य है, जबकि अन्य पुरुष उपस्थित या अनुपस्थित रह सकता है।

आ. उपस्थिति की स्थिति में अन्यपुरुष वक्ता से निकट या दूर <-निकट> रह सकता है।

इ. अनुपस्थित एवं अनिश्चित व्यक्ति/वस्तु के प्रति वक्ता के मन में जिज्ञासा पैदा हो सकती है और यही जिज्ञासा प्रश्न रूप में उक्ति में प्रकट हो सकता है।

ई. वक्ता के मन में अनुपस्थित व्यक्ति/वस्तु के प्रति कोई जिज्ञासा या शंका तब नहीं रह सकती, जब व्यक्ति/वस्तु किसी दूसरे व्यक्ति से संबंधित रहता है, जो वक्ता के अभिलक्षण में है। देशमुख के उपर्युक्त वर्गीकरण के आधार पर अन्य पुरुष के आर्थी अभिलक्षण को निम्न प्रकार से नियमाबद्ध किया जा सकता है-

क. {अन्य पुरुष}-<_+उपस्थित>

ख. <+उपस्थित>-<_+निकट>

ग. <-उपस्थित>-<_+निश्चित>

घ. <-निश्चित>-<_+प्रश्न>

ङ. <-प्रश्न>-<_+संबंध>

3. 3. पुरुषवाचक सर्वनाम और उनके अभिलक्षण

इस शीर्षक के अन्तर्गत हम हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के पुरुषवाचक सर्वनामों पर विचार करेंगे। इन भाषाओं में पुरुषों के नाम तथा उनका क्रम निम्नलिखित है-

1. उत्तम पुरुष

2. मध्यम पुरुष

3. अन्य पुरुष

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के पुरुषवाचक सर्वनामों के जो मूल रूप हैं, उनको इस प्रकार दर्शाया जा सकता है-

पुरुष	**अभिलक्षण**	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
उत्तम पुरुष	<+सामान्य+एक>	मैं	मुँ	मुइँ	मैं
	<+आदर+एक>	हम	आमे	आमें	हमन्
	<+सामान्य-एक>				
मध्यम पुरुष	<-आदर+एक>	तू	तु	तुइँ	तें
	<+सामान्य_+एक>	तुम	तुमे	तुमे	तुमन्
	<+आदर_+एक>	आप	आपण	आपण्	आप
अन्य पुरुष	<+निकट>	यह	ए	इ	इ
	<_+सामान्य+एक>				
	<-निकट>	वह	से	से	ओ
	<_+सामान्य+एक>				
	<-निश्चित>	कोई	केहि	किहे	कोनो
	<_+सामान्य+मानव>				
	<+प्रश्न>	कौन	किए	किए	कउन्
	<_+सामान्य+मानव>				
		क्या	कअण	काणाँ	का
	<_+सामान्य-मानव>				
	<+संबंध>	जो	जे	जे	जो

<_+सामान्य+मानव>

जो जाहा जाहा जाहा

<_+सामान्य-मानव>

निजवाचक आप आपे/निजे निजे खुद/आप

मानक ओड़िआ में उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष बहुवचन रूप (आमें और तुमें) का आदर के अर्थ में एकवचन में प्रयोग होता है। इसके समानान्तर पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में क्रमशः (आमें, तुमें) और (हमन्, तुमन्) का प्रयोग होता है।

3. 3.1. मध्यम पुरुष

इन तीनों भाषाओं में मध्यम पुरुष में तीन-तीन रुपों का प्रयोग मिलता है। उनका प्रयोग निम्नलिखित संदर्भों में होता है-

3. 3.1.1. तू, तु, तुइँ, तें

1. एक व्यक्ति के लिए
2. निम्न श्रेणी के व्यक्तियों के प्रति
3. आत्मीय तथा घनिष्ठता के लिए
4. ईश्वर के लिए

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
तू कहाँ गया था।	तु कुआड़े जाइथिलु।	तुइँ केनआड़े जाइथिलु।	तें कहाँ गए रहे।
तू चला जा।	तु चालि जा।	तुइँ पला।	तें भाग जा।
माँ तू रो मत।	माँ तु कान्द ना।	माँ तुइँ नाइँ कान्द।	माँ तें नि रो।
ईश्वर तू क्षमा कर।	ईश्वर तु क्षमा कर।	ईश्वर तुइँ क्षमा कर।	ईश्वर तें क्षमा कर।

3. 3.1. 2. तुम, तुमे, तुमे, तुमन्

1. घनिष्ट समवयस्क व्यक्तियों के लिए
2. आदर

3. ईश्वर के प्रति

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मित्र तुम कब आए।	सांग तुमे केबे आसिल।	सांग् तुमे केभें आएल्।	संगवारी तुमन कब आ।
मामुँ तुम जाओ ना।	मामुँ तुमे जाउन।	मामुँ तुमे ज न।	मोमा तुमन जाव न।

भगवान तुम बड़े दयालु हो। भगबान तुमें बड़ दयालु। भगबान तुमे बढ़े दयालु। भगवान तुमन बड़े दयालु।

3. 3.1. 3. आप, आपण, आपण्, आप

1. उच्चपदासीन

2. ईश्वर के लिए

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
आप बैठिये।	आपण बसन्तु।	आपण् बसुन्।	आप बैठ।
गुरुजी आप जा रहे हैं।	आज्ञा आपण जाउछन्ति।	आज्ञा आपण् जाउछन्।	गुरुजी आप जावथ।
ईश्वर आप बड़े कृपालु हो।	ईश्वर आपण बड़् कृपालु।	ईश्वर आपण बढ़े कृपालु।	ईश्वर आप बड़े कृपालु।

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में ईश्वर के प्रति तु, तुमे, आपण (मा. ओ.), तुइँ, तुमे, आपण् (प. ओ.) और तें, तुमन्, आप (छ.) तीनों का प्रयोग होता है। छत्तीसगढ़ी में /आप/ का प्रचलन कम है। इसके बदले में तुम/तुमन् का प्रयोग आदर, सम्मानार्थे प्रयोग होता है। 'आप' का प्रयोग शिक्षित और शहर में रहनेवाले लोग ही करते हैं, जो कि हिन्दी भाषा का प्रभाव है।[28]

3. 3. 2. अन्यपुरुष वाचक सर्वनाम

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के अन्य पुरुष के एकवचन अविभक्तिक रुपों का आदर के अर्थ में प्रयोग होता है। ऐसी स्थिति में शब्द पर इनका <+आदर> अभिलक्षण स्पष्ट न होकर वाक्य स्तर पर क्रिया रुपों द्वारा स्पष्ट होता है। अर्थात् ऐसी स्थिति में अन्यपुरुष एकवचन के स्थान पर अन्यपुरुष बहुवचन क्रिया रुपों का प्रयोग होता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.	अभिलक्षण
वो खा रहा है।	से खाउछि।	से खाउछे।	ओ खावत हवै।	<-आदर>
वो खा रहे हैं।	से खाउछन्ति।	से खाउछन्।	ओ खावत हवैं।	<+आदर>
ये गायेगा।	ए गायिब।	इ गायबा।	इ गाहि।	<-आदर>
ये गायेंगे।	ए गायिबे।	इ गायबे।	इ गाहिं।	<+आदर>
कोई आया था।	केहि आसिथिला।	किहे आसिथिला।	कोन्हों आए रहिस्।	<+आदर>
कोई आये थे।	केहि आसिथिले।	किहे आसिथिले।	कोन्हों आए रहिन्।	<+आदर>
कौन जायेगा?	किए जिब?	किए जिबा?	कोन् जाहि?	<-आदर>
कौन जायेंगे?	किए जिबे?	किए जिबे?	कोन् जाहिं?	<+आदर>
जो गा रहा है।	जे गाउछि।	जे गाउछे।	जो गावथे।	<-आदर>
जो गा रहे हैं।	जे गाउछन्ति।	जे गाउछन्।	जो गावथें।	<+आदर>

3. 4. पुरुषवाचक सर्वनामों का रुपिमिक विश्लेषण

इस शीर्षक के अंतर्गत मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के समानान्तर पुरुषवाचक सर्वनामों के संरुप एवं उनके वितरण पर प्रकाश डालेंगे। इन सर्वनामों को निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत कर सकते हैं-

3. 4.1. उत्तम पुरुष

3. 4.1.1. उत्तम पुरुष एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

/मैं/ : <-विभक्ति> एवं ने विभक्ति के साथ। मैं, मैंने

/मे-/ : संबंध विभक्ति के साथ। मेरा, मेरे, मेरी

/मुझ-/ : शेष विभक्तियों के साथ। मुझे, मुझको

मा. ओ.

/मुँ/ : <-विभक्ति>

/मो-म-/ : <+विभक्ति>। मोते-मते, मोठारु-मठारु

/मोह/ : <+विभक्ति>। मोहर, मोहठारु

प. ओ.

/मुइँ/ : <-विभक्ति>

/मो-म/ : <+विभक्ति>। मोते-मते, मोरनु, मोरठानु

छ.

/में/, /मएँ/ : <-विभक्ति>

/मो/ : <+विभक्ति>। मोका, मोला, मोर ले, मोर से

3. 4.1. 2. उत्तम पुरुष बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

/हम/ : <_+विभक्ति>। हम, हमने, हमको

मा. ओ.

/आम-/ : शेष विभक्ति के साथ। आमे, आमकु, आमर

बहुवचन सूचक प्रत्यय /मान-/के साथ इसके रुप निम्न प्रकार के होते हैं।

/आमेमाने-/ : ए-विभक्ति के साथ। आमेमाने

/आममानङक्-/ : शेष विभक्तियों के साथ। आममानङकु, आममानङकर

प. ओ.

/आम-/ : शेष विक्तियों के साथ। आमे, आमकु, आमर

बहुवचन सूचक प्रत्यय /मान-/ के साथ इसके निम्न प्रकार के होते हैं।

/आमेमान-/ : ए-विभक्ति के साथ। आमेमाने

छ.

/हम-/ : <_+विभक्ति> । हमन, हमका, हमनला

3. 4. 2. मध्यम पुरुष

3. 4. 2.1. मध्यम पुरुष एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

/तू/ : _+ ने विभक्ति के साथ। तू, तूने

/ते-/ : संबध विभक्ति के साथ। तेरा, तेरे, तेरी

/तुझ-/ : शेष विभक्तियों के साथ। तुझे, तुझको, तुझसे

मा. ओ.

/तु/ : <-विभक्ति>

/तो-त-/ : <+विभक्ति>। तोते-तते, तोठारु-तठारु

/तोह-/ : <+विभक्ति>। तोहर, तोहठारु

प. ओ.

/तुइँ/ : <-विभक्ति>

/तो-त/ : <+विभक्ति>। तोते-तते, तोरनु-तोरठानु

छ.

/तें/तएँ/ : <-विभक्ति>

/तो-/ : <+विभक्ति>। तोला-तोर

/तोह-/ : <+विभक्ति>। तोहंर

3. 4. 2. 2. मध्यम पुरुष बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

/तुम/ : <_+विभक्ति>(सिवाय संबंध विभक्ति के)। तुम, तुमने, तुमको

/तुम्हा-/ : संबंध विभक्ति के साथ। तुम्हारा, तुम्हारे, तुम्हारी

/तुम्ह-/ : एँ-विभक्ति के साथ। तुम्हें

मा. ओ.

<तुम-तम> : <_+विभक्ति>। तुमे-तमे, तुमकु-तमकु

बहुवचन सूचक प्रत्यय /मान-/के साथ इसके रुप निम्न प्रकार के हैं।

/तुमेमाने-तमेमाने-/ : ए-विभक्ति के साथ। तुमेमाने-तमेमाने

/तुममानङक-तममानङक-/ : शेष विभक्तियों के साथ।

तुममानङकर-तममानङकर

प. ओ.

/तुम-तम-/ : <_+विभक्ति>। तुमे-तमे, तुमकु-तमकु

/तुमेमाने-तमेमाने-/ : ए-विभक्ति के साथ। तुमेमाने-तमेमाने

छ.

/तुम/ : <_+विभक्ति>। तुम, तुमन, तुमनला

/तुम्ह-/: तुम्ह का, तुम्हार

/तोंह-/ : तोहंर

3. 4. 3. उत्तम पुरुष आदरार्थक सर्वनाम

हि.

आप/ : <_+विभक्ति>। आप, आपने, आपको

मा. ओ.

/आपण/ : <-विभक्ति>।

/आपणङक-/ : <+विभक्ति>। आपणङकु, आपणङकर

बहुवचन सूचक प्रत्यय /मान-/ साथ इसके रुप निम्न प्रकार के है।

/आपणमान-/ : ए-विभक्ति के साथ। आपणमाने

/आपणमानङक-/ : शेष विभक्ति के साथ। आपणमानङकु

प. ओ.

/आपण/ : <-विभक्ति>।

/आपण-/ : <+विभक्ति। आपणकर

बहुवचन सूचक प्रत्यय /मान-/ साथ इसके रुप निम्न प्रकार के हैं।

/आपणमान-/ : ए-विभक्ति के साथ। आपणमाने, आपणमानकर

छ.

/आप/ : <_+विभक्ति>। आप, आपमन

3. 4. 4. अन्य पुरुष

3. 4. 4.1. निकटार्थक एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+मानव>/यह/ : <-विभक्ति>।

/इस-/ : <+विभक्ति>। इसने, इसको, इसमें

स्थानसूचक /यहाँ/ : <_+विभक्ति>। यहाँ, यहाँ से, यहाँ पर

मा. ओ.

<_+मानव> /ए/ : <-विभक्ति>।

/एहा-/ : <+विभक्ति>। एहाकु, एहार

<+आदर>/एहाङ्क-/ : <+विभक्ति>। एहाङ्कु, एहाङ्कर

<-मानव,+प्राणी> /एटा/ : <_+विभक्ति>। एटा, एटाकु

<-प्राणी> /एथि-/ : <+विभक्ति>। एथिकु, एथिरे

स्थानसूचक /एठा-/ : <+विभक्ति>। एटाकु, एटारे

प. ओ.

<+मानव> /ए/ : <-विभक्ति>।

/एता-/ : <+विभक्ति>। एताकु, एतार

<+आदर>/एता-/ : <+विभक्ति>। एताकु, एताकर

<-मानव,+प्राणी> /एता-इता/ : <_+विभक्ति>। एता, एताकु

<-प्राणी> /इन-/ : <+विभक्ति>। इनके, इथिं

स्थानसूचक /इन-/ : <+विभक्ति>। इनके

छ.

<_+मानव>/ई/ : <-विभक्ति>।

/ई-/ : <+विभक्ति>। ई, ईमन, ईमनला, ईमें

स्थानसूचक /ई-/ : <_+विभक्ति>। ईकारा, ईकारा ले

3. 4. 4. 2. निकटार्थक बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<+मानव> /ये/-/ : <- विभक्ति>।

/इन्हों-/ : ने विभक्ति के साथ। इन्होनें

/इन्ह-/ : एँ विभक्ति के साथ। इन्हें

/इन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। इनको, इनसे

मा. ओ.

<+मानव> /एमान-/ : ए विभक्ति के साथ। एमाने

/एमानङक-/ : शेष विभक्तियों के साथ। एमानङकु

<-मानव>/एगुड़िक/ : <_+मानव>। एगुड़िक, एगुड़िकर

प. ओ.

<+मानव> /एमान-/ : ए विभक्ति के साथ। एमाने

/एमान-/ : शेष विभक्तियों के साथ। एमानकर

<-मानव>/एतार-/ : <_+मानव>। एतार, एतारकरमानकर

छ.

<+मानव> /ई-/ : मन विभक्ति के साथ। ईमन

/ईमन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। ईमन के, ईमन बर

<-मानव>/ईमन-/ : <_+मानव>। ईमन ला

3. 4. 4. 3. दूरार्थक एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+विभक्ति>/वह/ : <-विभक्ति>।

/उस-/ : <+विभक्ति>। उसने, उसको

स्थानसूचक /वहाँ-/ : <+विभक्ति>। वहाँ से, वहाँ का

मा. ओ.

<+मानव>/से/ : <-विभक्ति>।

/ता-ताहा/ : <+विभक्ति>। ताकु, ताहाकु

<+आदर>/ताङक-ताहाङक/ : <+विभक्ति>। ताङकु, ताहाङकु

<-मानव,+प्राणी>/सेटा/ : <_+विभक्ति>। सेटा, सेटाकु

<-प्राणी>/ताहिं-सेथिं/ : <+विभक्ति>। तहिंरु, सेथिरु

स्थानसूचक /सेटा-/ : <+विभक्ति>। सेठाकु, सेठारे

प. ओ.

<+मानव>/से/ : <-विभक्ति>।

/ता-ताहा/ : <+विभक्ति>। ताके, ताहाके

<+आदर>/ताहा-/ : <+विभक्ति>। ताहाकु

<-मानव,+प्राणी>/सेटा/ : <_+विभक्ति>। सेटा

<-प्राणी>/सेथि/ : <+विभक्ति>। सेथिरु

स्थानसूचक /सेन-/ : <+विभक्ति>। सेन, सेनिके

छ.

<_+विभक्ति>/ओ/ : <-विभक्ति>।

/ओ/ : <+विभक्ति>। ओला, ओका, ओकर, ओकरले

स्थानसूचक /ओकारा-/ : <+विभक्ति>। ओकारे ले, ओकारे के

3. 4. 4. 4. दूरार्थक बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+विभक्ति>/वे/ : <-विभक्ति>

/उन्हों-/ : ने विभक्ति के साथ। उन्होंने

/उन्ह-/ : एँ-विभक्ति के साथ। उन्हें

/उन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। उनको, उनसे

मा. ओ.

<+मानव>/सेमान/ : ए-विभक्ति के साथ। सेमाने

/सेमानङक-/ : शेष विभक्तियों के साथ। सेमानङकु

<-मानव>/सेगुड़िक-/ : <_+विभक्ति>। सेगुड़िक, सेगुड़िकु

प. ओ.

<+मानव>/सेमान/ : ए-विभक्ति के साथ। सेमाने

/सेमान--/ : शेष विभक्तियों के साथ। सेमानकु

<-मानव>/सेटा-/ : <_+विभक्ति>। सेटा, सेटामाने

छ.

<+मानव>/ओमन/ : <-विभक्ति>

/ओमन-/ : <+विभक्ति>। ओमन का, ओमन ला, ओमन ले, ओकरमनले

<-मानव>/ओमन-/ : <_+विभक्ति>। ओमन मां, ओमन में

3. 4. 4. 5. प्रश्नवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<+मानव>/कौन/ : <-विभक्ति>।

<-मानव>/क्या/ : <-विभक्ति>

<_+मानव>/किन्हें-/ : ने- विभक्ति का साथ। किन्होंने

/किन्ह-/ : एँ-विभक्ति के साथ। किन्हें

/किन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। किनको, किससे

मा. ओ.

<+मानव>/किए/ : <-विभक्ति>

/का-काहा-/ : <+विभक्ति>। काहाकु, काहार

<-मानव>/केउँटा/ : <_+विभक्ति>। केउँटा, केउँटाकु

/कअण/ : <-विभक्ति>।

<-प्राणी>/केउँथि-/ : <+विभक्ति>। केउँथिरु, केउँथिरे

/काहिं-/ : <+विभक्ति>। काहिंरे, काहिंरु

स्थानसूचक/केउँटा-/ : <+विभक्ति>। केउँठारु, केउँठारे

प. ओ.

<+मानव>/किए/ : <-विभक्ति>

/का-काहा-/ : <+विभक्ति>। काहाके, काहार्

<-मानव>/केनटा-/ : <_+विभक्ति>। केनटा, केनटाके

/काणाँ/ : <-विभक्ति>।

<-प्राणी>/केनथि-/ : <+विभक्ति>। केनथिनु, केनथिरे

स्थानसूचक/केन-/ : <+विभक्ति>। केनठानु, केनठाने, केनु

छ.

<+मानव>/कोन/ : <-विभक्ति>

/का-/ : <+विभक्ति>। का ला, काकर्

<-मानव>/कोन-/ : <_+विभक्ति>। कोनला, कोनहर

/का/ : <-विभक्ति>।

<-प्राणी>/का -/ : <+विभक्ति>। कामें

स्थानसूचक/काहाँ-/ : <+विभक्ति>। काहाँ ले, कोन कारा ले

3. 4. 4. 6. अनिश्चयवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+मानव>/कोई/ : <-विभक्ति>।

/किसी-/ : <+विभक्ति>। किसीको, किसीका, किसीसे

मा. ओ.

<+मानव>/केहि/ : <-विभक्ति>।

/काहा-/ : <+विभक्ति>। काहाकु, काहार

<-मानव>/केउँटा-/ : <_+विभक्ति>। केउँटाकु

प. ओ.

<+मानव>/किहे/ : <-विभक्ति>।

/काहा-/ : <+विभक्ति>। काहाके, काहार

<-मानव>/केनटा-/ : <_+विभक्ति>। केनटाके

छ.

<+मानव>/कोन्हों/ : <-विभक्ति>।

/का-/ : <+विभक्ति>। का ला, काकर

<-मानव>/कोन-/ : <_+विभक्ति>। कोनला

3. 4. 4. 7. अनिश्चयवाचक बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<+मानव>/कोई/ : <-विभक्ति>।

/किन्हीं/ : <+विभक्ति>। किन्हीं को, किन्हीं से

मा. ओ.

<+मानव>/केहि/ : <-विभक्ति>।

/केउँमानङक-/ : <+विभक्ति>। केउँमानङकु, केउँमानङकर

<-मानव>/केउँगुड़िक/ : <_+मानव>। केउँगुड़िक, केउँगुड़िकर

प. ओ.

<+मानव>/किहे/ : <-विभक्ति>।

/केनमान-/ : <+विभक्ति>। केनमानकु, केनमानकर

<-मानव>/केनटा-/ : <_+मानव>। केनटामाने

छ.

<+मानव>/कोन्हों/ : <-विभक्ति>।

/कोनमन-/ : <+विभक्ति>। कोनमनला, कोनमन के

<-मानव>/कोन ला-/ : <_+मानव>। केनला, कोनमन ला

3. 4. 4. 8. संबंधवाचक एकवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+मानव>/जो/ : <-विभक्ति>।

/जिस-/ : <+विभक्ति>। जिसने, जिसको

स्थानसूचक /जहाँ/ : <_+विभक्ति>। जहाँ, जहाँ से

मा. ओ.

<+मानव>/जे/ : <-विभक्ति>।	
/जाहा-/ : <+विभक्ति>।	जाहाकु, जाहार
<_+प्राणी>/जेउँटा/ : <_+विभक्ति>।	जेउँटा, जेउँटाकु
/जेउँथि-/ : <+विभक्ति>।	जेउँथिरु, जेउँथिकु
स्थानसूचक /जेउँठा/ : <+विभक्ति>।	जेउँठाकु, जेउँठारु

प. ओ.

<+मानव>/जे/ : <-विभक्ति>।	
/जाहा-/ : <+विभक्ति>।	जाहाके, जाहार्
<_+प्राणी>/जेनटा/ : <_+विभक्ति>।	जेनटा, जेनटाके
/जेनथि-/ : <+विभक्ति>।	जेनथिरु, जेनथिरे
स्थानसूचक /जेनठा-/ : <+विभक्ति>।	जेनठाने, जेनठानु

छ.

<+मानव>/जे/ : <-विभक्ति>।	
/जे-/ : <+विभक्ति>।	जेला, जेकर्
<_+प्राणी>/जोन-/ : <_+विभक्ति>।	जोनला
/जे-/ : <+विभक्ति>।	जे मां, जे में
स्थानसूचक /जोन-/ : <+विभक्ति>।	जोन कारा, जोनकारा ले

3. 4. 4. 9. संबंधवाचक बहुवचन सूचक सर्वनाम

हि.

<_+मानव>/जो/ : <-विभक्ति>।	
/जिन्हों-/ : ने- विभक्ति के साथ।	जिन्होंने
/जिन्हं-/ : एँ- विभक्ति के साथ।	जिन्हें

/जिन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। जिनको, जिनसे

मा. ओ.

<+मानव>/जेउँमान-/ : ए-विभक्ति के साथ। जेउँमाने

/जेउँमानङक-/ : शेष विभक्तियों के साथ। जेउँमानङकु

<-मानव>/जेउँगुड़िक/ : <_+विभक्ति>। जेउँगुड़िक, जेउँगड़िकर

प. ओ.

<+मानव>/जेनमान्-/ : ए-विभक्ति के साथ। जेनमाने

/जेउँमान-/ : शेष विभक्तियों के साथ। जेनमानकु

<-मानव>/जेनटा/ : <_+विभक्ति>। जेनमानकर, जेनटामाने

छ.

<+मानव>/जोन-/ : -मन-विभक्ति के साथ। जोनमन

/जोनमन-/ : शेष विभक्तियों के साथ। जोनमन ला

<-मानव>/जोन-/ : <_+विभक्ति>। जोनमन के

3. 4. 4.10. निजवाचक सर्वनाम

हि.

/आप/ : <-विभक्ति>।

/अप-/ : संबंध विभक्ति के साथ/ना, ने, नी/ के साथ।
अपना, अपने, अपनी

मा. ओ.

/निजे-आपे/ : <-विभक्ति>।

/निज-आपणा/ : <+विभक्ति>। निजकु-आपणाकु

प. ओ.

/निजे-आपे/ : <-विभक्ति>।

/निज-/ : <+विभक्ति>। निजकु, निजके

छ.

/खुद-आप/ : <-विभक्ति>।

/खुद-आप-/ : <+विभक्ति>। खुदला, आपला

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के पुरुषों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता है।

3. 5. पुरुष के वचन

अब तक हम पुरुषवाचक सर्वनाम, उनकी रुपावली, पुरुष की संकल्पना, उनका वर्गीकरण और उनका रुपिमिक विश्लेषण आदि पर अलग-अलग अनुच्छेदों में विचार कर चुके हैं। अब हम पुरुष में वचन शीर्षक के अन्तर्गत मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में पुरुष की वचन व्यवस्था पर प्रकाश डालेंगे।

पुरुषवाचक सर्वनामों की वचन व्यवस्था संज्ञा से सर्वथा भिन्न है। हिन्दी का एक उदाहरण लिया जा सकता है। 'हम' को 'मैं' का बहुवचन उस अर्थ में नहीं कह सकते जिस अर्थ में 'लड़का' का बहुवचन 'लड़के' हैं। कारण मैं+के=हम नहीं है। बल्कि मैं+एक या अनेक व्यक्ति हैं। दूसरे शब्दों में 'हम', 'मैं' का बहुवचन नहीं है बल्कि एक ऐसा शब्द है जो 'मैं' का सूचक है। किन्तु बहुवचन रूप भी है। 'हम' में वक्ता तो अन्तर्भूत होता ही है, किन्तु श्रोता को भी ग्रहण किया जा सकता है और नहीं भी। महारणा के अनुसार इस दृष्टि से इसके दो भेद हो सकते हैं।[29] वो दो भेद निम्नलिखित हैं-

1. अंतर्ग्राही (Inclusive) वक्ता +श्रोता+.....

2. बहिष्कारी (Exclusive) वक्ता-श्रोता+.....

' जब किसी श्रोता वर्ग को सामूहिक रूप से संबोधित किया जाता है तब 'तुम'

सही अर्थ में 'तू' की बहुलता की सूचना देता है। परन्तु जब सम्मुखस्थ श्रोता या श्रोताओं के अतिरिक्त किसी भी उपस्थित या अनुपस्थित व्यक्ति या व्यक्तियों का संकेत इससे मिलता है तो इस अर्थ में 'तुम', 'तू' का बहुवचन नहीं रहता और यहाँ भी 'तुम' का अन्तर्ग्राही और बहिष्कारी अभिलक्षणों के अनुसार प्रभेद किया जा सकता है।

अब हम प्रत्येक पुरुष के वचन के संबंध में तीनों भाषाओं की पुरुष व्यवस्था पर संक्षेप में विचार करेंगे।

3. 5.1. उत्तम और मध्यम पुरुष के वचन

	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
उ. पु. :	मैं<1>, हम<1+>	मुँ<1>, आमे<1+>	मुइँ<1>, आमे<1+>	में<1>, हम<1+>
म. पु. :	तू<2>, तुम<2+>	तु<2>, तुमे<2+>	तुइँ<2>, तुमे<2+>	तें<2>, तुमन<2+>

इन भाषाओं में एकवचन में भी आदर के अर्थ में (आमे, तुमें, आपण-हमन, तुमन, आपमन) का प्रयोग होता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में बहुवचन सूचक 'सबु' तथा छत्तीसगढ़ी में 'सब' का प्रयोग होता है।

	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
<1+>	हम लोग, हम सब	आमेमाने, आमेसबु	आमेमाने, आमेसबु	हमन, हमन सब
<2+>	तुम लोग, तुम सब	तुमेमाने, तुमे सबु	तुमेमाने, तुमे सबु	तुमन, तुमन सब
<2आ+>	आपलोग	आपणमाने	आपणमाने	आपमन

3. 5. 2. अन्य पुरुष के वचन

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में एक वचन सूचक अन्य पुरुष शब्द के साथ बहुवचन सूचक प्रत्यय जोड़कर अन्य पुरुष बहुवचन रूप बनाया जाता है-

	हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
<3+>	वह<3>वे	से <3> सेमाने, सेगुड़िक	से<3>सेमाने, सेटामाने	ओ<3>ओमन, ओसब
<3+>	यह<3>य	ए<3>एमाने, एगुड़िक	इ<3>इमाने, इटामाने	ई<3>ईमन, ई सब

इन भाषाओं में प्रश्नवाचक आदि सर्वनामों के सविभक्ति रुपों के साथ बहुवचन प्रत्यय जोड़कर बहुवचन बनाया जाता है-

हि.

कौन <_+एक>, कोई<_+एक>, जो <_+एक>

किस-<+एक> किन-<-एक>

किसी-<+एक> किन्हीं-<-एक>

जिस- <+एक> जिन-<-एक>

मा. ओ.

किए<+एक> केउँमाने, केउँगुड़िक <-एक>

केहि <_+एक>

जे+एक>जेउँमाने, जेउँगुड़िक

प. ओ.

किए<+एक> केनमाने, केनटामाने <-एक>

किहे<_+एक>

जे<+एक> जेनमाने, जेनटामाने

छ.

कउन<+एक> कउनमन, कामन<-एक>

कोन्हों<_+एक>

जो<+एक> जोउनमन, जोनमन

3. 6. पुरुष के लिंग

लिंग की दृष्टि से संज्ञा और सर्वनाम में कोई अंतर नहीं है। अर्थात् संज्ञा के लिए जिस पुरुष वाचक सर्वनाम का प्रयोग होता है, वह उस संज्ञा का लिंग ग्रहण करता है। इस दृष्टि से प्रत्येक भाषा में लिंग के अनुसार पुरुषवाचक सर्वनामों के रुपों में भिन्नता हो

सकती है। उत्तम और मध्यम पुरुष उक्ति की स्थिति में उपस्थित रहने के कारण इनका लिंग वक्ता या श्रोता से प्रत्यय स्पष्ट रहता है। अतः उत्तम और मध्यम पुरुष प्रायः सभी भाषाओं में उत्तम और मध्यम पुरुष के लिंग भेद अलग-अलग रूप नहीं पाया जाता है।

4. कारक

कारक प्रमुख व्याकरणिक संवर्गों में से एक है। संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ उनका (संज्ञा या सर्वनाम) संबंध सूचित हो उसे 'कारक' कहते हैं। कारकों के बोध के लिए संज्ञा या सर्वनाम के आगे जो शब्द या शब्दांश प्रयुक्त होता है, जिससे उसका संबंध क्रिया के साथ निर्धारित होता है, उसे परसर्ग या विभक्ति कहते हैं। विद्वानों ने कारक को इस तरह से परिभाषित किया है-

"संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से इसका संबंध वाक्य के किसी दूसरे शब्द से प्रकाशित होता है, उसे कारक कहते हैं"।[30]

बाजपेयी जी के अनुसार-" क्रिया से सीधा संबंध रखनेवाले पदार्थ या प्राणी कारक है"।[31]

इन परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि कारक वह व्याकरणिक संवर्ग या कोटि है, जो क्रिया के साथ संज्ञा या सर्वनाम को ज्ञापित करती है। प्रत्येक भाषा में किसी न किसी रूप में कारक व्यवस्था का स्वरुप देखा जा सकता है। इससे हमें अभीष्ट अर्थ की प्राप्ति होती है। कारक रहित वाक्य की कल्पना नहीं की जा सकती है। एक हिन्दी का उदारहण लिया जा सकता है-

राज पढ़ता है।

इस वाक्य में कारक का अस्तित्व है। यद्यपि इसमें कारक द्योतक चिन्ह नहीं है। किन्तु कर्ता 'राज', 'पढ़ता है' क्रिया के साथ कर्ता कारक बोध कराती है। एक दूसरा उदाहरण लेते हैं-

राज ने राम को किताब दी।

इस वाक्य में 'ने' और 'को' चिन्हों से कारकीय संबंध स्पष्ट होता है। अतः कारक वाक्य

संरचना की महत्वपूर्ण व्याकरणिक संवर्ग है।

4.1. कारकों और विभक्तियों का नामकरण

कारक अर्थ पर आधारित है। पारंपरिक व्याकरण में अर्थ के आधार पर कारकों के नाम निम्नलिखित दिए गए हैं-

1. कर्ता 5. अपादान
2. कर्म 6. संबंध
3. करण 7. अधिकरण
4. संप्रदान 8. संबोधन

मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में भी यही नाम स्वीकार्य है। अब हम इन तीनों भाषाओं में प्रयुक्त विभक्तियों का विश्लेषण करेंगे।

4. 2. विभक्ति

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के कारकों के लिए निम्नलिखित विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं-

कारक	हि.	मा. ओ.[32]	प. ओ.[33]	छ.[34]
कर्ता	शून्य/ने	शून्य	शून्य/टा	शून्य/हर
कर्म	को	कु	के	का, ला
करण	से	रे, द्वारा, देइ, थिरे	दुआरा, थिं, एँ, से, के	ले, से, में
सम्प्रदान	के, लिए	कु, पाइँ	के, लागि	का, ला, बर, खातिर
अपादान	से	रु, ठु, ठारु, थिरु	उँ, नु, थुँ	ले, से
संबंध	का, के, की	र	अर्, र	के
अधिकरण	में, पर	रे, ठि, ठारे, थिरे	एँ, न, ने, थि	मं, मां, मंह, में, उपर
संबोधन	हे, अरे	ए, ओ	ए, ओ	ए, अरे, ओ

प्रस्तुत अध्ययन में यही नाम स्वीकार किए गए हैं। पारंपरिक व्याकरण में सामान्यतः एक कारक के लिए एक विभक्ति मान्य है। किंतु प्रयोग में इस व्यवस्था के व्यतिक्रम मिलते हैं। तीनों भाषाओं की व्याकरण पुस्तकों में जितनी भी विभक्तियों का

उल्लेख मिलता है, उनसे कुछ अधिक संख्यक घटक तत्व विभक्ति का कार्य करते हैं। भाषाविद इन्हें 'परसर्गीय पदावली' नाम देते हैं। ये परसर्गीय पद कभी-कभी मूल विभक्तियों के साथ परिपूरक वितरण में आते हैं। अतः इन्हें संबंधित विभक्तियों का संरुप माना जा सकता है।

प्रयोग की अर्थगत विविधता एवं बहुलता के आधार पर तीनों भाषाओं के निम्नलिखित विभक्ति रुपिम माने जा सकते हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
/$/	/$/	/$/	/$/
/ने/	-	-	-
-	/ए/	/ए/	-
{ को}1	{कु}1	{के}1	{ला}1
{ को}2	{कु}2	{के} 2	{ला}2
{से}1	{रे}1	{रे}1	{ले}1
{से}2	{रु}	{नुँ}	{ले}2
{में}	{रे} 2	{ रे}2	{में}
{का}	{र}	{र}	{के}

4. 2.1. विभक्तियों के संरुप

इन तीनों भाषाओं की विभक्तियों के एकाधिक संरुपों का प्रयोग मिलता है। उनके अतिरिक्त कुछ परसर्गीय पद भी कुछ विभक्तियों के साथ परिपूरक वितरण में आने के कारण उन्हें संरुप माना जा सकता है। यहाँ पर मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के समानान्तर विभक्तियों के संरुपों का उल्लेख किया जा रहा है।

4. 2.1.1. विभक्तियों का वितरण

4. 2.1.1.1. मा. ओ. - /ए/, प. ओ. - /ए/, छ. - /एक/ का वितरण

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ की /ए/ वास्तव में 'कारकबोधयत्री' विभक्ति है। इससे कारक के साथ-साथ वचन की भी सूचना मिलती है। इसका प्रयोग वचन सूचक प्रत्यय एवं पूर्वाश्रयी निर्देशक के साथ होता है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
एक बैल	बलद गोटिए	बलद गुटे	बइला एकठि
एक आदमी	लोक जणे	लोक जणे	एक झन् मइनसे
बच्चे	पिला माने	पिला माने	लइका मन
एक टुकड़ा कागज	कागज खण्डिए	कागज खड़े	कागज एक कुटि
एक बच्चा	पिला टिए	पिलाटे	लइका गोटे
बैल	बलद गुड़िए	बलद माने	बइला मन

इन वाक्यों में वचन सूचक प्रत्यय मानक ओड़िआ के गोटा, खण्ड़, जण, मान तथा पश्चिमी ओड़िआ के गुटे, जण, मान में /ए/ का प्रयोग हुआ है। किन्तु छत्तीसगढ़ी में ऐसा प्रयोग नहीं है। इसके स्थान पर संख्यावाचक एकठि, एक झन, मन, गोटे का प्रयोग होता है।

4. 2.1.1. 2. मा. ओ. - /कु1/, प. ओ. - /के/, छ. - /ला/

मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के सविभक्तिक संज्ञा रूप एंव आम-, तुम-, तहा-, जाहा-, काहा- आदि सर्वनाम रुपों के साथ क्रमशः /कु/ और /के/ का प्रयोग होता है। छत्तीसगढ़ी के हम, तुम, ओ, जा, का आदि सर्वनामों तथा सविभक्तिक संज्ञा रूप में /ला/ का प्रयोग होता है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
सीता को	सीताकु	सीताके	सीताला
हमको	आमकु	आमके	हामन ला

बैल को	बलद कु	बलद के	बइला ला
उस को	ताहाकु	ताहाके	ओ ला

4. 2.1.1. 3. मा. ओ. - /कि/, प. ओ. - /के/, छ. - /ला/

मानक ओड़िआ में इकारांत एवं ईकारांत संज्ञा शब्दों के साथ विकल्प से /कि/ का प्रयोग होता है, लेकिन पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में /के/ और /ला/ का प्रयोग होता है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मामी को	माइकु~माइकि	माइ के	मामि ला
भाई को	भाइकु~भाइकि	भाइ के	भाइ ला

4. 2.1.1. 4. /ते/, /ते/, /ला/

सर्वनाम रुपों के साथ

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मुझे	मोते	मते	मोला
तुझे	तोते	तते	तोला

4. 2.1.1. 5. /ठाकु~ठिकि/, /निके/, /काराला/

स्थानसूचक सर्वनामों एवं इसी अर्थ में प्रयुक्त सविभक्तिक संज्ञा रुपों के साथ-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
यहाँ	एठाकु	इनिके	इकाराला
बहन के पास	भउणि ठिकि	बहेन् निके	बहिनि काराला
स्कूल के पास	स्कूल ठिकि	स्कूल निके	स्कूल काराला

4. 2.1.1. 6. सविभक्तिक संज्ञा रूप एंव सर्वनामों के साथ

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
दुकान तक	दोकान पर्यन्त	दुकान जाए	दुकान तक
तुझ तक	तोर जाएँ	तोर जाए	तोर तक

4. 2.1.1. 7. /कु2/, /के/, /ले/ का वितरण

4. 2.1.1. 7.1. /पाइँ/, /लागि/, /बर/

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
गोपाल के लिए	गोपाल पाइँ	गोपाल लागि	गोपाल बर

4. 2.1.1. 7. 2. /रे/, /रे/, /मां/ का वितरण

अप्राणिवाचक संज्ञा रूप एंव सर्वनाम रुपों के साथ।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
पैर से	गोड़ रे	गोड़ रे	गोड़ मां

4. 2.1.1. 7. 3. /द्वारा/, /दुआरा/, /से/

सभी सविभक्तिक संज्ञा एंव पुरुषवाचक सर्वनामों के सविभक्तिक रुपों के साथ।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
राम से	राम द्वारा	राम दुआरा	राम से

4. 2.1.1. 7. 4. /जरिआरे/, /थिं/, /में/

सविभक्तिक संज्ञा एवं सर्वनाम रूप के साथ।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
डाक से	डाक जरिआरे	डाक थिं	डाक में
परिवार सहित	परिवार सहित	परिवार सांगे	परिवार के संग

4. 2.1.1. 8. /रे2/, /न/, /कारा/ वितरण

प्राणिवाचक संज्ञा, उसके स्थान पर प्रयुक्त सर्वनाम के सविभक्तिक रूप एवं स्थानवाचक सर्वनाम के सविभक्तिक रूप एवं स्थानवाचक सर्वनामों के साथ। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
गोपाल में	गोपाल ठारे	गोपाल न	गोपाल कारा
मुझ में	मोठारे	मोर न	मोर कारा
वहाँ पर	सेठारे	सेन	वोकारा

4. 2.1.1. 8. 1. /भितरे-उपरे/, /भितरे-उपरे/, /भितर में-उपर में/

संज्ञा एवं सर्वनामों के सविभक्तिक रुपों के साथ। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
घर में	घर भितरे	घर भितरे	घर भितरमें
छत पर	छात उपरे	छात उपरे	छत उपर में

4. 2.1.1. 9. /रु/ वितरण

4. 2.1.1. 9.1. /रु/, /नु/, /ले/

इसकी वितरण व्यवस्था /रे/ के अनुरुप होता है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
आकाश से	आकाशरु	आकाशनु	आकाश ले
पेड़ से	गछरु	गछनु	रुक ले

4. 2.1.1. 9. 2. /ठारु~ठूँ/, /नु/, /ले/

इसकी वितरण व्यवस्था {रे2} के समान होता है-

तुलना के अर्थ में अप्राणीवाचक शब्दों के साथ-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
राम से	राम ठु~ठारु	राम नु	राम ले
मुझ से	मो ठु~ठारु	मोर नु	मोर ले

4. 2.1.1. 9. 3. /भितरु/ , /ऊपरु/, /भितरु/ , /ऊपरु/, /भितर में-ऊपर ले/

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
घर में से	घर भितुरु	घर भितरु	घर भितर ले
तुझ पर से	तोर ऊपरु	तोर ऊपरु	तोर ऊपर ले

4. 2.1.1. 10. {र} का वितरण

/र/ सविभक्तिक संज्ञा एवं सर्वनामों रुपों के साथ। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
जगा का	जगार	जगार	जगा के
हमारा	आमर	आमर	हामर

4. 2.1.1. 10. 1. /ठार~ठिर~ठिकार/

स्थानवाचक सर्वनामों के साथ। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वहाँ का	सेठार~सेठिर~सेठिकार	सेनिर	वोकार के
कहाँ का	केउँठिकार	केनिर	कोनकारा के

4. 2. 2. विभक्तियों का प्रयोग

4. 2. 2.1. कर्ता कारक

क्रिया में जिस वस्तु के विषय में विधान किया जाता है, उसे सूचित करनेवाले संज्ञा के रूप को कर्ता कारक कहते हैं।

हि.	राम घर जाएगा।
मा. ओ.	राम घर जिब।
प. ओ.	राम घर् जिबा।
छ.	राम घर् जाही।

इन वाक्यों में 'राम' कर्ता कारक है, तथा इसमें किसी भी विभक्ति चिन्हों का प्रयोग नहीं हुआ है। इन भाषाओं में निश्चित वस्तु, व्यक्ति या जीव के लिए क्रमशः टी, टा और हर का प्रयोग होता है।

4. 2. 2. 2. कर्म कारक

जिस वस्तु पर क्रिया पर के व्यापार का फल पड़ता है, उसे सूचित करनेवाले संज्ञा के रूप को कर्म कारक कहते हैं।

हि.	सीता को घर जाना है।
मा. ओ.	सीता कु घर जिबार अछि।

प. ओ. सीता के घर के जिबार अछे।

छ. सीता ला घर जाएबर है।

इन वाक्यों में 'घर' कर्म है तथा क्रमशः को, कु, के और ला परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 3. करण कारक

करण कारक संज्ञा के उस रूप को कहते हैं, जिससे क्रिया के साधन का बोध होता है।

हि. गोपाल चमच में खाता है।

मा. ओ. गोपाल चामच रे खाए।

प. ओ. गोपाल चामच थि खाइसि।

छ. गोपाल चामच में खाथे।

इन वाक्यों में चमच करण कारक है और में, रे, थि और में परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 4. संप्रदान कारक

जिस वस्तु के लिए कोई क्रिया की जाती है, उसकी वाचक संज्ञा के रूप को संप्रदान कारक कहते हैं।

हि. राम सीता को फूल देता है।

मा. ओ. राम सीताकु फूल दिए।

प. ओ. राम सीताके फूल देसि।

छ. राम सीता ला फूल देथे।

इन वाक्यों में सीता संप्रदान कारक है तथा को, कु, के और ला परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 5. अपादान कारक

संज्ञा के उस रूप को अपादान कारक कहते हैं, जिससे क्रिया के विभाग की अवधि सूचित होती है।

हि. हाथ से किताब गिर गई।

मा. ओ. हात रु बहि पड़ि गला।

प. ओ. हात नु बहि पड़ि गला।

छ. हांथ ले किताब गिर गिस।

इन वाक्यों में हाथ अपादान कारक है तथा से, रु, नु और ले परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 6. संबंध कारक

संज्ञा के जिस रूप से उसकी वाच्य वस्तु का संबंध किसी दूसरी वस्तु के साथ सूचित होती है, उस रूप को संबंध कारक कहते हैं।

हि. गीता का भाई राम है।

मा. ओ. गीता र भाई राम अटे।

प. ओ. गीता र भाई राम आए।

छ. गीता के भाई राम हवै।

इन वाक्यों में का, र, र और के परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 7. अधिकरण कारक

संज्ञा का वह रूप जिससे क्रिया के आधार का बोध होता है, उसे अधिकरण कारक कहते हैं।

हि. पानी में मछली है।

मा. ओ. पाणी रे माछ अछि।

प. ओ. पाएन् थिं झुरि अछे।

छ. पानी में मछरी है।

इन वाक्यो में में, रे, थिं और में परसर्ग हैं।

4. 2. 2. 8.संबोधन कारक

संज्ञा के जिस रूप से किसी को बुलाना या पुकाराना सूचित होता है, उसे संबोधन कारक कहते हैं।

हि. ए लड़का।

मा. ओ. ए पिला।

प. ओ. ए पिला।

छ. ए टूरा।

इन वाक्यों में 'ए' संबोधन कारक के चिह्न है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के नामिक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। नामिक संवर्गों के अन्तर्गत लिंग, वचन, पुरुष और कारक आते हैं। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में दो वचनवाली व्यवस्था है-एकवचन और बहुवचन। इन तीनों भाषाओं में भी दो ही वचन हैं, जो सामान्यतः वचन सूचक प्रत्यय के प्रयोग के बिना संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन की सूचना देते हैं। बहुवचन सूचक प्रत्ययों द्वारा एकवचन सूचक प्रातिपादिकों का रुपांतरण किया जाता है। कभी-कभी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में कुछ एकक सूचक प्रत्ययों, शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है, जो एकवचन संज्ञा प्रातिपादिकों के साथ प्रयुक्त होता है। बहुवचन सूचक प्रत्ययों के अतिरिक्त समूहवाचक शब्दों, संख्या एवं परिमाणवाचक शब्दों तथा प्रातिपादिक एवं विशेषण की द्विरुक्ति द्वारा भी बहुवचन की सूचना भी दी जाती है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग सामान्यतः अप्राणीवाचक एकवचन संज्ञा के साथ होता है। लेकिन छत्तीसगढ़ी में मूल संज्ञा के पूर्व /-एक/ का प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त मानक ओड़िआ में /-ए/ की भाँति /-क/ का प्रयोग एकक सूचना के लिए किया जाता है, जो कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग संज्ञा के साथ होने से एक निश्चित परिमाण की सूचना देता है-संज्ञा+परिमाण। छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति /-ए/ का प्रयोग उसी रुप में होता है लेकिन ये उसके विपरीत होता है-परिमाण+संज्ञा। इसके अतिरिक्त मानक ओड़िया में (जण, खन्ड़े, गोटे आदि), पश्चिमी ओड़िया में (जण, खड़ें, गुटे आदि) और छत्तीसगढ़ी में (एक, एकठन्, एकठि आदि) का प्रयोग एकवचन संज्ञा के साथ किया जाता है। इन तीनों भाषाओं में बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग अर्थ पर आधारित है। मानक ओड़िआ में (माने, गुड़ा, गुड़िक, जाक, मन्दा आदि), पश्चिमी ओड़िआ में (माने, गुड़ा, जाक, सभे, जह, गुरदु, खोब आदि) और छत्तीसगढ़ी में (मन, सब, जमो आदि)

बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

भाषा में लिंग एक प्रमुख व्याकरणिक संवर्ग है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लिंगों का विभाजन जीववैज्ञानिक और अर्थ के आधार पर होता है तथा दो लिंग मिलते हैं-पुलिंग और स्त्रीलिंग। मानक ओड़िआ में (अक, आर, आरि, अलि, इआ, इआ, उआ, उरिआ, कार, खोर, दार, बाला आदि) पुलिंग सूचक प्रत्यय हैं। पश्चिमी ओड़िआ में (अक्, आ, आर, आरि, आलि, इआ, उआ, इहा, एइ, दार्, निआँ, बाला आदि) पुलिंग सूचक प्रत्यय हैं तथा छत्तीसगढ़ी में आक्, आर्, इया, एरा, दार्, हार्, वान् आदि पुलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय हैं। इन भाषाओं में यथाक्रम (मानक ओड़िआ-आणी, ई, उणी, णई आदि), (पश्चिमी ओड़िआ-इ, एइ, एन् आदि), (छत्तीसगढ़ी-ई, इन्, निन् आदि) स्त्रीलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय हैं। इन तीनों भाषाओं के आकारांत शब्द प्रायः पुलिंग होते हैं और ईकारांत शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। उभय लिंग संज्ञाओं का लिंग निर्धारण करते समय मानक ओड़िआ में (अण्डिरा-माई), पश्चिमी ओड़िआ में (अँररा-माई) और छत्तीसगढ़ी में (एँड़रा-माई) का प्रयोग किया जाता है। इन तीनों भाषाओं में कर्ता के लिंग का प्रभाव क्रिया पर नहीं पड़ता है।

वाक्य संरचना के केन्द्र में पुरुष भी एक अंश है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति तीन पुरुष हैं-उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष। मानक ओड़िआ में मुँ, तु, से, पश्चिमी ओड़िआ में मुइँ, तुइँ, से और छत्तीसगढ़ी में में, तें, ओ पुरुषवाचक सर्वनाम हैं। मानक ओड़िआ में उत्तम और मध्यम पुरुष बहुवचन (आमें और तुमें) का आदर के अर्थ में एकवचन का प्रयोग होता है। इसेक समानान्तर पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में क्रमशः (आमें, तुमें) और (हमन्, तुमन्) का प्रयोग होता है।

कारक प्रमुख व्याकरणिक संवर्गों में से एक है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में अन्य भाषाओं की भाँति सात कारक हैं और इनके साथ अलग-अलग कारक चिन्हों का प्रयोग होता है। इन भाषाओं में कर्ता कारक के साथ किसी भी विभक्ति का प्रयोग नहीं होता है। कर्म कारक के साथ मानक ओड़िआ में 'कु', पश्चिमी ओड़िआ

में 'के' और छत्तीसगढ़ी में 'का', 'ला' विभक्तियों का प्रयोग होता है। करण के साथ मानक ओड़िआ में रे, द्वारा, देइ, पश्चिमी ओड़िआ में दुआरा, थिं और छत्तीसगढ़ी में ले, से, में का प्रयोग होता है। संप्रदान कारक के साथ मानक ओड़िआ में कु, पाइँ पश्चिमी ओड़िया में के, लागि और छत्तीसगढ़ी में का, ला, बर आदि का प्रयोग होता है। अपादान कारक के साथ मानक ओड़िआ में रु, ठु, ठारु पश्चिमी ओड़िआ में उँ, नु और छत्तीसगढ़ी में ले, से का प्रयोग होता है। संबंध कारक के साथ मानक ओड़िआ में र, पश्चिमी ओड़िआ में अर्, र और छत्तीसगढ़ी में के का प्रयोग होता है। अधिकरण कारक के साथ मानक ओड़िआ में रे, ठि, ठारे, पश्चिमी ओड़िआ में एँ, न, थि और छत्तीसगढ़ी में मं, मां, उपर आदि विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में प्रयुक्त विभक्तियों के अनेक संरुप भी हैं। अगले अध्याय में इन भाषाओं के क्रियापरक संवर्गों का अध्ययन किया जाएगा।

संदर्भ

1. वर्मा, रामलाल-हिन्दी असमिया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-3
2. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण-पृ. सं.-110
3. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-7
4. सेन, सुकुमार-तुलनात्मक पालि प्राकृत व्याकरण-पृ. सं.-11
5. महापात्र, बिजय प्रसाद-प्रचलित ओड़िआ भाषार एक व्याकरण-पृ. सं.-62
6. पाणीग्राही, नीलमाधव एवं त्रिपाठी, प्रफुल्ल-समलपुरी कोसलि व्याकरण पृ. सं.-24
7. शेष, शंकर-छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन-पृ. सं.-132
8. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-14
9. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-15
10. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-18
11. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-33
12. महापात्र, बिजय प्रसाद-प्रचलित ओड़िआ भाषार एक व्याकरण-पृ. सं.-62
13. पाणीग्राही, नीलमाधव एवं त्रिपाठी, प्रफुल्ल-समलपुरी कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-25
14. शेष, शंकर-छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन-पृ. सं.-133
15. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-50
16. शेष, शंकर-छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन-पृ. सं.-133
17. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-50
18. सक्सेना, बाबूराम-सामान्य भाषाविज्ञान-पृ. सं.-135-136
19. चटर्जी, सुनिती सुमार-ओरजिन एन्ड डेवलपमेन्ट आफ् बेन्गली लैंग्वैज-पृ. सं.-720
20. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-50-51
21. महापात्र, बिजय प्रसाद-पण्डित नीलकंठङक ओड़िआ भाषातत्व-पृ. सं.-153
22. पाणीग्राही, नीलमाधव एवं त्रिपाठी, प्रफुल्ल कुमार-समलपुरी कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-23
23. जैन, श्रीमती साधना कान्तिकुमार-छत्तीसगढ़ी और खड़ीबोली के व्याकरणों का तुलनात्मक अध्ययन-पृ. सं.-107

24. वर्मा, सत्यकाम-व्याकरण की दार्शनिक भूमिका-पृ. सं.-115

25. देशमुख, अम्बादास-हिन्दी और मराठी का व्याकरण-पृ. सं.-158

26. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-68

27. देशमुख, अम्बादास-हिन्दी और मराठी का व्याकरण-पृ. सं.-162

28. जैन, श्रीमती साधना कान्तिकुमार-छत्तीसगढ़ी और खड़ीबोली के व्याकरणों का तुलनात्मक अध्ययन-पृ.सं-112

29. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-80

30. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-216

31. बाजपेयी, किशोरीदास-हिन्दी शब्दानुशासन-पृ. सं.-136-137

32. महापात्र, बिजय प्रसाद-प्रचलित ओड़िआ भाषार एक व्याकरण-पृ. सं.-80

33. पाणीग्राही, नीलमाधव एवं त्रिपाठी, प्रफुल्ल कुमार-समलपुरी कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-41-42

34. जैन, श्रीमती साधना कान्तिकुमार-छत्तीसगढ़ी और खड़ीबोली के व्याकरणों का तुलनात्मक अध्ययन-पृ. सं.-98

चतुर्थ अध्याय

क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति)

पिछले अध्याय में मैंने नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष और कारक) का विश्लेषण किया है। प्रस्तुत अध्याय में क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति) का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे।

प्रत्येक भाषा में वाक्य को ही भाषा की प्रमुख इकाई माना जाता है। वाक्य के कई अंश होते हैं, किन्तु वाक्य का अंश 'क्रिया' है। वास्तव में क्रिया ही भाषिक व्यवहार का केन्द्र बिन्दु होती है। क्रिया के बिना वाक्य अधूरा होता है, अर्थात् क्रिया-विहीन वाक्य की कल्पना नहीं कर सकते। सामान्यत: वाक्य के सारे शब्द क्रिया से संबद्ध होते हैं, किन्तु वाक्य में क्रिया का संबंध काल, वृत्ति और पक्ष इन तीन व्याकरणिक संवर्गों से निकटता है। क्रिया के द्वारा ही किसी काल विशेष की सूचना मिलती है, क्रिया किसी वृत्ति में रहती है तथा उसमें पूर्ण या अपूर्ण पक्ष होते हैं।

1. काल

क्रिया के जिस रूप से क्रिया-व्यापार के घटित होने के समय की सूचना मिलती है, उसे 'काल' कहा जाता है। काल वह समयवाची तत्व है, जिसमें क्रिया घटित होती है। यह कार्य समय का बोध कराता है। काल कोटि की सत्ता सामान्यत: क्रिया रूपों द्वारा व्यक्त होती हैं। अर्थात् वाक्य संरचना में इसका अस्तित्व क्रिया रुपों के घटकों से व्याप्त रहता है। काल और क्रिया का अभिन्न संबंध है। 'काल' की यह धारणा यादृच्छिक है, जो विभिन्न संकेतों द्वारा भाषा विशेष में अभिव्यक्त होती है। हमारा तात्पर्य इसी 'काल' से है जो व्याकरणिक कोटि से संबंध रखता है। अत: इस काल कोटि के अंतर्गत तीन कालों की धारणा विश्व के विद्वान स्वीकार करते हैं। ये तीन काल हैं-

1. भूतकाल
2. वर्तमानकाल

3. भविष्यत् काल

1.1. वर्तमान काल

भाषा के संदर्भ में काल मापन का केन्द्र बिन्दु वर्तमान काल है। कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भूतकाल के अंत और भविष्यत काल के आरंभ बीच का कोई भी समय वर्तमान काल कहलाता है"।[1] वर्तमान काल की सीमा कैसे निर्धारित करें? क्योंकि वर्तमान काल एक क्षण का भी होता है और अनन्त समय का भी। इसी समस्या को रवीन्द्र श्रीवास्तव ने इस प्रकार स्पष्ट किया है-"वर्तमान की सीमारेखा को निश्चित करना कठिन है, क्योंकि इसकी स्थिति धूप-छावँ के समान है, जहाँ एक ओर भूत तथा दूसरी ओर भविष्यत् होता है। वर्तमान की स्थिति ज्यामितिक शास्त्र के बिन्दु के समान है"।[2] इससे स्पष्ट है कि सैद्धान्तिक स्तर पर वर्तमान काल की सीमारेखा को निश्चित करना एक समस्या है। किन्तु व्यावाहारिक स्तर पर देखा जाता है कि वर्तमान काल का अस्तित्व एक निश्चित कालावधि तक फैला रहता है। इसे हम 'वर्तमान काल' कह सकते हैं। अत: वर्तमान काल से हमारा तात्पर्य क्रिया व्यापार की वर्तमान घटना से है, जो लेखक या वक्ता के बोलने अथवा लिखने के आधार पर निर्धारित होती है। इस दृष्टि से वर्तमान एक क्षण का भी हो सकता है तथा लम्बी अवधि का भी। सामान्यत: प्रत्येक भाषा में वर्तमान काल के चार भेद होते हैं। जिनका विवेचन निचे किया जा रहा है-

1.1.1. सामान्य वर्तमान काल

क्रिया के जिस रूप से वर्तमान काल की क्रिया का सामान्य रूप से होना पाया जाए, उसे सामान्य वर्तमान काल कहा जाता है। जैसे-

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाता हूँ।	मूँ जाएँ।	मुइँ जाएसिं।	में जाथ हौं।
तू जाता है।	तू जाउ।	तुइँ जाएसु।	तें जाथ हस।
वह जाता है।	से जाए।	से जाएसि।	ओ जात हय।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम जाते हैं।	आमें जाउँ।	आमें जाएसुँ।	हमन जाथन।
तुम जाते हो।	तुमे जाअ।	तुमें जाएस।	तुमन जाथ।
वे जाते हैं।	सेमाने जाआन्ति।	सेमाने जाएसन।	ओमन जाथें।

उपरोक्त उदाहरणों से हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के सामान्य वर्तमान काल में क्रिया रचना की तुलनात्मक स्थिति को इस प्रकार दिखाया जा सकता है-

हि.-धातु+त्+लिंग, वचन प्रभावित प्रत्यय आ, ई, ए+सहायक क्रिया 'होना' का कोई रुप।

सूत्र - धातु+त्+आ, ई, ए+हूं, है, हो, हैं।

मा. ओ. - धातु+ए+वचन, पुरुष प्रभावित प्रत्यय एँ, उ, ए, अ, न्ति।

सूत्र - धातु+ए+एँ, उ, ए, अ, न्ति।

प. ओ. - धातु+एस्+वचन, पुरुष प्रभावित इ, उ, उँ, अ।

सूत्र - धातु+एस+इ, उ, उँ, अ।

छ. - धातु+थ्+वचन, पुरुष प्रभावित प्रत्यय अ, अँ, ए।

सूत्र - धातु+थ्+अ, अँ, ए।

सामान्य वर्तमान काल के बहुवचन में हिन्दी की सकर्मक अकर्मक दोनों प्रकार की क्रिया कर्ता के लिंग से प्रभावित होती है, जबकि इन तीनों भाषाओं में इस काल के एकवचन या बहुवचन में क्रिया सकर्मक हो या अकर्मक हो कर्ता के लिंग का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है तथा तीनों भाषाओं में असमानता भी है।

1.1. 2. अपूर्ण वर्तमान काल

क्रिया के इस रूप से यह सूचित होता है कि क्रिया चालू है या अपूर्ण अवस्था में है। क्रिया का व्यापार चल रहा है। जैसे-

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं कर रहा हूँ।	मुँ करुछि।	मुइँ करुछें।	में करथँ।
तू कर रहा है।	तु करुछु।	तुइँ करुछु।	तें करथस।
वह कर रहा है।	से करुछि।	से करुछे।	ओ करथे।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम कर रहे हैं।	आमे करुछु।	आमे करुछुँ।	हमन करथन।
तुम कर रहे हो।	तुमे करुछ।	तुमे करुछ।	तुमन करथ्।
वे कर रहे हैं।	सेमाने करुछन्ति।	सेमाने करुछन्।	ओमन करथें।

हिन्दी में अपूर्ण वर्तमान काल की रचना में मुख्य क्रिया के साथ दो सहायक क्रियाएँ अनिवार्य रूप से आती हैं, जबकि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इस काल की रचना करते समय केवल एक ही सहायक क्रिया से बनी संयुक्त क्रियाएँ आती हैं तथा तीनों भाषाओं में रचनागत भिन्नता है। जैसे-

कर् धातु-करना

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
कर्+त=करत	कर+उछि=करुछि	कर्+उछें=करुछें	कर्+अथँ=करथँ
	कर+उछु=करुछु	कर्+उछु=करुछु	कर्+अथस्=करथस्
	कर्+उछन्ति=करुछन्ति	करु+छन्=करुछन्	कर्+अथें=करथें

इस प्रकार तीनों भाषाओं में केवल एक ही सहायक क्रिया प्रयुक्त होती है।

1.1. 3. पूर्ण वर्तमान काल

पूर्ण वर्तमान काल की क्रिया से यह सूचित होता है कि क्रिया पूर्ण हुई है। जैसे-

मैंनें खाना खाया है।

इस वाक्य में एक बात द्रष्टव्य है कि 'खाया है' क्रिया में दो शब्द हैं। इनमें से

पहला 'खाया' भूतकाल का रूप है और दूसरा 'है' होना का रूप है। इन रुपों से यह सूचना मिलती है कि क्रिया पूर्ण हो गयी है।

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं गया हूँ।	मुँ जाइछि।	मुइँ जाइछें।	में गये हँ।
तू गया है।	तु जाइछु।	तुइँ जाइछु।	तें गये हस।
वो गया है।	से जाइछि।	से जाइछे।	ओ गिसे।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम गये हैं।	आमे जाइछुँ।	आमें जाइछुँ।	हमन गये हन।
तुम गये हो।	तुमे जाइछ।	तुमें जाइछ।	तुमन गये ह।
वे गये हैं।	सेमाने जाइछन्ति।	सेमाने जाइछन्।	ओमन गिन हैं।

सूत्र

हि. धातु+भूतकालिक प्रत्यय आ, ए, ई+हूँ, है, हो, हैं।

मा. ओ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय इ+छि, छु, छुँ, छ, छन्ति।

प. ओ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय इ+छें, छु, छे, छन।

छ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय ए+हँ, हस, है, हन, ह, हैं।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के भूतकालिक प्रत्यय 'इ' में समानता है, लेकिन हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में भूतकालिक प्रत्तयय 'ए' का प्रयोग होता है।

1.1. 4. रीति वर्तमान काल

इस काल से यह जाना जाता है कि क्रिया एक लंबे समय से होती है। जैसे-

वह आ रही है।

वह चलता आ रहा है।

हिन्दी में रीति वर्तमान काल और रीति भूतकाल का अर्थ सहायक क्रियाओं द्वारा प्रगट होता है। जैसे-

हि.	मैं रोज किताब पढ़ा करता हूँ।
मा. ओ.	मुँ सबुदिन बहि पढ़ें।
प. ओ.	मुइँ सबुदिन बहि पढ़सिं।
छ.	में सबेदिन किताब पढ़थँ।

इस काल का सूत्र इस प्रकार बनाया जा सकता है।

हि. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त+कर का वर्तमान कृदंत+होना का सहायक वर्तमान रूप।

मा. ओ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

प. ओ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

छ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

इस प्रकार इन तीनों भाषाओं में कुछ समानता भी है।

1. 2. भूतकाल

भूतकाल का निर्धारक 'वर्तमान' ही होता है। वर्तमान से पूर्व जो घटना घटित हो चुका है वह भूतकाल के अन्तर्गत आती है। भूतकाल के संबंध में कोई मतभेद दृष्टिगत नहीं होता क्योंकि जो अवर्तमान है और पहले ही घटित हो चुका है, वह अतीत 'भूतकाल' है। इस संबंध में कुछ विद्वानों के विचार द्रष्टव्य है-

कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भूतकाल से यह जाना जाता है कि व्यापार बोलने या लिखने से पहले हो चुका है"।[3]

सत्यकाम वर्मा के अनुसार-"भूत उसे कहते हैं जिसके रहने पर किसी सत्ता के जन्म की कल्पना नहीं की जा सकती। सत्ता से तात्पर्य क्रिया से है न कि वस्तु से"।[4]

उक्त दोनों परिभाषाओं से स्पष्ट है कि वक्ता के बोलने या लिखने के पूर्व जो कार्य हो गया या घटना घटित हो गई है, वह भूतकाल के अन्तर्गत आती है। भूतकाल के भी

चार भेद हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. 2.1. सामान्य भूतकाल

जिस क्रिया रूप से यह ज्ञात होता है कि क्रिया का कार्य हो गया है, उसे सामान्य भूतकाल कहते हैं। जैसे-

गोपाल गया।

तुम आये।

हिन्दी में सामान्य भूतकाल की रचना क्रिया के रूप में 'आ' प्रत्यय लगाने से होती है। इसके चार संरुप मिलते हैं-

पु. ए. आ	स्त्री. ए. ई
पु. ब. ए	स्त्री. ब. ई

मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी के वितरण इस प्रकार है-

	हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
	ए.	ब.	ए.	ब.	ए.	ब.	ए.	ब.
पु.	गया	गये	गला	गले	गला	गले	गिस	गिन
स्त्री.	गयी	गयीं	गला	गले	गला	गले	गिस	गिन

ऊपरलिखित संरुपों का वितरण लिंग तथा वचन के आधार पर है। हिन्दी के लिंग के अनुसार वचन और क्रिया भी प्रभावित होते हैं, लेकिन इन तीनों भाषाओं में प्रभावित नहीं होते। इस प्रकार मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के सामान्य भूतकाल के वितरण में समानता है।

1. 2. 2. अपूर्ण भूतकाल

क्रिया के इस रूप से यह जाना जाता है कि क्रिया अतीत काल में हुई है। लेकिन यह पता नहीं चलता कि क्रिया की पूर्ति कब हुई, क्रिया कुछ समय से अनुवर्तित हो रही थी। उसे अपूर्ण भूतकाल कहते हैं। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं फल खाता था।	मुँ फल खाउ थिलि।	मुइँ फल खाउथिलिं।	में फर खात रहें।
तुम किताब पढ़ते थे।	तु बहि पढ़ु थिल।	तुइँ बहि पढ़ु थिलु।	ते किताब पढ़त रहे।
वह क्रिकेट खेलता था।	से क्रिकेट खेलुथिला।	से क्रिकेट खेलुथिला।	ओ क्रिकेट खेलत रहिस।

कालसूचक सहायक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
खात+थ-(आ)	खाउ+थिल्-(इ)	खाउ+थिल्-(इं)	खात+रह-(एं)
पढ़ते+थ-(ए)	पढ़ु+थिल्-(उ)	पढ़ु+थिल्-(उ)	पढ़त+रह-(ए)
खेलता+थ-(आ)	खेलु+थिल्-(आ)	खेलु+थिल्-(आ)	खेलत+रह्-(इस)

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिन्दी की (थ), मानक ओड़िआ कि (थिल्), पश्चिमी ओड़िआ की (थिल्) और छत्तीसगढ़ी की (रह) सहायक क्रिया के रुप में नियमित रूप से दृष्टिगत होती हैं। हिन्दी का (आ, ए), मानक ओड़िआ का (इ, उ, आ), पश्चिमी ओड़िआ का (इं, उ, आ) और छत्तीसगढ़ी का (एं, ए, इस) अपूर्ण भूतकाल सूचक प्रत्यय हैं।

1. 2. 3. पूर्ण भूतकाल

क्रिया के इस रुप से कार्य पूरा हो जाने का बोध होता है, उसे पूर्ण भूतकाल कहते हैं। हिन्दी में पूर्ण भूतकाल के रूपों के साथ 'होना' सहायक क्रिया के भूतकालिक रुपों के जोड़ने से होती है। जैसे-

हि.	मा. ओ	प. ओ.	छ.
मैं राजा था।	मुँ राजा थिलि।	मुइँ रजा थिलि।	में राजा रहें।
तु पढ़ा था।	तु पढ़ि थिलु।	तुइँ पढ़ि थिलु।	तें पढ़े रहे।
वह ड़ाक्टर था।	से ड़ाक्टर थिला।	से ड़ाक्टर थिला।	ओ ड़ाक्टर रहिस।

कालसूचक सहायक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
थ-(आ)	ल-(इ)	ल-(इ)	ह-(एं)
थ-(आ)	ल-(उ)	ल-(उ)	ह-(ए)
थ-(आ)	ल-(आ)	ल-(आ)	ह-(इस)

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

1. 2. 4. रीति भूतकाल

क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाता है कि क्रिया बहुत लम्बे से होती आ रही है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाया करता था।	मुँ जाउथिलि।	मुइँ जाउ थिलिं।	में जात रहें।
तू खाया करता था।	तु खाउ थिलु।	तुइँ खाउ थिलु।	तें खात रहे।
वो पढ़ा करता था।	से पढ़ु थिला।	से पढ़ु थिला।	वो पढ़त रहिस।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी पूर्ण भूतकाल के साथ समानता रखती हैं।

1. 3. भविष्यत् काल

सामान्यतः भविष्यत् काल से तात्पर्य भावी घटना से है। इसकी स्थिति भूतकाल के ठीक विपरीत है। दूसरे इसका संबंध अप्रत्यक्ष तथा अदर्शन से है। इस दृष्टि से यह भूतकाल के समान है, क्योंकि भूत काल भी अप्रत्यक्ष होता है। परंतु भूतकाल का संबंध विगत घटनाओं से है। इससे यह ज्ञात होता है कि क्रिया व्यापार आरंभ होने वाला है। भविष्यत् काल के संबंध में कुछ विद्वानों के विचार द्रष्टव्य है-

कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भविष्यत् काल की क्रिया से ज्ञात होता है कि व्यापार होनेवाला है"।[5]

सत्यकाम वर्मा के अनुसार-"भविष्यत् काल वह है जो जन्म की सत्ता में बाधक

नहीं होता। अर्थात् जन्म (क्रिया निष्पादन) की संभावना बनी रहती है"।[6]

इन परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि क्रिया व्यापार का आरंभ भविष्यत् में हो, काल की इस स्थिति को भाषा में भविष्यत् रुप माना जाता है। भविष्यत् काल के निम्नलिखित भेद हैं-

1. 3.1. सामान्य भविष्यत् काल

हिन्दी में इस काल की रचना करते समय मुख्य क्रिया में भविष्यत् काल के प्रत्यय जुड़ जाते हैं। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाऊंगा।	मुँ जिबि।	मुइँ जिमी।	में जाहाँ।
तू जाएगा।	तु जिबु।	तुइँ जिबु।	तें जाबे।
वह जाएगा।	से जिबा।	से जिबा।	ओ जाहि।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है। हिन्दी के क्रियाओं में लिंग, वचन, पुरुष तीनों का प्रभाव दिखाई देता है, जबकि इन तीनों भाषाओं में भविष्यत् काल की क्रियाओं पर केवल वचन और पुरुष का ही प्रभाव होता है।

1. 3.1. अपूर्ण भविष्यत् काल

हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में अपूर्ण भविष्यत् काल में क्रिया का एक ही रूप प्रयोग होता है। इस काल की रचना करते समय हिन्दी में एक मुख्य क्रिया तथा दो सहायक क्रियाएँ आती हैं, जबकि इन तीनों भाषाओं में मुख्य क्रिया और एक सहायक क्रिया ही आती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वे आ रहे होंगे।	सेमाने आसुथिबे।	सेमाने आसुथिबे।	ओमन आत रहिं।
हम लिख रहे होंगे।	आमें लेखु थिबु।	आमें लेखु थिमुँ।	हमन लिखत रबो।
तू खेल रहा होगा।	तु खेलु थिबु।	तुइँ खेलु थिबु।	तें खेलत रबे।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

1. 3. 3. रीति भविष्यत् काल

इस काल की रचना के लिए हिन्दी में भूतकालिक कृदन्त+कर सहायक क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल के रूप आते हैं। जैसे-

वह किया करेगा।

ऐसा प्रयोग मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है।

इस प्रकार काल तीन होते हैं। काल से हमारा तात्पर्य भाषा अध्ययन के काल से है, जो एक व्याकरणिक संवर्ग है। कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"क्रिया के उस रुपातंर को काल कहते हैं, जिससे क्रिया के व्यापार का समय तथा उसकी पूर्ण व अपूर्ण अवस्था का बोध होता है"।[7]

भाषा के संदर्भ में कालबोध का मुख्य आधार क्रिया व्यापार की घटना से संबधित है। यदि घटना का संबंध आज या अब से है तो 'वर्तमान काल' और उसके पूर्व है तो 'भूत काल' तथा बाद में है तो वो 'भविष्यत् काल' माना जाता है।

2. पक्ष

'पक्ष' शब्द अंग्रेजी के 'Aspect' का अनुवाद है। परंपरागत व्याकरणों में पक्ष को क्रियारुप के एक स्वतंत्र तत्व या व्याकरणिक संवर्ग के रुप में शामिल नहीं किया गया है। क्रियारुप के इस तत्व को अप्रत्यक्ष रुप से काल 'tense' में ही निहित माना जाता रहा है।[8] लेकिन हमने इसे एक व्याकरणिक संवर्ग के रूप में लिया है। काल सूचक तत्व घटना के क्रिया-व्यापार के घटित होने के बाह्य समय की सूचना देते हैं। अर्थात् 'काल' से यह सूचना मिलती है कि समय के धरातल पर क्रिया-व्यापार कहाँ घटित हो रहा है। किन्तु घटना को क्रिया व्यापार के आंतरिक समय सूचक तत्व की दृष्टि से भी देखा जाता है। इस दृष्टि से कुछ क्रियारुप क्रिया-व्यापार को समग्र रुप से उपस्थित कराते हैं। उसकी आद्य, मध्य या अंतिम स्थितियों की सूचना नहीं देते। इसके विपरीत कुछ क्रियारुप क्रिया-व्यापार के आरंभ, सातत्य, समाप्ति आदि लक्षणों की सूचना देते हैं।

दुर्योधन महारणा के अनुसार-"क्रिया व्यापार के इन आंतरिक समय सूचक तत्वों को विभिन्न दृष्टिकोण से देखना 'पक्ष' कहलाता है"।[9]

काल और पक्ष का घनिष्ट संबंध है। रवीन्द्र श्रीवास्तव के अनुसार-"काल-बोध को हम दो स्तरों पर ग्रहण करते हैं, एक वह स्तर जिससे यह पता चलता है कि समय के धरातल पर व्यापार कहाँ घटित हो रहा है। अगर क्रिया-व्यापार अब और आज के बोध से संपृक्त होकर व्यक्त होता है तो वर्तमान काल और अगर वह वर्तमान के पूर्व की स्थिति में है तो भूतकाल तथा उसके बाद की स्थिति में है तो भविष्यत् काल के रुप में स्वीकृत होता है। काल-बोध का दूसरा स्तर वह है जो क्रिया-व्यापार में आयुक्त समय विस्तार (कालावधि) के बोध को निर्धारित एवं नियंत्रित करता है जिसे व्याकरण में 'पक्ष' कहते हैं"।[10] इस प्रकार काल और पक्ष का घनिष्ट संपर्क है। पक्ष को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. अस्तित्व बोधक
2. अपूर्ण पक्ष
    - 2.1 नित्यता बोधत
    - 2.2 आरंभ बोधक
    - 2.3 प्रगति बोधक
    - 2.4 अभ्यास बोधक
3. पूर्ण पक्ष

हम अब मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इन्हीं पक्षों को स्वीकारते हुए उनका विश्लेषण करेंगे।

2.1. अस्तित्वबोधक पक्ष

इस पक्ष के अन्तर्गत क्रिया का व्यापार व्यक्त नहीं होता, किन्तु पदार्थ या विषय की सत्ता या स्थिति का बोध होता है, जो अस्तित्व स्थिति का द्योतक है। यह अस्तित्व

चिरंतन एवं क्षणिक दोनों तरह का हो सकता है, दूसरे इसमें क्रिया के आदि एवं अंत का बोध नहीं होता अपितु स्थिति मात्र का द्योतन होता है। रवीन्द्र श्रीवास्तव के अनुसार- "अस्तित्व विधेय मूलतः (-सीमित) होते हैं, क्योंकि इसकी कालावधि निर्धारित होती हैं। विशेष रूप से वर्तमानकालिक अस्तित्वबोधक क्रिया में कालावधि के आदि और अंत को सीमित नहीं किया जा सकता है"।[11] जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
भगवान है।	भगवान अछि।	भगवान अछे।	भगवान हवै।
सीता है।	सीता अछि।	सीता अछे।	सीता हवै।
वह पुलिस है।	से पोलिस अछि।	से पुलिस अछे।	ओ पुलिस हवै।
वहाँ स्कूल है।	सेठि स्कूल अछि।	सेन स्कूल अछे।	ओकारा स्कूल हवै।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिन्दी में अस्तित्व द्योतक 'ह-' क्रिया का प्रयोग अनिवार्य घटक के रूप में होता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'अछ्-' तथा छत्तीसगढ़ी में 'हव-' का प्रयोग होता है।

2. 2. अपूर्ण पक्ष

जब हम घटना को भीतरी दृष्टि से देखते हैं तो क्रिया व्यापार की विभिन्न स्थितियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित रहता है। अतः ये विभिन्न स्थितियाँ अपूर्ण पक्ष की द्योतक होती हैं, जो क्रिया रुपों द्वारा व्यक्त होती हैं। अपूर्ण पक्ष के अन्तर्गत चूँकि क्रिया-व्यापार की विभिन्न स्थिति दृष्टिगत होती हैं, इसलिए इसके अनेक भेद बनते हैं। जैसे-

2. 2.1. नित्यताबोधक पक्ष

इस पक्ष के अंतर्गत क्रिया-व्यपार की स्थिति अविरल गतिमान है। इसमें क्रिया के आरंभ से लेकर अदृश्यमान अंत तक एक समान बनी रहती है। हिन्दी में इस पक्ष के लिए सामान्य, पूर्ण, आवृत्तिमूलक आदि शब्दों का प्रयोग भी देखा जाता है। वस्तुतः इनमें सामान्य स्थिति से 'निरपेक्ष' अभिव्यक्ति होती है, तथा अपूर्ण क्रिया व्यापार का क्षेत्र

व्यापक है। दूसरे 'आवृत्ति' शब्द से निकटता का बोध कुछ सीमा तक होता है किन्तु आवृत्ति के अन्तर्गत अभ्यास और नित्यता दोनों समाहित है। अतः क्रिया-व्यापार की स्थिति के आधार पर 'नित्यता' शब्द ही अधिक सटीक है।[12] इसके उदाहरण निम्नलिखित है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह फल खाता है।	से फल खाये।	से फल् खाइसि।	ओ फर् खाथे।
गोपाल किताब लिखता है।	गोपाल बहि लेखे।	गोपाल बहि लेखसि।	गोपाल किताब लिखथे।

पक्षसूचक

हि. (मुख्य क्रिया+ -त+कालसूचक)

मा. ओ. (मुख्य क्रिया+ -ए)

प. ओ. (मुख्य क्रिया+ -स)

छ. (मुख्य क्रिया+ -थ)

2. 2. 2. आरंभबोधक पक्ष

इस पक्ष से क्रिया व्यापार के आरंभ होने की स्थिति का बोध होता है। जैसे-

हि. जब राम पढ़ने लगता है तो.....। (-ने+लग-)

मा. ओ. राम जेबे पढ़ि बसे त.....। (-इ+बस-)

प. ओ. राम जेभें पढ़ि बससि त.....। (-इ+बस-)

छ. राम जब पढ़े बर बैठथे त.....। (बर+बैठ-)

इन भाषाओं में इस पक्ष की अभिव्यक्ति सामान्यतः सहायक क्रिया से होती है। किन्तु ये क्रियाएँ मुख्य क्रिया के रूप में अलग अर्थ प्रकट करती हैं। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ का 'बस' और छत्तीसगढ़ी का 'बैठ' धातु का अर्थ है 'बैठना'। इस दृष्टि से तीनों भाषाओं की क्रिया संरचना में समानता है।

हि. वह जैसे हि लिखने को हुआ.....।

मा. ओ. से जेमिति लेखिबा पाईं हेला.....।

प. ओ. से जेनता लेखबार लागि हेला.....।

छ. ओ जिसने लिखेबर होइस.....।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के (को हुआ), मानक ओड़िआ के (पाईं हेला), पश्चिमी ओड़िआ के (लागि हेला) और छत्तीसगढ़ी का (बर होइस) क्रिया रूप हैं।

हि. गाड़ी आने ही वाली है।

मा. ओ. गाड़ी आसिबार आछि।

प. ओ. गाड़ी आसबार अछे।

छ. गाड़ी आएबर हवै।

इन उदाहरणों में आसि, आस, आए आदि से भविष्यत का बोध होता है तथा क्रिया व्यापार होने ही वाला है का संकेत मिलता है।

2. 2. 3. प्रगति बोधक पक्ष

इस पक्ष के लिए हिन्दी में अपूर्ण, सातत्य, निरंतरता आदि नाम प्रचलित हैं। अंग्रेजी में इसके लिए 'prograssaive' शब्द प्रचलित है। प्रगतिबोधक पक्ष से क्रिया-व्यापार की प्रगति उन्मुख या निरंतरता की स्थिति व्यक्त होती है। इसमें क्रिया-व्यापार की प्रगति पर अधिक केंद्रित रहती है। क्रिया व्यापार कब आरंभ हुआ तथा कब समाप्त हुआ? इस पर ध्यान केन्द्रित रहता है। इससे केवल व्यापार 'चल रहा है' अर्थात् प्रगति उन्मुख हैं यह स्थिति प्रमुख है। जैसे-

हि. गाड़ी जा रही है।

मा. ओ. गाड़ी जाउछि।

प. ओ. गाड़ी जाउछे।

छ. गाड़ी जावथे।

उक्त उदाहरणों में रह-, जाउ-, जाउ- और जाव- द्वारा प्रगति का बोध होता है।

मानक ओड़िआ में (-उछि), पश्चिमी ओड़िआ में (-उछे) और छत्तीसगढ़ी में (-वथे) कृदंतों का प्रयोग 'जा' मुख्य क्रिया के साथ हुआ है जो प्रगति का बोध कराते हैं।

2. 2. 3.1. प्रगति बोधक वर्तमान काल

हि.	मैं खा रहा हूँ।
मा. ओ.	मुँ खाउ अछि~खाउछि।
प. ओ.	मुइँ खाउछें।
छ.	में खावत हौं।

2. 2. 3. 2. प्रगति बोधक भूतकाल

हि.	मैं खा रहा था।
मा. ओ.	मुँ खाउ थिलि।
प. ओ.	मुइँ खाउ थिलिं।
छ.	में खावत रहें।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि वर्तमान काल और भूतकाल में प्रगति बोधक पक्ष सूचक अलग-अलग रूप में प्रकट होते हैं। मानक ओड़िआ में इस पक्ष के दो रूप प्राप्त होते हैं किन्तु पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में एक ही रूप प्राप्त होते हैं।

प्रगति बोधक पक्ष के अंतर्गत एक स्थिति ऐसी भी होती है जिसमें क्रिया-व्यपार एक ओर तो सातत्य को बोध कराती है तथा दूसरी ओर प्रगति उन्मुख होती है। जैसे-

हि.	ऐसा तो होता ही रहता है।	(होता ही रहता है- -त+रह)
मा. ओ.	एमिति त हेइ थाए।	(हेइ थाए- -इ+थाए)
प. ओ.	एन्ता त हेइ थिसि।	(हेइ थिसि- -इ+थिसि)
छ.	इसने त होत रथे।	(होत रथे- - त+रथे)

प्रगति बोधक पक्ष के अंतर्गत क्रिया-व्यापार की एक ऐसी स्थिति भी दृष्टिगत होती है, जिसमें निरंतरता का बोध होता है। जैसे-

हि. पढ़े जाओ। -ए+जा-

मा. ओ. पढ़ि चाल। -इ+चा-

प. ओ. पढ़ि चाल। -इ+चा-

छ. पढ़त चल। -त+च-

उक्त उदाहरणों में मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में सहायक क्रिया+ चा निरंतरता की स्थिति को द्योतित करती हैं तथा छत्तीसगढ़ी में+ त।

2. 2. 4. अभ्यासबोधक

अभ्यासबोधक का अर्थ है-आदत। क्रिया-व्यापार कि स्थिति से कर्ता का स्वभाव या आदत व्यक्त हो तब ऐसी स्थितियों को अभ्यास बोधक पक्ष के अंतर्गत समझना चाहिए। इस पक्ष से क्रिया-व्यापार के बार-बार होने का संकेत मिलता है। अंग्रेजी में इस पक्ष के लिए 'frequentative' शब्द प्रचलित है। जैसे-

हि. राम मेरे घर आया करता है। -आ प्रत्यय+कर

मा. ओ. राम मोर घरकु आसिबा करे। -आ प्रत्यय+कर

प. ओ. राम मोर घरके आसुथिसि। -आ प्रत्यय+थिसि

छ. राम मोर घरला आवत रथे। -आ प्रत्यय+रथे

अभ्यास बोधक पक्ष की एक स्थिति ऐसी भी है जिसमें अभ्यास के साथ निरंतरता का बोध होता है। जैसे-

हि. वह दिन रात सोया करता है।

मा. ओ. से दिन राति सोइबा करे।

प. ओ. से दिन रात सुइसि।

छ. ओ दिन रात सुतत रथे।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के अन्तर्गत मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया 'सोना' तथा 'कर' के साथ '-त' प्रत्यय अनिवार्य घटक है। मानक ओड़िआ में 'सोइ' तथा कर

के साथ '-ए' प्रत्यय का प्रयोग होता है। पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में ऐसा प्रयोग नहीं है।

3. वृत्ति

'वृत्ति' शब्द पाश्चात्य व्याकरण में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द 'mood' का पर्याय है। भाषा केवल संदेश या सूचना को एक दूसरे तक पहुँचाने और प्राप्त करने का साधन मात्र नहीं है। भाषा इससे भी कुछ अधिक है। यदि दो व्यक्तियों के बीच आदान-प्रदान की प्रक्रिया है। यह अक्सर वक्ता के मनोभावों (feellings) और अभिवृत्तियों (attitudes) को भी व्यक्त करता है। जिसका उद्येश्य श्रोता के व्यवहार और उसकी अभिव्यक्ति को प्रभावित करना होता है। भाषा में यह कार्य 'वृत्ति' (mood) का है।

अत: वृत्ति से कार्य-व्यापार के प्रति वक्ता की अभिव्यक्ति या कार्य-व्यापार के संबंध में उसके अपने दृष्टिकोण का बोध होता है। वाक्य में वक्ता की यह अभिवृत्ति कई प्रकार से व्यक्त होती है-कभी विशेष विस्मयादिबोधक शब्दों द्वारा, कभी खास विशेषणों या क्रिया विशेषणों के प्रयोग द्वारा, कभी शब्दों को दोहरा कर, कभी वाक्य परिवर्तन (change of voice) द्वारा ,कभी शब्दक्रम परिवर्तन द्वारा, कभी आदेशात्मक या अनुरोधात्मक शैली के प्रयोग द्वारा।[13] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किसी कार्य-व्यापार को व्यक्त करने के लिए क्रियाएँ जिन विधियों और तरीकों को प्रयोग में लाती हैं उन्हें 'वृत्ति' कहा जाता है।

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में निम्नलिखित वृत्तियाँ मानी गयी हैं-

1. आज्ञार्थक
2. संभावनार्तक
3. अनिश्चित संभाव्य
4. निश्चित संभाव्य

3.1. आज्ञार्थक

दूसरों की क्रियाओं को निर्देशित करना भाषा का निर्देशात्मक प्रकार्य है। आज्ञार्थक पक्ष-प्रत्यय युक्त वाक्य श्रोता (मध्यम पुरुष) की क्रियाओं को निर्देशित करता है। आज्ञार्थक वाक्यों में कर्ता हमेशा मध्यम पुरुष में होता है, जिसका सामान्य स्थिति में प्रायः वाक्य के बाह्य स्तर पर लोप रहता है। यद्यपि जहाँ कर्ता पर बल देना अभीष्ट हो वहाँ उसका अवश्य प्रयोग किया जाता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
तू पढ़।	तु पढ़।	तुइँ पढ़।	तें पढ़।
तू खा।	तु खा।	तुइँ खा।	तें खा।
तू लिख।	तु लेख।	तुइँ लेख।	तें लिख।
तुम यहाँ से भागो।	तुमे एठु जाअ।	तुमे इनु ज।	तुमन इकारा ले जा।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि तीनों भाषाओं में आज्ञाभाव क्रिया की पुरुष सूचक विभक्तियों से प्रकट होता है तथा मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

3. 2. संभावनार्थक

संभावनार्थक वृत्ति से कार्य-व्यापार के भविष्य में घटित होने के संबंध में वक्ता के दृष्टिकोण का बोध होता है, जिसे वक्ता इच्छा, कामना, संभावना, अप्रत्यक्ष आदेश, अनुज्ञा आदि के रूप में व्यक्त करता है। जैसे-

3. 2.1. संभावना

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
शायद वह जाए।	बोध हुए से जिब।	बोधे से जिबा।	शायद वो जाहि।

3. 2. 2. इच्छा

मैं चाहता हूँ कि वह भी चले। मुँ चाहुँछि कि से भी चालु। मुइं चाहुँछें कि से भी चालु। में चाहथं कि ओ भी चले।

3. 2. 3. कामना

भगवान आपको सुखी रखे। भगवान आपणङकु सुखी रखन्तु। भगवान आपणकु सुखी रखुन। भगवान आपला

सुखी राखें।

3. 2. 4. अप्रत्यक्ष आदेश

आज कोई न जाए। आजि केहि न जाआन्तु। आएज् किहे ना जाउन। आज कोन्हों नइ जाऐं।

3. 2. 5. अनुज्ञा याचना

मैं अन्दर आ जाऊँ। मुँ भीतर कु आसिबि। मुईं भीतर के आसमि। में भीतर ला आहाँ।

सामान्य संभावनात्मक में वक्ता किसी कार्य या घटना के प्रति संभावनात्मक भावनाएँ प्रकट करता है। जैसे-

वह बैठा हो। बोध हुए से बसि थिब। बोधे से बसि थिबा। शायद ओ बैठे रहि।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के अन्तर्गत 'हो' क्रिया से संभावना वृत्ति द्योतित होती है। अतः 'हो' संभावना वृत्ति का अनिवार्य घटक है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में यह वृत्ति व्यक्त नहीं होती। इसकी अभिव्यक्ति यथाक्रम बोध हुए, बोधे, शायद शब्द प्रयोग से होती है जो पूर्णतः क्रिया नहीं है।

हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में पक्ष, काल और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रिया-पदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रिया-पदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होता है। ऊपर हमने इन तीनों भाषाओं के काल, पक्ष और वृत्ति का सामान्य विवेचन किया है। अब हम काल, पक्ष और वृत्ति का अलग अलग विश्लेषण न करके एक साथ विश्लेषण करेंगे।

4. क्रिया की पदबंध संरचना

मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में क्रिया-पदबंधों की रुपिमिक संरचना से काल, पक्ष और वृत्ति की सूचना दो तरह से मिलती है-

1. सरल क्रिया पदबंधों में पक्ष, काल और वृत्ति सूचक प्रत्यय एवं काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया द्वारा।
2. संयुक्त क्रिया पदबंधों में रंजक क्रिया द्वारा।

पक्ष सूचक प्रत्ययों के प्रयोग की दृष्टि से तीनों भाषाओं के सामान्य पदबंध की संरचना दो प्रकार की होती है-

1. पक्ष सापेक्ष

2. पक्ष निरपेक्ष

4.1. पक्ष सापेक्ष संरचना

जिन क्रियारुपों में पक्ष सूचक तत्व विद्यमान रहता है, वे पक्ष सापेक्ष संरचना के अंतर्गत आते हैं। तीनों भाषाओं की पक्ष सापेक्ष संरचनाएँ निम्न प्रकार की है-

[धातु-{पक्ष सूचक तत्व}-{काल/वृत्ति सूचक तत्व}]

4.1.1. पक्ष सूचक तत्व

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में पक्ष सूचक तत्व निम्नलिखित हैं-

4.1.1.1 पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय

/-आ/ हि. लिख्-आ>लिखा+ह (है कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-इ/ मा. ओ. लेख्-इ>लेखि+अछि (अछि कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-इ/ प. ओ. लेख्-इ>लेखि +छें (छें कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-ए/ छ. लिख-ए>लिखे+हौं (हौं कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा इन दोनों भाषाओं में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-ए/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4.1.1. 2. अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय

/-आ/ हि. लिख्-त>लिखत्-आ>लिखता

/-उ/ मा. ओ. लेख-उ>लेखु+अछि (अछि काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

/-उ/ प. ओ. लेख-उ>लेखु+छें (छें काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

/-त/ छ. लिख-त>लिखत+हौं (हौं काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय की दृष्टि से भी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त प्रत्यय /-उ/ में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4.1. 2. काल और वृत्ति सूचक तत्व

तीनों भाषाओं की पक्ष संरचना में काल एवं वृत्ति की सूचना कुछ सहयोगी क्रियाओं एवं उनके संपरिवर्तक रुपों द्वारा दी जाती है। तीनों भाषाओं की काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना एवं उनसे सूचित काल और वृत्ति निम्नलिखित हैं-

	संरचना	**निष्पन्न रूप**	**काल और वृत्ति**
हि.	[ह्-{व.पु.1}]	है, हैं, हूँ आदि	वर्तमान
	[थ-{व.लि}]	था, थे, थी आदि	भूत
	[हो-{व.पु.2}]	हो, हों, होऊँ आदि	संभावना
	[हो-{व.पु.2}]-ग-{व.लि.}]	होगा, होगी आदि	अनुमान
	[हो-त-{व.लि}]	होता, होती आदि	हेतुमत्
मा. ओ.	[अछ्-{व.पु}]	अछि, अछु आदि	वर्तमान
	[था-{व.पु}]	थाए, थाउ आदि	भूत-आभ्यासिक
	[था-{व.पु}]	था, थाअ आदि	अनुज्ञा
	[थ-इल्-{व.पु}]	थिला, थिले आदि	भूत-अतीत
	[थ-इब्--{व.पु}]	थिब, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
	[था-अन्त-{व.पु}]	थाआन्ते, थाआन्ति आदि	हेतुमत्
प. ओ.			
	[अछ्-{व.पु}]	अछें, अछुँ आदि	वर्तमान
	[थि-{व.पु}]	थिसि, थिसुँ आदि	भूत-आभ्यासिक

[था-{व.पु}]	था, थाअ आदि	अनुज्ञा
[थ-इल्-{व.पु}]	थिला, थिले आदि	भूत-अतीत
[थ-इब्--{व.पु}]	थिबा, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
[थ-इत्-{व.पु}]	थिति	हेतुमत्

छ.

[आ-हँ{व.पु}]	हौं, आहँन आदि	वर्तमान
[रथ-ओं{व.पु}]	रथों, रथँन आदि	भूत-आभ्यासिक
[रह--{व.पु}]	र, रह आदि	अनुज्ञा
[रह-इस-{व.पु}]	रहिस, रहिंन् आदि	भूत-अतीत
[रह--{व.पु}]	रहि, रहिं, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
[रथ्-इन्-{व.पु}]	रथिन्, रथें आदि	हेतुमत्

इससे स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना एवं उनसे सूचित काल और वृत्ति में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के अनुज्ञा (था, थाअ), भूत-अतीत (थिला, थिले) एवं अनुमान/संभावना (थिबा, थिबे) काल/पक्ष सूचक क्रियाओं में समानता है। जबकि छत्तीसगढ़ी में भिन्नता है।

4.1. 3. पक्ष सूचक संरचना में काल और वृत्ति सूचक तत्व की स्थिति

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की पक्ष सापेक्ष संरचना में काल/वृत्ति सूचक तत्व अनिवार्य है। अर्थात् पक्ष सापेक्ष संरचना काल सापेक्ष भी है। काल/वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया के बिना केवल पक्ष सूचक प्रत्यय युक्त रूप नहीं है। जैसे-

हि.	लिखा, लिखता
मा. ओ.	लेखि, लेखु

प. ओ. लेखि, लेखु

छ. लिख, लिखे

ये समापिका क्रिया रूप नहीं हैं। ये असमापिका क्रियारुप हैं। इन रुपों से किसी पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती है।

4.1. 4. वृत्ति की अभिव्यक्ति

तीनों भाषाओं की पक्ष सापेक्ष संरचनाओं में काल और वृत्ति सूचक तत्व का अर्थ है-काल अथवा वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया। अर्थात् जिस सामान्य क्रिया पदबंध में काल सूचक तत्व विद्यमान है, वहाँ वृत्ति सूचक तत्व नहीं आ सकता है। जैसे-

हि. लिखता है, लिखता होगा।

मा. ओ. लेखु अछि, लेखु थिब।

प. ओ. लेखुछे, लेखु थिबा।

छ. लिखत हवे, लिखत रहि।

किंतु ये रूप नहीं हो सकते हैं-

हि. लिखता होगा है।

मा. ओ. लेखुथिब अछि।

प. ओ. लेखुथिबा अछे।

छ. लिखत रहि हवे।

जिस क्रियारूप में वृत्ति सूचक तत्व नहीं होता उसे 'वृत्ति निरपेक्ष' कहा जा सकता है। ऐसे वृत्ति निरपेक्ष क्रियारूप वाले वाक्य साधारण तथा तथ्यात्मक या घोषणात्मक होते हैं। जैसे-

हि. गोपाल लिखता है।

मा. ओ. गोपाल लेखे।

प. ओ. गोपाल लेखसि।

छ. गोपाल लिखथे।

ऐसे वाक्यों से अपने कथ्य प्रति वक्ता की अभिवृत्ति की कोई स्पष्ट सूचना नहीं मिलती है।

4.1. 5. पक्ष सापेक्ष क्रिया के विहित रूप

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की पक्ष सापेक्ष क्रिया विहित रूपों के उदाहरण निम्नलिखित हैं-

4.1. 5.1. पूर्ण पक्ष

पूर्ण पक्ष (perfective) से कार्य-व्यापार की पूर्ण अवस्था का बोध होता है। पूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार को आंतरिक खण्डों में नहीं, बल्कि एक समग्र इकाई या समष्टि के रूप में देखा जाता है जिसमें कार्य-व्यापार अनिवार्यतः पूर्णता की स्थिति में माना जाता है। अपूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार को प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, पूर्ण पक्ष में एक घटना के रूप में।[14]

	क्रिया रूप	**काल/वृत्ति**
हि. सूचक प्रत्यय /-$-/	आया	भूत-सामान्य
	आया है	वर्तमान
	आया था	भूत-अतीत
	आया हो	संभावना
	आया होगा	अनुमान
	आया होता	हेतुमत्
मा. ओ. (सूचक प्रत्यय /-इ/)	आसि अद्वि	वर्तमान
	आसि थाए	भूत -आभ्यासिक
	आसि थाउ	अनुज्ञा
	आसि थिला	भूत
	आसि थिब	अनुमान/संभावना
	आसि थाआन्ता	हेतुमत्

प. ओ. (सूचक प्रत्यय /-इ/)	आसिछे	वर्तमान
	आसि थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसि थाउ	अनुज्ञा
	आसि थिला	भूत
	आसि थिबा	अनुमान/संभावना
	आसि थिता	हेतुमत्
छ. (सूचक प्रत्यय /-ए/)	आइसे	वर्तमान
	आए रहिस	भूत -आभ्यासिक
	आए रहे	अनुज्ञा
	आए रहिस	भूत
	आए रहि	अनुमान/संभावना
	आए रतिस	हेतुमत्

4.1. 5. 2. अपूर्ण पक्ष

अपूर्ण पक्ष (imperfective) से कार्य-व्यापार की किसी अपूर्ण व्यवस्था का बोध होता है। अपूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार की आंतरिक संरचना तथा आंतरिक काल-क्षेत्र के किसी पक्ष पर ध्यान रहता है।[15]

हि. सूचक प्रत्यय /-त्-/	**क्रिया रूप**	**काल/वृत्ति**
	आता	हेतुमत्
	आता है	वर्तमान
	आता था	भूत
	आता हो	संभावना
	आता होगा	अनुमान
	आता होता	हेतुमत्

मा. ओ. (सूचक प्रत्यय /-उ/)	आसु अछि	वर्तमान
	आसु थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसु थाउ	अनुज्ञा
	आसु थिला	भूत
	आसु थिब	अनुमान/संभावना
	आसु थाआन्ता	हेतुमत्
प. ओ. (सूचक प्रत्यय /-उ/)	आसुछे	वर्तमान
	आसु थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसु थाउ	अनुज्ञा
	आसु थिला	भूत
	आसु थिबा	अनुमान/संभावना
	आसु थिता	हेतुमत्
छ. (सूचक प्रत्यय /-त/)	आवथे	वर्तमान
	आवत रहे	भूत-आभ्यासिक
	आवत रहिस	अनुज्ञा
	आवत रहि	भूत
	आवत रतिस	अनुमान/संभावना
	आवत रथिस	हेतुमत्

पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय और अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्तय की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है। दोनों भाषाओं में /-इ/ और /-उ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। हिन्दी में /-$-/ और /-त/ एवं छत्तीसगढ़ी में /-ए/ और /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4. 2. पक्ष निरपेक्ष संरचना

पक्ष निरपेक्ष संरचना का यह अर्थ नहीं है कि इस संरचना से पक्ष की सूचना नहीं

मिलती है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के दोनों पूर्ण-अपूर्ण पक्षों की सूचना मिलती है। इस संरचना को पक्ष निरपेक्ष कहने का कारण यह है कि इसमें पक्ष सूचक तत्वों का अभाव है। तीनों भाषाओं की पक्ष निरपेक्ष संरचनाओं की एक विशेषता यह है कि इनमें काल/वृत्ति सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है, सहयोगी क्रियाओं का प्रयोग नहीं होता है।

तीनों भाषाओं की पक्ष निरपेक्ष संरचना निम्न प्रकार की है-

[धातु-({काल/वृत्ति})-{व.पु.}]

4. 2.1. पक्ष निरपेक्ष संरचना में प्रयुक्त काल और वृत्ति सूचक तत्व

तीनों भाषाओं की कुछ पक्ष निरपेक्ष संरचनाओं में काल/वृत्ति सूचक प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है। ये निम्नलिखित हैं-

मा. ओ.

/-इल्-/	भूत	लेख-इल्-आ>लेखिला (लिखा)
/-इब्-/	भविष्यत	लेख-इब्-आ>लेखिबा (लिखेंगे)
/-अन्त्-/	हेतुमत्	लेख-अन्त-आ>लेखन्ता (लिखता)

प. ओ.

/-अल्-/	भूत	लिख-अल्-आ>लिखला
/-अम्-/	भविष्यत्	लिख-अम्-आ>लिखमा
/-अत्-/	हेतुमत्	लिख-अत्-आ>लिखता

छ.

/-इस्-/	भूत	लिख-इस्-अ>लिखिस
/-अब्-/	भविष्यत्	लिख-अब्-ओ>लिखबो
/-इत्-/	हेतुमत्	लिख-इत्-स>लिखतिस

मानक ओड़िआ के /-इल्-/, /-इब्-/ की /-इ-/, पश्चिमी ओड़िआ की /-अल्-/,

/-अम्-/, /-अत्-/ और छत्तीसगढ़ी के /-इस्-/, /-इत्-/ काल सूचक पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के साथ समानता रखती है।

4. 2. 2. पक्ष निरपेक्ष क्रिया के विहित रूप

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रिया-पदबंध संरचना नियमों के अनुसार उनका विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है-

क्रियारूप				**काल और वृत्ति**
हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.	
पढ़ता है	पढ़े	पढ़े	पढ़थे	नियत्व
पढ़े	पढ़ु	पढ़ु	पढ़े	इच्छा/अनुज्ञा
पढ़ा	पढ़िला	पढ़ला	पढिस्	भूत-सांप्रतिक
पढ़ेगा	पढ़िब	पढ़बा	पढ़हि	भविष्यत्
पढ़ता	पढ़न्ता	पढ़ता	पढ़तिस	हेतुमत्

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के नियत्व, इच्छा एवं भूत में समानता है।

तीनों भाषाओं के अनुज्ञा वृत्ति सूचक मध्यम पुरुष के क्रियारूप निम्नलिखित हैं-

कर्ता	**क्रियारूप**
तु, तुइँ, त	पढ़, पढ़, पढ़
तुमे, तुमे, तुमन	पढ़, पढ़, पढ़
आपण, आपण,	पढ़न्तु, पढ़ुन, पढ़

इस दृष्टि से तीनों भाषाओं में लगभग समानता है। केवल मानक ओड़िआ के /-अन्तु/ और पश्चिमी ओड़िआ के /-उन्/ में समानता नहीं है।

4. 2. 3. समापिका क्रियारुपों के साथ प्रयुक्त होनेवाले अन्य प्रत्यय

4. 2. 3.1. पूर्णतावाचक प्रत्यय

मानक ओड़िआ में नियत्व एवं अनुज्ञा को छोड़कर शेष पक्ष निरपेक्ष क्रियारुपों के

अंत में कुछ विशेष संदर्भों में /-णि/ का प्रयोग होता है-

मा. ओ.	से गला**णि**	वह जा चुका है।
प. ओ.	से गला**न**	"
छ.	ओ गिस**न**	"

इससे स्पष्ट है कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में भूतकाल सूचक क्रिया रूप के साथ /-न/ का प्रयोग क्रिया व्यापार की पूर्णता की सूचना देता है।

मा. ओ.	से जाइब**णि**	वह जा चुका होगा।
प. ओ.	से जाइथिबा**न**	"
छ.	ओ जाएरहि**न**	"

मानक ओड़िआ के /-णि/, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के /-न/ भविष्यत् काल सूचक क्रिया रूप के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-व्यापार की पूर्णता की सूचना देते हैं।

4. 2. 3. 2. निश्चयवाचक प्रत्यय

मानक ओड़िआ में /-टि/ समापिका क्रिया रुपों के पश्चात प्रयुक्त होने पर क्रिया के घटित होने की निश्चतता की सूचना मिलती है। जैसे-

मा. ओ.	से खाउछि**टि**?	वह निश्चित रुप से खा रहा है?
प. ओ.	से खाउछे **काएँ**?	"
छ.	ओ खावत हवै **का**?	"

पश्चिमी ओड़िआ में /काएँ/ और छत्तीसगढ़ी में /का/ प्रश्नवाचक शब्दों का प्रयोग होता है।

मा. ओ.	से खाइब**कि**?	क्या वह खाएगा?
प. ओ. से	खाएबा **काएँ**?	"
छ.	ओ खाहि **का**?	"

मा. ओ. से खाइब**टि**? वह निश्चित रुप से खाएगा।

ऐसा प्रयोग पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है।

4. 2. 3. 3. विशेष अनुरोध सूचक प्रत्यय

तीनों भाषाओं में विशेष अनुरोध सूचक प्रत्यय निम्नलिखित हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
तुम पढ़ो न।	तुमे पढु**ना**।	तुमे पढ़ **न**।	तुमन पढ़ **न**।
आप पढ़िए न।	आपण पढ़न्तु **ना**।	आपण पढु**न**।	आप पढ़ **न**।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ में /ना/, पश्चिमी ओड़िआ /न/ और छत्तीसगढ़ी में /न/ प्रत्यय के प्रयोग से विशेष अनुरोध की सूचना मिलती है।

5. क्रियारुपों की खण्डीय संरचना

पिछले अनुच्छेद में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियारुपों का क्रमित पदबंध संरचना नियमों के अनुसार पक्ष, काल और वृत्ति सूचक घटक तत्वों का विश्लेषण किया गया है और उसके आधार पर तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की एक सूची प्रस्तुत की गयी है। इस सूची को महारणा ने 'वर्गीकी विषय विन्यास' (taxonomic item and arrangement) माना है।[16] इससे विभिन्न क्रियारुपों का आंतरिक संबंध स्पष्ट नहीं हो पाता। इस कमी को दूर करने के लिए इस अनुच्छेद में तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की संरचनाओं का खण्डीय विश्लेषण करने का प्रयास किया जायेगा। जिससे क्रियारुपों की रुपिमिक संरचना के साथ-साथ आर्थी संरचना भी स्पष्ट हो सके। पक्ष, काल और वृत्ति सूचक तत्व संमिश्र प्रतीक होने पर भी पक्ष सूचक तत्व काल/वृत्ति सूचक तत्व से भिन्नता रखता है। किन्तु काल और वृत्ति सूचक तत्व क्रियारुपों में निश्चित रूप से संमिश्र होते हैं। कुछ क्रियारुपों में इन दोनों कोटियों की सूचना एक ही सहायक तत्व द्वारा दी जाती है। इस दृष्टि से काल-पक्ष-वृत्ति सूचक तत्वों को दो वर्गों में रखा जा सकता है।[17] पक्ष और काल। पक्ष मुख्यतः दो होते हैं-

1. पूर्ण पक्ष<+पूर्ण>

2. अपूर्ण पक्ष<-अपूर्ण>

तीनों भाषाओं के कुछ क्रियारुपों में पक्ष सूचक तत्व विद्यमान रहते हैं और कुछ में न रहने पर भी प्रासंगिक रूप से पक्ष का द्योतन होता है। जिन रुपों में काल सूचक तत्व नहीं होता उनमें वृत्ति सूचक तत्व हो सकता है।[18]

<-काल- वृत्ति>-><_+वृत्ति>।

इस दृष्टि से तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की खण्डीय संरचना का प्रथम नियम यह बनता है-

{पक्ष-काल-वृत्ति}-><_+पूर्ण_+काल>

5.1. <+पूर्ण+काल> --> <_+भूत>

जब क्रियारूप पूर्ण पक्ष का होता है तब तीनों भाषाओं में दो ही काल संभव है-

भूत<+भूत >

वर्तमान<-भूत>

	<+पूर्ण-भूत>	<+पूर्ण+भूत>
हि.	वह खाया है।	वह खाया था।
मा. ओ.	से खाइ अछि।	से खाइ थिला।
प. ओ.	से खाइछे।	से खाइ थिला।
छ.	ओ खाइसे।	ओ खाए रहिस।

मानक ओड़िआ के (अछि), पश्चिमी ओड़िआ के (छे) और छत्तीसगढ़ी के (से) से <+पूर्ण-भूत> की सूचना मिलती है तथा (थिला), (रिहिस) से <+पूर्ण+भूत> सूचना मिलती है। <+सांप्रतिक> अभिलक्षण समय सापेक्षिक है, जो निश्चित समय से पूर्व घटित क्रिया-व्यापार की सूचना देता है-

<+पूर्ण+भूत+सांप्रतिक>

हि. वह खाया।

मा. ओ. से खाइला।

प. ओ. से खाएला।

छ. ओ खाइस।

5. 2. <-पूर्ण+काल>----><_+भविष्यत्>

जब क्रिया रूप अपूर्ण पक्ष का होता है, तब या तो वर्तमान काल की सूचना मिलती है या भविष्यत् काल की। भविष्यत् काल प्रकृतितः अपूर्ण पक्ष का होता है। किन्तु तीनों भाषाओं में इन क्रियारुपों में अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय नहीं होते। जैसे-

<-पूर्ण+भविष्यत्>

हि. वह खाएगा।

मा. ओ. से खाइब।

प. ओ. से खाएबा।

छ. ओ खाही।

5. 3. <-भविष्यत्>----><_+भूत>

तीनों भाषाओं के इन अपूर्ण पक्ष सूचक क्रियारुपों में अपूर्ण सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है और साथ में काल सूचक सहयोगी क्रिया का भी। जैसे-

<-पूर्ण, -भूत>	<-पूर्ण, +भूत-अभ्यास>	<-पूर्ण,+भूत+अभ्यास>
हि. वह खाता है।	वह खाता था ।	वह खाता था।
मा.ओ से खाउ अछि।	से खाउ थिला।	से खाउ थाए।
प.ओ से खाउ अछे।	से खाउ थिला।	से खाउ थिसि।
छ. ओ खावत हवै।	ओ खावत रहिस।	ओ खावत रथे।

5. 4. <-पूर्ण, -भविष्यत्>----><_+सातत्य>

इन भाषाओं में कोई स्वतंत्र सातत्य पक्ष सूचक प्रत्यय नहीं है। रूप रचना की

दृष्टि से मानक ओड़िआ में /-उ/, पश्चिमी ओड़िआ में /-उ/ और छत्तीसगढ़ी में /-त/ का प्रयोग होता

है। जैसे-

	<-पूर्ण, -भूत, +सातत्य>	<-पूर्ण, +भूत, +सातत्य>
हि.	वह खा रहा है।	वह खा रहा था।
मा. ओ.	से खाउ अछि।	से खाउ थिला।
प. ओ.	से खाउछे।	से खाउ थिला।
छ.	ओ खावत हवै।	ओ खात रहिस।

5. 5. <_+पूर्ण, +भविष्यत्> ----><_+अनुमान>

तीनों भाषाओं के <+अनुमान> क्रियारुप क्रिया के घटित होने के अनुमान या अनिश्चितता की सूचना देते हैं। जैसे-

	<-पूर्ण,+अनुमान>	<-पूर्ण,+सातत्य+अनुमान>	<+पूर्ण,+अनुमान>
हि.	वह खाता होगा।	वह खा रहा होगा।	वह खाया होगा
मा. ओ.	से खाउ थिब।	से खाउ थिब।	से खाइ थिब
प. ओ.	से खाउ थिबा।	से खाउ थिबा।	से खाइ थिबा।
छ.	ओ खावत रहि।	ओ खावत रहि।	ओ खाए रहि।

5. 6. <_+पूर्ण, +वृत्ति>----><_+संभावना>

इन भाषाओं के क्रियारुपों में वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियारूप का प्रयोग होता है-

	<-पूर्ण, +संभावना>	<-पूर्ण, +सातत्य+संभावना>	<+पूर्ण+संभावना>
हि.	(शायद) वह खाया हो।	(शायद) वह खा रहा हो।	(शायद वह खाया हो।
मा. ओ.	(बोधहुए) से खाउथिब।	(बोधहुए) से खाउथिब।	(बोधहुए) से खाइथिब।
प. ओ.	(बोधे) से खाउथिबा।	(बोधे) से खाउथिबा।	(बोधे) से खाइथिबा।
छ.	(शायद) ओ खावत रहि।	(शायद) ओ खावत रहि।	(शायद) ओ खाए रहि।

5. 7. <_+पूर्ण-काल>----><_+हेतुमत्>

इन भाषाओं में यह रूप <-काल> का होता है। इस रूप में वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया का प्रयोग हो भी सकता है।जैसे-

	<-पूर्ण+हेतुमत्>	<-पूर्ण+सातत्य+हेतुमत्>	<+पूर्ण+हेतुमत्>
हि.	(यदि) वह पढ़ता..।	(यदि) वह पढ़ रहा होता..।	(यदि) वह पढ़ा होता..।
मा. ओ.	(जदि) से पढ़न्ता..।	(जदि) से पढ़ु थाआन्ता..।	(जदि) से पढ़ि थाआन्ता..।
प. ओ.	(जदि) से पढ़ता..।	(जदि) से पढ़ु थिता..।	(जदि) से पढ़ि थिता..।
छ.	(अगर) ओ पढ़तिस..।	(अगर) ओ पढ़त रतिस..।	(अगर) ओ पढ़े रतिस..।

हेतुमत् क्रियारूप वाला वाक्य एक अन्य वाक्य की आकांक्षा रखता है और दोनों वाक्य (मा. ओ.-जदि, तेबे, ताहेले), (प. ओ.-जदि, तेभें, ताहेले), (छ.-अगर, त) संयोजक द्वारा संयुक्त होते हैं। ऐसी स्थिति में दोनों वाक्यों की क्रियाएँ हेतुमत् रूप की होती हैं।

5. 8. <-काल>----><_+इच्छा>

तीनों भाषाओं के इच्छार्थक क्रियाओं का रूप इस प्रकार है-

	<-पूर्ण,+इच्छा>
हि.	वह पढ़े।
मा. ओ.	से पढ़ु।
प. ओ.	से पढ़ु।
छ.	ओ पढ़े।

इच्छार्थक रूप क्रिया के ऐसे क्रिया-व्यापार की सूचना देता है, जो अभी घटित नहीं हुआ, किन्तु भविष्यत में घटित होने की आशा या आवश्यकता है। अतः इन तीनों भाषाओं में <+इच्छा> के संदर्भ में <+भविष्यत्> रुप का प्रयोग भी पाया जाता है। जैसे-

	<-काल>	<+भविष्यत>
हि.	अच्छा अब मैं खाऊँ।	अच्छा अब मैं जाऊँगा।
मा. ओ.	अच्छा एबे मुँ खाएँ।	अच्छा एबे मुँ खाइबि।
प. ओ.	अच्छा एबे मुइँ खाएसि।	अच्छा एबे मुइँ खाएमि।
छ.	अच्छा अब में खातहौं।	अच्छा अब में खाहौं।

6. स्थिति और अस्तित्ववाचक क्रिया के पक्ष, काल और वृत्ति

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रियाओं के संरचना नियम सामान्य क्रियाओं से कुछ भिन्न हैं। इसका कारण इन क्रियाओं की रुपावली पक्ष सूचक तत्व नहीं होता है।

6.1. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया की रुपावली

अन्यपुरुष एकवचन में मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी की स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रियाओं की रुपावली एवं अभिलक्षण निम्न प्रकार हैं-

6.1.1. स्थितिवाचक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.	अभिलक्षण
वह स्कूल में **है**।	से स्कूल रे **अछि**।	से स्कूल रे **अछे**।	ओ स्कूल में **हवै**।	<-पूर्ण,-भूत>
वह स्कूल में **था**।	से स्कूल रे **थिला**।	से स्कूल रे **थिला**।	ओ स्कूल में **रहिस**।	<+पूर्ण,+भूत>
----------	से स्कूल रे **थाए**।	से स्कूल रे **थिसि**।	ओ स्कूल में रथे।	<+पूर्ण,+भूत,+सातत्य>
वह स्कूल में **हो**।	से स्कूल रे **थाउ**।	से स्कूल रे **थाउ**।	ओ स्कूल में **रहे**।	<-पूर्ण,+इच्छा>
वह स्कूल में **हो**।	से स्कूल रे **थिब**।	से स्कूल रे **थिबा**।	ओ स्कूल में **रहि**।	<-पूर्ण,+संभावना>
वह स्कूल रे **होगा**।	से स्कूल रे **थिब**।	से स्कूल रे **थिबा**।	ओ स्कूल में **रहि**।	<-पूर्ण+भविष्यत+अनुमान>
वह स्कूल में **होता**..।	से स्कूल रे **थाआन्ता**..।	से स्कूल रे **थिता**..।	ओ स्कूल में **होतिस**..।	<-पूर्ण+हेतुमत्>

6. 2. अस्तित्ववाचक क्रिया

इस पक्ष के अन्तर्गत क्रिया का व्यापार व्यक्त नहीं होता, किन्तु पदार्थ या विषय की सत्ता या स्थिति का बोध होता है, जो अस्तित्व स्थिति का द्योतक है। यह अस्तित्व चिरंतन एवं क्षणिक दोनों तरह का हो सकता है। दूसरे इसमें क्रिया के आदि एवं अंत का बोध नहीं होता अपितु स्थिति मात्र का द्योतन होता है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह काला **है**।	से कला **अटे**।	से कला **आए**। ओ करिया **हवै**।	<-पूर्ण,-भूत>
वह काला **था**।	से कला **थिला**।	से कला **थिला**।ओ करिया **रहिस**।	<+पूर्ण,+भूत>
.....	से कला **थाए**।	सेकला **थिसि**। ओ करिया **रथे**।	<+पूर्ण+भूत+सातत्य>
वह काला **हो**।	से कला **हेउ**।	से कला **हेउ**। ओ करिया **होऐ**।	<-पूर्ण+इच्छा>
वह काला **हो**।	से कला **हेब**।	से कला **हेबा**। ओ करिया **होहि**।	<-पूर्ण+संभावना>
वह काला **होगा**।	से कला **हेब**।	से कला **हेबा**। ओ करिया **होहि**।	<-पूर्ण+भविष्यत्+अनुमान>
वह काल **होता**..।	से कला **हुअन्ता**..।	से कला **हेता**..। ओ करिया **होतिस**..।	<-पूर्ण+हेतुमत्>

6. 2.1. विशेष अस्तित्ववाचक क्रिया

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में किसी सामान्य तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए विशेष प्रकार के क्रियारुपों का प्रयोग पाया जाता है। इन रुपों में पक्ष सूचक तत्वों का प्रयोग पाया जाता है और ये रूप भाषाओं की 'होना' क्रिया के पक्ष सापेक्ष रुपों के समान होते हैं। जैसे-

1. हि.	इस पेड़ का फूल सुंदर **होता है**।	<-पूर्ण-भूत,+सामान्य>
	यह फूल सुंदर **है**।	<-पूर्ण-भूत,-सामान्य>
मा. ओ.	एहि गछर फूल सुंदर **हुए**।	
	एहि फूलटि सुंदर **अटे**।	
प. ओ.	इ गछर फूल सुंदर **हेसि**।	
	इ फूल टा सुंदर **आए**।	

छ. इ रुक के फूल सुंदर **होथे**।

इ फूल हर सुंदर **हवै**।

2. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर **होता था**। <-पूर्ण+भूत,+सामान्य>

कल (दिया हुआ) फूल **सुंदर था**। <+पूर्ण+भूत,-सामान्य>

मा. ओ. एहि गछर फूल सुंदर **हेउ थिला**।

कालि (देइ थिबा) फूल **सुंदर थिला**।

प. ओ. इ गछर फूल सुंदर **हेउ थिला**।

कालि (देइ थिबा) फूल **सुंदर थिला**।

छ. इ रुक के फूल सुंदर **होत रहिस**।

काल (के दे) फूल सुंदर **रहिस**।

3. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर **होता हो**। <-पूर्ण+संभावना,+सामान्य>

(आशा है कि) यह फूल सुंदर **हो**। <-पूर्ण+इच्छा,-सामान्य>

4. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर होता **होगा**। <-पूर्ण+अनुमान,+सामान्य>

यह फूल सुंदर **होगा**। <-पूर्ण+अनुमान,-सामान्य>

मा. ओ. एहि गछर फूल सुंदर हेउ **थिब**।

एहि फूलटि सुंदर **हेब**।

प. ओ. इ गछर फूल सुंदर हेउ **थिबा**।

इ फूल टा सुंदर **हेबा**।

छ. इ रुक के फूल सुंदर होथ **रहि**।

इ फूल हर सुंदर **होहि**।

7. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की कुछ संयुक्त क्रियाएँ ऐसी हैं, जिनमें प्रयुक्त रंजक क्रियाएँ मुख्य क्रिया द्वारा सूचित क्रिया-व्यापार के आंतरिक समयपरक अवयव (पक्ष) जैसे-आरंभ, सातत्य, समाप्ति आदि की सूचना देती हैं एवं

अपने कथ्य के प्रति वक्ता की अभिवृत्ति (वृत्ति) का द्योतन करती हैं।

7.1. संयुक्त क्रिया की संरचना

तीनों भाषाओं की संयुक्त क्रिया की संरचनाएँ निम्नलिखित हैं-

7.1.1. संरचना. 1

हि. वह खाता चलता है।
वे खाते चले हैं।

मा. ओ. से खाइ चालिछि। [मूल धातु-इ+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइ चालिछन्ति।

प. ओ. से खाइ चालिछे। [मूल धातु-इ+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइ चालिछन्।

छ. ओ खात तलथे। [मूल धातु-त+रंजक क्रिया]
ओमन खात चलथें।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के मूल धातु और /-इ/ प्रत्यय में समानता है। छत्तीसगढ़ी में मूल धातु के साथ /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

7.1. 2. संरचना. 2

हि. वह खाने लगा।
वे खाने लगे।

मा. ओ. से खाइबाकु लागिला। [मूल धातु-इबाकु+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइबाकु लागिले।

प. ओ. से खाइबार के लागला। [मूल धातु-इबारके+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइबार के लागले।

छ. ओ खाएबर लागिस। [मूल धातु-एबर+रंजक क्रिया]
ओमन खाएबर लागिन।

7. 2. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

तीनों भाषाओं की मुख्य रंजक क्रियाएँ निम्नलिखित हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
आ	आस	आस्	आ
उठ	उठ	उठ्	उठ्
कर	कर	कर्	कर्
चल	चाल	चाल्	चल्
जा	जा	जा	जा
दे	दे	दे	दे
ले	ने	ने	ले
डाल	पका	पका	ढ़ार्
सक	पार	पार्	सक्
बैठ	बस	बस्	बैठ्
रह	रह	रह्	रह्
लग	लाग	लाग्	लाग्

7. 2.1. रंजक क्रिया द्वारा सूचित पक्ष एवं वृत्ति

यहाँ पर हम मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के कुछ क्रियाओं का उदाहरण दे रहे हैं।

7. 2.1.1. आना- मा. ओ. (आस्), प. ओ. (आस्), छ. (आ)

<+समाप्ति>

हि.	मैं आम खा आया हूँ।
मा. ओ.	मुँ आम्ब खाइ आसिछि।
प. ओ.	मुइँ आम् खाइ आसिछें।
छ.	में आमा खा आए हौं।

इन उदाहरणों आस्, आस्, आ क्रिया अपना मूल अर्थ सूचित करने के साथ-साथ मूल क्रिया की समाप्ति की सूचना देती है।

<+सातत्य>

हि. हम बरसों से यहाँ पढ़ते आए हैं।

मा. ओ. आमे अनेक बर्ष हेला एठि पढ़ि आसुछु।

प. ओ. आमे बहुत बरस हेला न इन पढ़ि आसुछुँ।

छ. हामन बहुत बरस होइस न इकारा पढ़त आवथन।

यहाँ क्रिया-व्यापार की सातत्य की सूचना देती है।

<+समाप्ति+आसन्न+प्रत्यक्ष>

हि. शत्रु चढ़ा आता है।

मा. ओ. शत्रु माड़ि आसुछि।

प.ओ. शत्रु माड़ि आसुछे।

छ. शत्रु चेढ़ आवत थें।

यहाँ आना क्रिया प्रत्यक्ष आसन्नता की सूचना देती है।

7. 2.1. 2. उठना-मा. ओ. (उठ), प. ओ. (उठ्), छ. (उठ्)

<+प्रारंभ+शीघ्रता>

हि. मेरी कहानी सुन कर वह रो उठा।

मा. ओ. मो काहणी सुणि से कान्दि उठिला।

प. ओ. मोर कथानी सुनि करि से कान्दि उठला।

छ. मोर काथानी सुन के ओ रो उठिस।

रंजक क्रिया के रुप में उठना क्रिया मूल क्रिया के आरंभ की सूचना देने के साथ-साथ शीघ्रता से संपन्न होने की भी सूचना देती है।

7. 2.1. 3. करना-मा. ओ. (कर्), प. ओ. (कर्), छ. (कर्)

इन तीनों भाषाओं में मिश्र क्रिया जो मूल क्रिया के आंशिक द्विरुक्त रूप या समस्त

क्रिया रूप होते हैं, के साथ रंजक क्रिया 'करना' का प्रयोग वीप्सा के भाव को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। जैसे-

द्विरुक्त मिश्र क्रिया

हि.	वह पढ़ा करता है।
मा. ओ.	से पढ़ा पढ़ि करे।
प. ओ.	से पढ़ा पढ़ि करसि।
छ.	ओ पाढ़ा पढ़ि करथे।

7. 2.1. 4. चलना-मा. ओ. (चाल्), प. ओ. (चाल्), छ. (चल्)

<+सातत्य>

हि.	एक घंटे से पढ़ता चला है।
मा. ओ.	घंटे हेलाणि पढ़ि चालिछि।
प. ओ.	घंटे हेला न पढ़ि चालिछे।
छ.	एक घांटा ले पढ़त चलथे।

चलना मूल क्रिया के क्रिया-व्यापार के सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 5. जाना-मा. ओ. (जा), प. ओ. (जा), छ. (जा)

<+समाप्ति><+सातत्य><+आसन्न>

हि.	राम चला जाएगा।	खर्च बढ़ता जाएगा।	मैं भूख से मरा जा रहा हूँ।
मा. ओ.	राम चालि जिब।	खर्च बढ़ि जिब।	मुँ भोक रे मरि जाउछि।
प. ओ.	राम चालि जिबा।	खर्चा बढ़ि जिबा।	मुइँ भुखे मरि जाउछें।
छ.	राम चले जाहि।	खर्चा बढ़ जाहि।	में भूख में मर जावथँ।

इन तीनों भाषाओं में जाना मूल क्रिया की समाप्ति, सातत्य और आसन्न की सूचना देती है।

7. 2.1. 6. देना-मा. ओ. (दे), प. ओ. (दे), छ. (दे)

<+अनुज्ञा>

हि. गोपाल को खाने दो।

मा. ओ. गोपाल कु खाइबाकु दिअ।

प. ओ. गोपाल के खाइबार के दिअ।

छ. गोपाल ला खाएबर द।

इन भाषाओं में देना क्रिया अनुज्ञा वृत्ति की सूचना देती है।

7. 2.1. 7. बैठना-मा. ओ. (बस्), प. ओ. (बस्), छ. (बैठ)

<+आरंभ, +सातत्य>

हि. वह तो पूरी कहानी कह बैठा।

मा. ओ. से त पूरा काहाणी कहि बसिला।

प. ओ. से त पूरा कथानी कहि बसला।

छ. ओ त पूरा काथानी कह बैठिस्।

तीनों भाषाओं में यह मूल क्रिया के आरंभ एवं सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 8. रहना- मा. ओ. (रह), प. ओ. (रह), छ. (र)

<+सातत्य>

हि. घड़ि मेज पर रखी रहती है।

मा. ओ. घन्टा मेज उपरे पड़ि रहुछि।

प. ओ. घन्टा मेज उपरे पड़ि रहिसि।

छ. घड़ि मेज उपर में पड़े रथे।

रंजक क्रिया 'रहना' मूल क्रिया के सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 9. लगाना-मा. ओ. (लाग्), प. ओ. (लाग्), छ. (लाग्)

<+आरंभ, +सातत्य>

हि.	वह आने लगा।
मा. ओ.	से आसिबाकु लागिला।
प. ओ.	से आसबार के लागला।
छ.	ओ आएबर लागिस।

रंजक क्रिया 'लगना' मूल क्रिया के प्रारंभ एवं सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1.10. सकना-मा. ओ. (पार्), प. ओ. (पार्), छ. (सक्)

<+सामर्थ्य>

हि.	मैं जा सकूंगा।
मा. ओ.	मुँ जाइ पारिबि।
प. ओ.	मुइँ जाइ पारमि।
छ.	में जान सकिहौं।

रंजक क्रिया 'सकना' मूल क्रिया के संपादन में कर्ता के सामर्थ्य की सूचना देती है।

8. नकारात्मक क्रियारूप

नकारात्मक क्रियारुप में वक्ता किसी कार्य को न करने का आदेश देता है। सामान्यत: यह माना जाता है कि प्रत्येक भाषा के नकारात्मक वाक्य उनके मूल स्वीकारात्मक वाक्य के नकारात्मक रचनांतरण मात्र हैं।[19] मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में वाक्यों का नकारात्मक रचनांतरण मुख्य रूप से क्रिया पदबंधों का नकारात्मक रचनांतरण ही है। यद्यपि क्रिया पदबंधों का नकारात्मक रचनांतरण पक्ष, काल और वृत्ति पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता, फिर भी पक्ष, काल और वृत्ति के अनुसार नकारात्मक प्रत्ययों के रूप एवं प्रयोग में भिन्नता आ जाती है। यहाँ यही भिन्नता दिखाने के लिए तीनों भाषाओं के क्रिया पदबंधों के नकारात्मक रुपों का विश्लेषण किया जा रहा है।

8.1. नकारात्मक रचनांतरण नियम-1

मा. ओ. [धातु-{पक्ष}+नाह-{व.पु}]

प. ओ. [धातु-{पक्ष}+नाइ-{व.पु}]

छ. [धातु-{पक्ष}+नइ-{व.पु}]

हि.	वह **नहीं** जाता है।	तू **नहीं** जाता है।	वे **नहीं** जाते हैं।
मा. ओ.	से जाउ **नाहीं**~जाउ**नि**।	तु जाउ **नाहूँ**~जाउ**नुँ**।	सेमाने जाउ **नाहान्ति**।
प. ओ.	से **नाइं** जिबार।	तुइँ **नाइँ** जिबार।	सेमाने **नाइँ**जिबार।
छ.	ओ **नइ** जावथे।	तें **नइ** जावथस्।	ओमन **नइ** जावथें।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि सरंचना की दृष्टि से पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में समानता है। नकारात्मक शब्द प. ओ. के (नाइँ) और छ. के (नइ) का प्रयोग क्रिया के पूर्व होता है तथा तीनों स्थितियों में समान है। जबकि मानक ओड़िआ के (नाहिं, नाहुँ, नाहान्ति) का प्रयोग क्रिया के बाद होता है।

8. 2. नाकारात्मक रचनांतरण नियम-2

मा. ओ. [धातु-{पक्ष}+न-स.क्रिया]

प. ओ. [धातु-{पक्ष}+ना-स.क्रिया]

छ. [धातु-{पक्ष}+नि-स.क्रिया]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
नहीं जाता था।	जाउ **न** थिला।	**ना** जाउ थिला।	**नइ** जावत रहिस।
नहीं जाता था।	जाउ **न** थाए।	**ना** जाउ थाए।	**नइ** जावत रहिस।
नहीं जाता होगा।	जाउ **न** थिब।	**ना** जाउ थिबा।	**नइ** जावत रहि।
नहीं जाता होता।	जाउ **न** थाआन्ता।	**ना** जाउ थिता।	**नइ** जावत रतिस।
न जाए।	जाउ **न** थाउ।	**ना** जाउ थाउ।	**नइ** जाए होहि।

इस दृष्टि से भी पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में समानता है।

8. 3. नकारात्मक रचनांतरण नियम-3

मा. ओ. [न+अनुज्ञा रुप]

प. ओ. [ना+अनुज्ञा रुप]

छ. [नि+अनुज्ञा रुप]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
न पढ़े	**न** पढ़ु	**ना** पढ़ु	**नइ** पढ़े
न पढ़	**न** पढ़	**ना** पढ़	**नइ** पढ़
न पढ़िए	**न** पढ़न्तु	**ना** पढ़ुन	**नइ** पढ़

8. 4. नकारात्मक रचनांतरण नियम-4

मा. ओ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+नाहिं]

प. ओ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+ना]

छ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+नइ]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
नहीं जाता है।	**जाए** नाहिं।	**ना** जाए।	**नइ** जाए।

8. 5. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया के नकारात्मक रूप

8. 5.1. स्थितिवाचक क्रिया के नकारात्मक रूप

मा. ओ. [नाह्-{व.पु}]

प. ओ. [नाइं--{व.पु}]

छ. [नइ-{व.पु}]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं **नहीं** हूँ।	मुँ **नाहिं**।	मुइँ **नाइँन**।	में **नइन** ।
तू **नहीं** है।	तु **नाहिं**।	तुइँ **नाइँन**।	तें **नइन**।
वो **नहीं** है।	से **नाहिं**।	से **नाइँन**।	ओ **नइन**।

मा. ओ. [न+शेष रुप]

प. ओ. [ना+शेष रुप]

छ. [नि+शेष रुप]

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

वह स्कूल में **नहीं** था। से स्कूल रे **न** थिला। से स्कूल रे **ना** थिला। ओ स्कूल में **नइ** रहिस।

वह स्कूल में **नहीं** था। से स्कूल रे **न** थाए। से स्कूल रे **ना** थाए। ओ स्कूल में **नइ** रहे।

वह स्कूल में **ना** होगा। से स्कूल रे **न** थिब। से स्कूल रे **ना** थिबा। ओ स्कूल में **नइ** रहि।

वह स्कूल में **न** हो। से स्कूल रे **न** थाउ। से स्कूल रे **ना** थाउ। ओ स्कूल में **नइ** रहि।

वह स्कूल में **न** होता। से स्कूल रे **न** थाआन्ता। से स्कूल रे **ना** थिता। वो स्कूल में **नइ** होतिस।

8. 5. 2. अस्तित्ववाचक क्रिया का नकारात्मक रूप

मा. ओ. 1. [नुह-शेष व.पु]

2. [नोह-/-उँ/]

प. ओ. [नुह-शेष व.पु]

छ. [नइ-शेष व.पु]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं **नहीं** हूँ।	मुँ **नुहें**।	मुइँ **नुहें**।	में **नइ** हावौं।
तू **नहीं** है।	तु **नोहुँ**।	तुइँ **नुहें**।	तें **नइ** हवस।

मा. ओ. [न+शेष रूप]

प. ओ. [ना+शेष रूप]

छ. [नइ+शेष रूप]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह चोर **नहीं** था।	से चोर **न** थिला।	से चोर **ना** थिला।	ओ चोर **नइ** रहिस।
वह चोर **नहीं** था।	से चोर **न** थाए।	से चोर **ना** थाए।	ओ चोर **नइ** रहे।
वह चोर **न** हो।	से चोर **न** थाउ।	से चोर **ना** थाउ।	ओ चोर **नइ** होऐ।

वह चोर **न** होगा। से चोर **न** हेब। से चोर **ना** हेबा। ओ चोर **नइ** होहि।

वह चोर **न** होता। से चोर **न** हुअन्ता। से चोर **ना** हेता। ओ चोर **नइ** होतिस।

8. 5. 3. संयुक्त क्रिया की नकारात्मकता

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नकारात्मक तत्वों का प्रयोग होता है, तब रंजक क्रिया का प्रयोग नहीं होता है। ऐसी स्थिति में संयुक्त क्रिया में निम्न प्रकार से रूपगत और अर्थगत परिवर्तन होता है।

8. 5. 3.1. रूपगत परिवर्तन

तीनों भाषाओं की संयुक्त क्रिया की मूल क्रिया रंजक क्रिया के अनुरूप रूप लेती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं खेलता **नहीं** हूँ।	मुँ खेले **नाहिं**।	मुइँ **नाइँ** खेले।	में **नइ** खेलं।

8. 5. 3. 2. अर्थगत परिवर्तन

नकारात्मक रुपों में रंजक क्रिया का प्रयोग नहीं होने के कारण तीनों भाषाओं में मूल संयूक्त क्रिया की रंजक क्रिया द्वारा सूचित विशेष पक्ष-वृत्ति नकारात्मक रूप द्वारा सूचित नहीं होती। इन भाषाओं की संयुक्त क्रिया के नकारात्मक रचनांतरण में निम्नलिखित संदर्भ में रंजक क्रिया बनी रहती है-

हि.	मैं अकेले खा **नहीं** सकता।
मा. ओ.	मुँ एका खाइ पारिबि **नाहिं**।
प. ओ.	मुइँ एकला खाइ **नाइँ** पारें।
छ.	में एकला **नइ** खान सकं।

इस प्रकार हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता।

निष्कर्ष

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। इन तीनों भाषाओं में काल, पक्ष और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रिया-पदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रिया-पदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होता है। पूर्ण सूचक प्रत्यय की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा इन दोनों भाषाओं में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-ए/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। अपूर्ण सूचक प्रत्यय /-इ/ और /-उ/ मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त होते हैं। छत्तीसगढ़ी में /-ए/ और /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। काल सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना की दृष्टि से इन तीनों भाषाओं में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के अनुज्ञा (था, थाअ), भूत-अतीत (थिला, थिले) एवं अनुमान/संभावना (थिबा, थिबे) आदि काल/पक्ष सूचक क्रियाओं में समानता है। छत्तीसगढ़ी में (आहँ, आँहन, रिहिस, रिहिं) आदि का प्रयोग होता है। मानक ओड़िआ के /-इल्-/, /-इब्/, पश्चिमी ओड़िआ के /-अल्-/, /-अम्-/, /-अत्-/ और छत्तीसगढ़ी के /-इस्-/, /-इत्-/ काल सूचक पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के साथ समानता रखती है। मानक ओड़िआ में नियत्व एवं अनुज्ञा को छोड़कर शेष पक्ष निरपेक्ष क्रियारुपों के अंत में कुछ विशेष संदर्भ में /-णि/ का प्रयोग होता है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में /-न/ का प्रयोग होता है। ये प्रत्यय भविष्यत् काल सूचक क्रिया रूप के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-व्यापार की पूर्णता की सूचना देते हैं। मानक ओड़िआ में /-टि/ समापिका क्रिया रुपों के पश्चात प्रयुक्त होने पर क्रिया के घटित होने की निश्चितता की सूचना मिलती है। लेकिन पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में यथाक्रम /काएँ/, /का/ आदि प्रश्नवाचक शब्दों का प्रयोग होता है। नकारात्मक क्रियारुप की दृष्टि से तीनों भाषाओं में समानता नहीं है। मानक ओड़िआ में

(नाहिं, नाहुँ, नाहान्ति), पश्चिमी ओड़िआ में (नाइँ) और छत्तीसगढ़ी में (नि) का प्रयोग होता है। हिन्दी की भाँति पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नकारात्मक शब्दों का प्रयोग क्रिया के बाद होता है, जबकि मानक ओड़िआ में क्रिया के पूर्व। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता है। अगले अध्याय में इन भाषाओं के वाच्य संरचना का अध्ययन किया जाएगा।

संदर्भ

1. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-330

2. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-199

3. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-330-331

4. वर्मा, सत्यकाम-व्याकरण की दार्शनिक भूमिका-पृ. सं.-429

5. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-331

6. वर्मा, सत्यकाम-व्याकरण की दार्शनिक भूमिका-पृ. सं.-429

7. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-260

8. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-318

9. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-155

10. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-201

11. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-201

12. वर्मा, रामलाल-हिन्दी असमिया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-187

13. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण-पृ. सं.-13-132

14. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-324

15. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-324

16. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-166

17. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-166

18. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-167

19. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-185

चतुर्थ अध्याय

क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति)

पिछले अध्याय में मैंने नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष और कारक) का विश्लेषण किया है। प्रस्तुत अध्याय में क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष और वृत्ति) का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे।

प्रत्येक भाषा में वाक्य को ही भाषा की प्रमुख इकाई माना जाता है। वाक्य के कई अंश होते हैं, किन्तु वाक्य का अंश 'क्रिया' है। वास्तव में क्रिया ही भाषिक व्यवहार का केन्द्र बिन्दु होती है। क्रिया के बिना वाक्य अधूरा होता है, अर्थात् क्रिया-विहीन वाक्य की कल्पना नहीं कर सकते। सामान्यत: वाक्य के सारे शब्द क्रिया से संबद्ध होते हैं, किन्तु वाक्य में क्रिया का संबंध काल, वृत्ति और पक्ष इन तीन व्याकरणिक संवर्गों से निकटता है। क्रिया के द्वारा ही किसी काल विशेष की सूचना मिलती है, क्रिया किसी वृत्ति में रहती है तथा उसमें पूर्ण या अपूर्ण पक्ष होते हैं।

1. काल

क्रिया के जिस रूप से क्रिया-व्यापार के घटित होने के समय की सूचना मिलती है, उसे 'काल' कहा जाता है। काल वह समयवाची तत्व है, जिसमें क्रिया घटित होती है। यह कार्य समय का बोध कराता है। काल कोटि की सत्ता सामान्यत: क्रिया रूपों द्वारा व्यक्त होती हैं। अर्थात् वाक्य संरचना में इसका अस्तित्व क्रिया रुपों के घटकों से व्याप्त रहता है। काल और क्रिया का अभिन्न संबंध है। 'काल' की यह धारणा यादृच्छिक है, जो विभिन्न संकेतों द्वारा भाषा विशेष में अभिव्यक्त होती है। हमारा तात्पर्य इसी 'काल' से है जो व्याकरणिक कोटि से संबंध रखता है। अत: इस काल कोटि के अंतर्गत तीन कालों की धारणा विश्व के विद्वान स्वीकार करते हैं। ये तीन काल हैं-

1. भूतकाल
2. वर्तमानकाल

3. भविष्यत् काल

1.1. वर्तमान काल

भाषा के संदर्भ में काल मापन का केन्द्र बिन्दु वर्तमान काल है। कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भूतकाल के अंत और भविष्यत काल के आरंभ बीच का कोई भी समय वर्तमान काल कहलाता है"।[1] वर्तमान काल की सीमा कैसे निर्धारित करें? क्योंकि वर्तमान काल एक क्षण का भी होता है और अनन्त समय का भी। इसी समस्या को रवीन्द्र श्रीवास्तव ने इस प्रकार स्पष्ट किया है-"वर्तमान की सीमारेखा को निश्चित करना कठिन है, क्योंकि इसकी स्थिति धूप-छावँ के समान है, जहाँ एक ओर भूत तथा दूसरी ओर भविष्यत् होता है। वर्तमान की स्थिति ज्यामितिक शास्त्र के बिन्दु के समान है"।[2] इससे स्पष्ट है कि सैद्धान्तिक स्तर पर वर्तमान काल की सीमारेखा को निश्चित करना एक समस्या है। किन्तु व्यावाहारिक स्तर पर देखा जाता है कि वर्तमान काल का अस्तित्व एक निश्चित कालावधि तक फैला रहता है। इसे हम 'वर्तमान काल' कह सकते हैं। अत: वर्तमान काल से हमारा तात्पर्य क्रिया व्यापार की वर्तमान घटना से है, जो लेखक या वक्ता के बोलने अथवा लिखने के आधार पर निर्धारित होती है। इस दृष्टि से वर्तमान एक क्षण का भी हो सकता है तथा लम्बी अवधि का भी। सामान्यत: प्रत्येक भाषा में वर्तमान काल के चार भेद होते हैं। जिनका विवेचन निचे किया जा रहा है-

1.1.1. सामान्य वर्तमान काल

क्रिया के जिस रूप से वर्तमान काल की क्रिया का सामान्य रूप से होना पाया जाए, उसे सामान्य वर्तमान काल कहा जाता है। जैसे-

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाता हूँ।	मूँ जाएँ।	मुइँ जाएसिं।	में जाथ हौं।
तू जाता है।	तू जाउ।	तुइँ जाएसु।	तें जाथ हस।
वह जाता है।	से जाए।	से जाएसि।	ओ जात हय।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम जाते हैं।	आमें जाउँ।	आमें जाएसुँ।	हमन जाथन।
तुम जाते हो।	तुमे जाअ।	तुमें जाएस।	तुमन जाथ।
वे जाते हैं।	सेमाने जाआन्ति।	सेमाने जाएसन।	ओमन जाथें।

उपरोक्त उदाहरणों से हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के सामान्य वर्तमान काल में क्रिया रचना की तुलनात्मक स्थिति को इस प्रकार दिखाया जा सकता है-

हि.-धातु+त्+लिंग, वचन प्रभावित प्रत्यय आ, ई, ए+सहायक क्रिया 'होना' का कोई रुप।

सूत्र - धातु+त्+आ, ई, ए+हूं, है, हो, हैं।

मा. ओ. - धातु+ए+वचन, पुरुष प्रभावित प्रत्यय एँ, उ, ए, अ, न्ति।

सूत्र - धातु+ए+एँ, उ, ए, अ, न्ति।

प. ओ. - धातु+एस्+वचन, पुरुष प्रभावित इ, उ, उँ, अ।

सूत्र - धातु+एस+इ, उ, उँ, अ।

छ. - धातु+थ्+वचन, पुरुष प्रभावित प्रत्यय अ, अँ, ए।

सूत्र - धातु+थ्+अ, अँ, ए।

सामान्य वर्तमान काल के बहुवचन में हिन्दी की सकर्मक अकर्मक दोनों प्रकार की क्रिया कर्ता के लिंग से प्रभावित होती है, जबकि इन तीनों भाषाओं में इस काल के एकवचन या बहुवचन में क्रिया सकर्मक हो या अकर्मक हो कर्ता के लिंग का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है तथा तीनों भाषाओं में असमानता भी है।

1.1. 2. अपूर्ण वर्तमान काल

क्रिया के इस रूप से यह सूचित होता है कि क्रिया चालू है या अपूर्ण अवस्था में है। क्रिया का व्यापार चल रहा है। जैसे-

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं कर रहा हूँ।	मुँ करुछि।	मुइँ करुछें।	में करथँ।
तू कर रहा है।	तु करुछु।	तुइँ करुछु।	तें करथस।
वह कर रहा है।	से करुछि।	से करुछे।	ओ करथे।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम कर रहे हैं।	आमे करुछु।	आमे करुछुँ।	हमन करथन।
तुम कर रहे हो।	तुमे करुछ।	तुमे करुछ।	तुमन करथ्।
वे कर रहे हैं।	सेमाने करुछन्ति।	सेमाने करुछन्।	ओमन करथें।

हिन्दी में अपूर्ण वर्तमान काल की रचना में मुख्य क्रिया के साथ दो सहायक क्रियाएँ अनिवार्य रूप से आती हैं, जबकि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इस काल की रचना करते समय केवल एक ही सहायक क्रिया से बनी संयुक्त क्रियाएँ आती हैं तथा तीनों भाषाओं में रचनागत भिन्नता है। जैसे-

कर् धातु-करना

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
कर्+त=करत	कर+उछि=करुछि	कर्+उछें=करुछें	कर्+अथँ=करथँ
	कर+उछु=करुछु	कर्+उछु=करुछु	कर्+अथस्=करथस्
	कर्+उछन्ति=करुछन्ति	करु+छन्=करुछन्	कर्+अथें=करथें

इस प्रकार तीनों भाषाओं में केवल एक ही सहायक क्रिया प्रयुक्त होती है।

1.1. 3. पूर्ण वर्तमान काल

पूर्ण वर्तमान काल की क्रिया से यह सूचित होता है कि क्रिया पूर्ण हुई है। जैसे-

मैंनें खाना खाया है।

इस वाक्य में एक बात द्रष्टव्य है कि 'खाया है' क्रिया में दो शब्द हैं। इनमें से

पहला 'खाया' भूतकाल का रूप है और दूसरा 'है' होना का रूप है। इन रुपों से यह सूचना मिलती है कि क्रिया पूर्ण हो गयी है।

एकवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं गया हूँ।	मुँ जाइछि।	मुइँ जाइछें।	में गये हँ।
तू गया है।	तु जाइछु।	तुइँ जाइछु।	तें गये हस।
वो गया है।	से जाइछि।	से जाइछे।	ओ गिसे।

बहुवचन

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
हम गये हैं।	आमे जाइछुँ।	आमें जाइछुँ।	हमन गये हन।
तुम गये हो।	तुमे जाइछ।	तुमें जाइछ।	तुमन गये ह।
वे गये हैं।	सेमाने जाइछन्ति।	सेमाने जाइछन्।	ओमन गिन हैं।

सूत्र

हि. धातु+भूतकालिक प्रत्यय आ, ए, ई+हूँ, है, हो, हैं।

मा. ओ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय इ+छि, छु, छुँ, छ, छन्ति।

प. ओ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय इ+छें, छु, छे, छन।

छ. धातु+भूतकालिक प्रत्यय ए+हँ, हस, है, हन, ह, हैं।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के भूतकालिक प्रत्यय 'इ' में समानता है, लेकिन हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में भूतकालिक प्रत्तयय 'ए' का प्रयोग होता है।

1.1. 4. रीति वर्तमान काल

इस काल से यह जाना जाता है कि क्रिया एक लंबे समय से होती है। जैसे-

वह आ रही है।

वह चलता आ रहा है।

हिन्दी में रीति वर्तमान काल और रीति भूतकाल का अर्थ सहायक क्रियाओं द्वारा प्रगट होता है। जैसे-

हि.	मैं रोज किताब पढ़ा करता हूँ।
मा. ओ.	मुँ सबुदिन बहि पढ़ें।
प. ओ.	मुइँ सबुदिन बहि पढ़सिं।
छ.	में सबेदिन किताब पढ़थँ।

इस काल का सूत्र इस प्रकार बनाया जा सकता है।

हि. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त+कर का वर्तमान कृदंत+होना का सहायक वर्तमान रूप।

मा. ओ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

प. ओ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

छ. मुख्य क्रिया का भूतकालिक कृदन्त।

इस प्रकार इन तीनों भाषाओं में कुछ समानता भी है।

1. 2. भूतकाल

भूतकाल का निर्धारक 'वर्तमान' ही होता है। वर्तमान से पूर्व जो घटना घटित हो चुका है वह भूतकाल के अन्तर्गत आती है। भूतकाल के संबंध में कोई मतभेद दृष्टिगत नहीं होता क्योंकि जो अवर्तमान है और पहले ही घटित हो चुका है, वह अतीत 'भूतकाल' है। इस संबंध में कुछ विद्वानों के विचार द्रष्टव्य है-

कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भूतकाल से यह जाना जाता है कि व्यापार बोलने या लिखने से पहले हो चुका है"।[3]

सत्यकाम वर्मा के अनुसार-"भूत उसे कहते हैं जिसके रहने पर किसी सत्ता के जन्म की कल्पना नहीं की जा सकती। सत्ता से तात्पर्य क्रिया से है न कि वस्तु से"।[4]

उक्त दोनों परिभाषाओं से स्पष्ट है कि वक्ता के बोलने या लिखने के पूर्व जो कार्य हो गया या घटना घटित हो गई है, वह भूतकाल के अन्तर्गत आती है। भूतकाल के भी

चार भेद हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. 2.1. सामान्य भूतकाल

जिस क्रिया रूप से यह ज्ञात होता है कि क्रिया का कार्य हो गया है, उसे सामान्य भूतकाल कहते हैं। जैसे-

गोपाल गया।

तुम आये।

हिन्दी में सामान्य भूतकाल की रचना क्रिया के रूप में 'आ' प्रत्यय लगाने से होती है। इसके चार संरुप मिलते हैं-

पु. ए. आ	स्त्री. ए. ई
पु. ब. ए	स्त्री. ब. ई

मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी के वितरण इस प्रकार है-

	हि.		मा. ओ.		प. ओ.		छ.	
	ए.	ब.	ए.	ब.	ए.	ब.	ए.	ब.
पु.	गया	गये	गला	गले	गला	गले	गिस	गिन
स्त्री.	गयी	गयीं	गला	गले	गला	गले	गिस	गिन

ऊपरलिखित संरुपों का वितरण लिंग तथा वचन के आधार पर है। हिन्दी के लिंग के अनुसार वचन और क्रिया भी प्रभावित होते हैं, लेकिन इन तीनों भाषाओं में प्रभावित नहीं होते। इस प्रकार मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के सामान्य भूतकाल के वितरण में समानता है।

1. 2. 2. अपूर्ण भूतकाल

क्रिया के इस रूप से यह जाना जाता है कि क्रिया अतीत काल में हुई है। लेकिन यह पता नहीं चलता कि क्रिया की पूर्ति कब हुई, क्रिया कुछ समय से अनुवर्तित हो रही थी। उसे अपूर्ण भूतकाल कहते हैं। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं फल खाता था।	मुँ फल खाउ थिलि।	मुइँ फल खाउथिलिं।	में फर खात रहें।
तुम किताब पढ़ते थे।	तु बहि पढ़ु थिल।	तुइँ बहि पढ़ु थिलु।	ते किताब पढ़त रहे।
वह क्रिकेट खेलता था।	से क्रिकेट खेलुथिला।	से क्रिकेट खेलुथिला।	ओ क्रिकेट खेलत रहिस।

कालसूचक सहायक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
खात+थ-(आ)	खाउ+थिल्-(इ)	खाउ+थिल्-(इं)	खात+रह-(एं)
पढ़ते+थ-(ए)	पढ़ु+थिल्-(उ)	पढ़ु+थिल्-(उ)	पढ़त+रह-(ए)
खेलता+थ-(आ)	खेलु+थिल्-(आ)	खेलु+थिल्-(आ)	खेलत+रह्-(इस)

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिन्दी की (थ), मानक ओड़िआ कि (थिल्), पश्चिमी ओड़िआ की (थिल्) और छत्तीसगढ़ी की (रह) सहायक क्रिया के रुप में नियमित रूप से दृष्टिगत होती हैं। हिन्दी का (आ, ए), मानक ओड़िआ का (इ, उ, आ), पश्चिमी ओड़िआ का (इं, उ, आ) और छत्तीसगढ़ी का (एं, ए, इस) अपूर्ण भूतकाल सूचक प्रत्यय हैं।

1. 2. 3. पूर्ण भूतकाल

क्रिया के इस रुप से कार्य पूरा हो जाने का बोध होता है, उसे पूर्ण भूतकाल कहते हैं। हिन्दी में पूर्ण भूतकाल के रूपों के साथ 'होना' सहायक क्रिया के भूतकालिक रुपों के जोड़ने से होती है। जैसे-

हि.	मा. ओ	प. ओ.	छ.
मैं राजा था।	मुँ राजा थिलि।	मुइँ रजा थिलि।	में राजा रहें।
तु पढ़ा था।	तु पढ़ि थिलु।	तुइँ पढ़ि थिलु।	तें पढ़े रहे।
वह ड़ाक्टर था।	से ड़ाक्टर थिला।	से ड़ाक्टर थिला।	ओ ड़ाक्टर रहिस।

कालसूचक सहायक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
थ-(आ)	ल-(इ)	ल-(इ)	ह-(एं)
थ-(आ)	ल-(उ)	ल-(उ)	ह-(ए)
थ-(आ)	ल-(आ)	ल-(आ)	ह-(इस)

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

1. 2. 4. रीति भूतकाल

क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाता है कि क्रिया बहुत लम्बे से होती आ रही है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाया करता था।	मुँ जाउथिलि।	मुइँ जाउ थिलिं।	में जात रहें।
तू खाया करता था।	तु खाउ थिलु।	तुइँ खाउ थिलु।	तें खात रहे।
वो पढ़ा करता था।	से पढ़ु थिला।	से पढ़ु थिला।	वो पढ़त रहिस।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी पूर्ण भूतकाल के साथ समानता रखती हैं।

1. 3. भविष्यत् काल

सामान्यतः भविष्यत् काल से तात्पर्य भावी घटना से है। इसकी स्थिति भूतकाल के ठीक विपरीत है। दूसरे इसका संबंध अप्रत्यक्ष तथा अदर्शन से है। इस दृष्टि से यह भूतकाल के समान है, क्योंकि भूत काल भी अप्रत्यक्ष होता है। परंतु भूतकाल का संबंध विगत घटनाओं से है। इससे यह ज्ञात होता है कि क्रिया व्यापार आरंभ होने वाला है। भविष्यत् काल के संबंध में कुछ विद्वानों के विचार द्रष्टव्य है-

कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"भविष्यत् काल की क्रिया से ज्ञात होता है कि व्यापार होनेवाला है"।[5]

सत्यकाम वर्मा के अनुसार-"भविष्यत् काल वह है जो जन्म की सत्ता में बाधक

नहीं होता। अर्थात् जन्म (क्रिया निष्पादन) की संभावना बनी रहती है"।[6]

इन परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि क्रिया व्यापार का आरंभ भविष्यत् में हो, काल की इस स्थिति को भाषा में भविष्यत् रुप माना जाता है। भविष्यत् काल के निम्नलिखित भेद हैं-

1. 3.1. सामान्य भविष्यत् काल

हिन्दी में इस काल की रचना करते समय मुख्य क्रिया में भविष्यत् काल के प्रत्यय जुड़ जाते हैं। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं जाऊंगा।	मुँ जिबि।	मुइँ जिमी।	में जाहाँ।
तू जाएगा।	तु जिबु।	तुइँ जिबु।	तें जाबे।
वह जाएगा।	से जिबा।	से जिबा।	ओ जाहि।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है। हिन्दी के क्रियाओं में लिंग, वचन, पुरुष तीनों का प्रभाव दिखाई देता है, जबकि इन तीनों भाषाओं में भविष्यत् काल की क्रियाओं पर केवल वचन और पुरुष का ही प्रभाव होता है।

1. 3.1. अपूर्ण भविष्यत् काल

हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में अपूर्ण भविष्यत् काल में क्रिया का एक ही रूप प्रयोग होता है। इस काल की रचना करते समय हिन्दी में एक मुख्य क्रिया तथा दो सहायक क्रियाएँ आती हैं, जबकि इन तीनों भाषाओं में मुख्य क्रिया और एक सहायक क्रिया ही आती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वे आ रहे होंगे।	सेमाने आसुथिबे।	सेमाने आसुथिबे।	ओमन आत रहिं।
हम लिख रहे होंगे।	आमें लेखु थिबु।	आमें लेखु थिमुँ।	हमन लिखत रबो।
तू खेल रहा होगा।	तु खेलु थिबु।	तुइँ खेलु थिबु।	तें खेलत रबे।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

1. 3. 3. रीति भविष्यत् काल

इस काल की रचना के लिए हिन्दी में भूतकालिक कृदन्त+कर सहायक क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल के रूप आते हैं। जैसे-

वह किया करेगा।

ऐसा प्रयोग मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है।

इस प्रकार काल तीन होते हैं। काल से हमारा तात्पर्य भाषा अध्ययन के काल से है, जो एक व्याकरणिक संवर्ग है। कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"क्रिया के उस रुपातंर को काल कहते हैं, जिससे क्रिया के व्यापार का समय तथा उसकी पूर्ण व अपूर्ण अवस्था का बोध होता है"।[7]

भाषा के संदर्भ में कालबोध का मुख्य आधार क्रिया व्यापार की घटना से संबधित है। यदि घटना का संबंध आज या अब से है तो 'वर्तमान काल' और उसके पूर्व है तो 'भूत काल' तथा बाद में है तो वो 'भविष्यत् काल' माना जाता है।

2. पक्ष

'पक्ष' शब्द अंग्रेजी के 'Aspect' का अनुवाद है। परंपरागत व्याकरणों में पक्ष को क्रियारुप के एक स्वतंत्र तत्व या व्याकरणिक संवर्ग के रुप में शामिल नहीं किया गया है। क्रियारुप के इस तत्व को अप्रत्यक्ष रुप से काल 'tense' में ही निहित माना जाता रहा है।[8] लेकिन हमने इसे एक व्याकरणिक संवर्ग के रूप में लिया है। काल सूचक तत्व घटना के क्रिया-व्यापार के घटित होने के बाह्य समय की सूचना देते हैं। अर्थात् 'काल' से यह सूचना मिलती है कि समय के धरातल पर क्रिया-व्यापार कहाँ घटित हो रहा है। किन्तु घटना को क्रिया व्यापार के आंतरिक समय सूचक तत्व की दृष्टि से भी देखा जाता है। इस दृष्टि से कुछ क्रियारुप क्रिया-व्यापार को समग्र रुप से उपस्थित कराते हैं। उसकी आद्य, मध्य या अंतिम स्थितियों की सूचना नहीं देते। इसके विपरीत कुछ क्रियारुप क्रिया-व्यापार के आरंभ, सातत्य, समाप्ति आदि लक्षणों की सूचना देते हैं।

दुर्योधन महारणा के अनुसार-"क्रिया व्यापार के इन आंतरिक समय सूचक तत्वों को विभिन्न दृष्टिकोण से देखना 'पक्ष' कहलाता है"।[9]

काल और पक्ष का घनिष्ट संबंध है। रवीन्द्र श्रीवास्तव के अनुसार-"काल-बोध को हम दो स्तरों पर ग्रहण करते हैं, एक वह स्तर जिससे यह पता चलता है कि समय के धरातल पर व्यापार कहाँ घटित हो रहा है। अगर क्रिया-व्यापार अब और आज के बोध से संपृक्त होकर व्यक्त होता है तो वर्तमान काल और अगर वह वर्तमान के पूर्व की स्थिति में है तो भूतकाल तथा उसके बाद की स्थिति में है तो भविष्यत् काल के रुप में स्वीकृत होता है। काल-बोध का दूसरा स्तर वह है जो क्रिया-व्यापार में आयुक्त समय विस्तार (कालावधि) के बोध को निर्धारित एवं नियंत्रित करता है जिसे व्याकरण में 'पक्ष' कहते हैं"।[10] इस प्रकार काल और पक्ष का घनिष्ट संपर्क है। पक्ष को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. अस्तित्व बोधक
2. अपूर्ण पक्ष
    - 2.1 नित्यता बोधत
    - 2.2 आरंभ बोधक
    - 2.3 प्रगति बोधक
    - 2.4 अभ्यास बोधक
3. पूर्ण पक्ष

हम अब मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इन्हीं पक्षों को स्वीकारते हुए उनका विश्लेषण करेंगे।

2.1. अस्तित्वबोधक पक्ष

इस पक्ष के अन्तर्गत क्रिया का व्यापार व्यक्त नहीं होता, किन्तु पदार्थ या विषय की सत्ता या स्थिति का बोध होता है, जो अस्तित्व स्थिति का द्योतक है। यह अस्तित्व

चिरंतन एवं क्षणिक दोनों तरह का हो सकता है, दूसरे इसमें क्रिया के आदि एवं अंत का बोध नहीं होता अपितु स्थिति मात्र का द्योतन होता है। रवीन्द्र श्रीवास्तव के अनुसार- "अस्तित्व विधेय मूलतः (-सीमित) होते हैं, क्योंकि इसकी कालावधि निर्धारित होती हैं। विशेष रूप से वर्तमानकालिक अस्तित्वबोधक क्रिया में कालावधि के आदि और अंत को सीमित नहीं किया जा सकता है"।[11] जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
भगवान है।	भगवान अछि।	भगवान अछे।	भगवान हवै।
सीता है।	सीता अछि।	सीता अछे।	सीता हवै।
वह पुलिस है।	से पोलिस अछि।	से पुलिस अछे।	ओ पुलिस हवै।
वहाँ स्कूल है।	सेठि स्कूल अछि।	सेन स्कूल अछे।	ओकारा स्कूल हवै।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिन्दी में अस्तित्व द्योतक 'ह-' क्रिया का प्रयोग अनिवार्य घटक के रूप में होता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'अछ्-' तथा छत्तीसगढ़ी में 'हव-' का प्रयोग होता है।

2. 2. अपूर्ण पक्ष

जब हम घटना को भीतरी दृष्टि से देखते हैं तो क्रिया व्यापार की विभिन्न स्थितियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित रहता है। अतः ये विभिन्न स्थितियाँ अपूर्ण पक्ष की द्योतक होती हैं, जो क्रिया रुपों द्वारा व्यक्त होती हैं। अपूर्ण पक्ष के अन्तर्गत चूँकि क्रिया-व्यापार की विभिन्न स्थिति दृष्टिगत होती हैं, इसलिए इसके अनेक भेद बनते हैं। जैसे-

2. 2.1. नित्यताबोधक पक्ष

इस पक्ष के अंतर्गत क्रिया-व्यपार की स्थिति अविरल गतिमान है। इसमें क्रिया के आरंभ से लेकर अदृश्यमान अंत तक एक समान बनी रहती है। हिन्दी में इस पक्ष के लिए सामान्य, पूर्ण, आवृत्तिमूलक आदि शब्दों का प्रयोग भी देखा जाता है। वस्तुतः इनमें सामान्य स्थिति से 'निरपेक्ष' अभिव्यक्ति होती है, तथा अपूर्ण क्रिया व्यापार का क्षेत्र

व्यापक है। दूसरे 'आवृत्ति' शब्द से निकटता का बोध कुछ सीमा तक होता है किन्तु आवृत्ति के अन्तर्गत अभ्यास और नित्यता दोनों समाहित है। अतः क्रिया-व्यापार की स्थिति के आधार पर 'नित्यता' शब्द ही अधिक सटीक है।[12] इसके उदाहरण निम्नलिखित है-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह फल खाता है।	से फल खाये।	से फल् खाइसि।	ओ फर् खाथे।
गोपाल किताब लिखता है।	गोपाल बहि लेखे।	गोपाल बहि लेखसि।	गोपाल किताब लिखथे।

पक्षसूचक

हि. (मुख्य क्रिया+ -त+कालसूचक)

मा. ओ. (मुख्य क्रिया+ -ए)

प. ओ. (मुख्य क्रिया+ -स)

छ. (मुख्य क्रिया+ -थ)

2. 2. 2. आरंभबोधक पक्ष

इस पक्ष से क्रिया व्यापार के आरंभ होने की स्थिति का बोध होता है। जैसे-

हि. जब राम पढ़ने लगता है तो.....। (-ने+लग-)

मा. ओ. राम जेबे पढ़ि बसे त.....। (-इ+बस-)

प. ओ. राम जेभें पढ़ि बससि त.....। (-इ+बस-)

छ. राम जब पढ़े बर बैठथे त.....। (बर+बैठ-)

इन भाषाओं में इस पक्ष की अभिव्यक्ति सामान्यतः सहायक क्रिया से होती है। किन्तु ये क्रियाएँ मुख्य क्रिया के रूप में अलग अर्थ प्रकट करती हैं। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ का 'बस' और छत्तीसगढ़ी का 'बैठ' धातु का अर्थ है 'बैठना'। इस दृष्टि से तीनों भाषाओं की क्रिया संरचना में समानता है।

हि. वह जैसे हि लिखने को हुआ.....।

मा. ओ. से जेमिति लेखिबा पाईं हेला.....।

प. ओ. से जेनता लेखबार लागि हेला.....।

छ. ओ जिसने लिखेबर होइस.....।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के (को हुआ), मानक ओड़िआ के (पाईं हेला), पश्चिमी ओड़िआ के (लागि हेला) और छत्तीसगढ़ी का (बर होइस) क्रिया रूप हैं।

हि. गाड़ी आने ही वाली है।

मा. ओ. गाड़ी आसिबार आछि।

प. ओ. गाड़ी आसबार अछे।

छ. गाड़ी आएबर हवै।

इन उदाहरणों में आसि, आस, आए आदि से भविष्यत का बोध होता है तथा क्रिया व्यापार होने ही वाला है का संकेत मिलता है।

2. 2. 3. प्रगति बोधक पक्ष

इस पक्ष के लिए हिन्दी में अपूर्ण, सातत्य, निरंतरता आदि नाम प्रचलित हैं। अंग्रेजी में इसके लिए 'prograssaive' शब्द प्रचलित है। प्रगतिबोधक पक्ष से क्रिया-व्यापार की प्रगति उन्मुख या निरंतरता की स्थिति व्यक्त होती है। इसमें क्रिया-व्यापार की प्रगति पर अधिक केंद्रित रहती है। क्रिया व्यापार कब आरंभ हुआ तथा कब समाप्त हुआ? इस पर ध्यान केन्द्रित रहता है। इससे केवल व्यापार 'चल रहा है' अर्थात् प्रगति उन्मुख हैं यह स्थिति प्रमुख है। जैसे-

हि. गाड़ी जा रही है।

मा. ओ. गाड़ी जाउछि।

प. ओ. गाड़ी जाउछे।

छ. गाड़ी जावथे।

उक्त उदाहरणों में रह-, जाउ-, जाउ- और जाव- द्वारा प्रगति का बोध होता है।

मानक ओड़िआ में (-उछि), पश्चिमी ओड़िआ में (-उछे) और छत्तीसगढ़ी में (-वथे) कृदंतों का प्रयोग 'जा' मुख्य क्रिया के साथ हुआ है जो प्रगति का बोध कराते हैं।

2. 2. 3.1. प्रगति बोधक वर्तमान काल

हि.	मैं खा रहा हूँ।
मा. ओ.	मुँ खाउ अछि~खाउछि।
प. ओ.	मुइँ खाउछें।
छ.	में खावत हौं।

2. 2. 3. 2. प्रगति बोधक भूतकाल

हि.	मैं खा रहा था।
मा. ओ.	मुँ खाउ थिलि।
प. ओ.	मुइँ खाउ थिलिं।
छ.	में खावत रहें।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि वर्तमान काल और भूतकाल में प्रगति बोधक पक्ष सूचक अलग-अलग रूप में प्रकट होते हैं। मानक ओड़िआ में इस पक्ष के दो रूप प्राप्त होते हैं किन्तु पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में एक ही रूप प्राप्त होते हैं।

प्रगति बोधक पक्ष के अंतर्गत एक स्थिति ऐसी भी होती है जिसमें क्रिया-व्यपार एक ओर तो सातत्य को बोध कराती है तथा दूसरी ओर प्रगति उन्मुख होती है। जैसे-

हि.	ऐसा तो होता ही रहता है।	(होता ही रहता है- -त+रह)
मा. ओ.	एमिति त हेइ थाए।	(हेइ थाए- -इ+थाए)
प. ओ.	एन्ता त हेइ थिसि।	(हेइ थिसि- -इ+थिसि)
छ.	इसने त होत रथे।	(होत रथे- - त+रथे)

प्रगति बोधक पक्ष के अंतर्गत क्रिया-व्यापार की एक ऐसी स्थिति भी दृष्टिगत होती है, जिसमें निरंतरता का बोध होता है। जैसे-

हि. पढ़े जाओ। -ए+जा-

मा. ओ. पढ़ि चाल। -इ+चा-

प. ओ. पढ़ि चाल। -इ+चा-

छ. पढ़त चल। -त+च-

उक्त उदाहरणों में मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में सहायक क्रिया+ चा निरंतरता की स्थिति को द्योतित करती हैं तथा छत्तीसगढ़ी में+ त।

2. 2. 4. अभ्यासबोधक

अभ्यासबोधक का अर्थ है-आदत। क्रिया-व्यापार कि स्थिति से कर्ता का स्वभाव या आदत व्यक्त हो तब ऐसी स्थितियों को अभ्यास बोधक पक्ष के अंतर्गत समझना चाहिए। इस पक्ष से क्रिया-व्यापार के बार-बार होने का संकेत मिलता है। अंग्रेजी में इस पक्ष के लिए 'frequentative' शब्द प्रचलित है। जैसे-

हि. राम मेरे घर आया करता है। -आ प्रत्यय+कर

मा. ओ. राम मोर घरकु आसिबा करे। -आ प्रत्यय+कर

प. ओ. राम मोर घरके आसुथिसि। -आ प्रत्यय+थिसि

छ. राम मोर घरला आवत रथे। -आ प्रत्यय+रथे

अभ्यास बोधक पक्ष की एक स्थिति ऐसी भी है जिसमें अभ्यास के साथ निरंतरता का बोध होता है। जैसे-

हि. वह दिन रात सोया करता है।

मा. ओ. से दिन राति सोइबा करे।

प. ओ. से दिन रात सुइसि।

छ. ओ दिन रात सुतत रथे।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के अन्तर्गत मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया 'सोना' तथा 'कर' के साथ '-त' प्रत्यय अनिवार्य घटक है। मानक ओड़िआ में 'सोइ' तथा कर

के साथ '-ए' प्रत्यय का प्रयोग होता है। पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में ऐसा प्रयोग नहीं है।

3. वृत्ति

'वृत्ति' शब्द पाश्चात्य व्याकरण में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द 'mood' का पर्याय है। भाषा केवल संदेश या सूचना को एक दूसरे तक पहुँचाने और प्राप्त करने का साधन मात्र नहीं है। भाषा इससे भी कुछ अधिक है। यदि दो व्यक्तियों के बीच आदान-प्रदान की प्रक्रिया है। यह अक्सर वक्ता के मनोभावों (feellings) और अभिवृत्तियों (attitudes) को भी व्यक्त करता है। जिसका उद्येश्य श्रोता के व्यवहार और उसकी अभिव्यक्ति को प्रभावित करना होता है। भाषा में यह कार्य 'वृत्ति' (mood) का है।

अत: वृत्ति से कार्य-व्यापार के प्रति वक्ता की अभिव्यक्ति या कार्य-व्यापार के संबंध में उसके अपने दृष्टिकोण का बोध होता है। वाक्य में वक्ता की यह अभिवृत्ति कई प्रकार से व्यक्त होती है-कभी विशेष विस्मयादिबोधक शब्दों द्वारा, कभी खास विशेषणों या क्रिया विशेषणों के प्रयोग द्वारा, कभी शब्दों को दोहरा कर, कभी वाक्य परिवर्तन (change of voice) द्वारा ,कभी शब्दक्रम परिवर्तन द्वारा, कभी आदेशात्मक या अनुरोधात्मक शैली के प्रयोग द्वारा।[13] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किसी कार्य-व्यापार को व्यक्त करने के लिए क्रियाएँ जिन विधियों और तरीकों को प्रयोग में लाती हैं उन्हें 'वृत्ति' कहा जाता है।

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में निम्नलिखित वृत्तियाँ मानी गयी हैं-

1. आज्ञार्थक
2. संभावनार्तक
3. अनिश्चित संभाव्य
4. निश्चित संभाव्य

3.1. आज्ञार्थक

दूसरों की क्रियाओं को निर्देशित करना भाषा का निर्देशात्मक प्रकार्य है। आज्ञार्थक पक्ष-प्रत्यय युक्त वाक्य श्रोता (मध्यम पुरुष) की क्रियाओं को निर्देशित करता है। आज्ञार्थक वाक्यों में कर्ता हमेशा मध्यम पुरुष में होता है, जिसका सामान्य स्थिति में प्रायः वाक्य के बाह्य स्तर पर लोप रहता है। यद्यपि जहाँ कर्ता पर बल देना अभीष्ट हो वहाँ उसका अवश्य प्रयोग किया जाता है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
तू पढ़।	तु पढ़।	तुइँ पढ़।	तें पढ़।
तू खा।	तु खा।	तुइँ खा।	तें खा।
तू लिख।	तु लेख।	तुइँ लेख।	तें लिख।
तुम यहाँ से भागो।	तुमे एठु जाअ।	तुमे इनु ज।	तुमन इकारा ले जा।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि तीनों भाषाओं में आज्ञाभाव क्रिया की पुरुष सूचक विभक्तियों से प्रकट होता है तथा मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है।

3. 2. संभावनार्थक

संभावनार्थक वृत्ति से कार्य-व्यापार के भविष्य में घटित होने के संबंध में वक्ता के दृष्टिकोण का बोध होता है, जिसे वक्ता इच्छा, कामना, संभावना, अप्रत्यक्ष आदेश, अनुज्ञा आदि के रूप में व्यक्त करता है। जैसे-

3. 2.1. संभावना

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
शायद वह जाए।	बोध हुए से जिब।	बोधे से जिबा।	शायद वो जाहि।

3. 2. 2. इच्छा

मैं चाहता हूँ कि वह भी चले। मुँ चाहुँछि कि से भी चालु। मुइं चाहुँछें कि से भी चालु। में चाहथं कि ओ भी चले।

3. 2. 3. कामना

भगवान आपको सुखी रखे। भगवान आपणङकु सुखी रखन्तु। भगवान आपणकु सुखी रखुन। भगवान आपला

सुखी राखें।

3. 2. 4. अप्रत्यक्ष आदेश

आज कोई न जाए। आजि केहि न जाआन्तु। आएज् किहे ना जाउन। आज कोन्हों नइ जाऐं।

3. 2. 5. अनुज्ञा याचना

मैं अन्दर आ जाऊँ। मुँ भीतर कु आसिबि। मुईं भीतर के आसमि। में भीतर ला आहाँ।

सामान्य संभावनात्मक में वक्ता किसी कार्य या घटना के प्रति संभावनात्मक भावनाएँ प्रकट करता है। जैसे-

वह बैठा हो। बोध हुए से बसि थिब। बोधे से बसि थिबा। शायद ओ बैठे रहि।

उक्त उदाहरणों में हिन्दी के अन्तर्गत 'हो' क्रिया से संभावना वृत्ति द्योतित होती है। अतः 'हो' संभावना वृत्ति का अनिवार्य घटक है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में यह वृत्ति व्यक्त नहीं होती। इसकी अभिव्यक्ति यथाक्रम बोध हुए, बोधे, शायद शब्द प्रयोग से होती है जो पूर्णतः क्रिया नहीं है।

हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में पक्ष, काल और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रिया-पदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रिया-पदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होता है। ऊपर हमने इन तीनों भाषाओं के काल, पक्ष और वृत्ति का सामान्य विवेचन किया है। अब हम काल, पक्ष और वृत्ति का अलग अलग विश्लेषण न करके एक साथ विश्लेषण करेंगे।

4. क्रिया की पदबंध संरचना

मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में क्रिया-पदबंधों की रुपिमिक संरचना से काल, पक्ष और वृत्ति की सूचना दो तरह से मिलती है-

1. सरल क्रिया पदबंधों में पक्ष, काल और वृत्ति सूचक प्रत्यय एवं काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया द्वारा।
2. संयुक्त क्रिया पदबंधों में रंजक क्रिया द्वारा।

पक्ष सूचक प्रत्ययों के प्रयोग की दृष्टि से तीनों भाषाओं के सामान्य पदबंध की संरचना दो प्रकार की होती है-

1. पक्ष सापेक्ष

2. पक्ष निरपेक्ष

4.1. पक्ष सापेक्ष संरचना

जिन क्रियारुपों में पक्ष सूचक तत्व विद्यमान रहता है, वे पक्ष सापेक्ष संरचना के अंतर्गत आते हैं। तीनों भाषाओं की पक्ष सापेक्ष संरचनाएँ निम्न प्रकार की है-

[धातु-{पक्ष सूचक तत्व}-{काल/वृत्ति सूचक तत्व}]

4.1.1. पक्ष सूचक तत्व

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में पक्ष सूचक तत्व निम्नलिखित हैं-

4.1.1.1 पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय

/-आ/ हि. लिख्-आ>लिखा+ह (है कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-इ/ मा. ओ. लेख्-इ>लेखि+अछि (अछि कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-इ/ प. ओ. लेख्-इ>लेखि +छें (छें कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

/-ए/ छ. लिख-ए>लिखे+हौं (हौं कालसूचक सहयोगी क्रिया है)

पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा इन दोनों भाषाओं में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-ए/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4.1.1. 2. अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय

/-आ/ हि. लिख्-त>लिखत्-आ>लिखता

/-उ/ मा. ओ. लेख-उ>लेखु+अछि (अछि काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

/-उ/ प. ओ. लेख-उ>लेखु+छें (छें काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

/-त/ छ. लिख-त>लिखत+हौं (हौं काल सूचक सहयोगी क्रिया है)

अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय की दृष्टि से भी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त प्रत्यय /-उ/ में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4.1. 2. काल और वृत्ति सूचक तत्व

तीनों भाषाओं की पक्ष संरचना में काल एवं वृत्ति की सूचना कुछ सहयोगी क्रियाओं एवं उनके संपरिवर्तक रुपों द्वारा दी जाती है। तीनों भाषाओं की काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना एवं उनसे सूचित काल और वृत्ति निम्नलिखित हैं-

	संरचना	**निष्पन्न रूप**	**काल और वृत्ति**
हि.	[ह्-{व.पु.1}]	है, हैं, हूँ आदि	वर्तमान
	[थ-{व.लि}]	था, थे, थी आदि	भूत
	[हो-{व.पु.2}]	हो, हों, होऊँ आदि	संभावना
	[हो-{व.पु.2}]-ग-{व.लि.}]	होगा, होगी आदि	अनुमान
	[हो-त-{व.लि}]	होता, होती आदि	हेतुमत्
मा. ओ.	[अछ्-{व.पु}]	अछि, अछु आदि	वर्तमान
	[था-{व.पु}]	थाए, थाउ आदि	भूत-आभ्यासिक
	[था-{व.पु}]	था, थाअ आदि	अनुज्ञा
	[थ-इल्-{व.पु}]	थिला, थिले आदि	भूत-अतीत
	[थ-इब्--{व.पु}]	थिब, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
	[था-अन्त-{व.पु}]	थाआन्ते, थाआन्ति आदि	हेतुमत्
प. ओ.			
	[अछ्-{व.पु}]	अछें, अछुँ आदि	वर्तमान
	[थि-{व.पु}]	थिसि, थिसुँ आदि	भूत-आभ्यासिक

[था-{व.पु}]	था, थाअ आदि	अनुज्ञा
[थ-इल्-{व.पु}]	थिला, थिले आदि	भूत-अतीत
[थ-इब्--{व.पु}]	थिबा, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
[थ-इत्-{व.पु}]	थिति	हेतुमत्

छ.

[आ-हँ{व.पु}]	हौं, आहँन आदि	वर्तमान
[रथ-ओं{व.पु}]	रथों, रथँन आदि	भूत-आभ्यासिक
[रह--{व.पु}]	र, रह आदि	अनुज्ञा
[रह-इस-{व.पु}]	रहिस, रहिंन् आदि	भूत-अतीत
[रह--{व.पु}]	रहि, रहिं, थिबे आदि	अनुमान/संभावना
[रथ्-इन्-{व.पु}]	रथिन्, रथें आदि	हेतुमत्

इससे स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की काल और वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना एवं उनसे सूचित काल और वृत्ति में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के अनुज्ञा (था, थाअ), भूत-अतीत (थिला, थिले) एवं अनुमान/संभावना (थिबा, थिबे) काल/पक्ष सूचक क्रियाओं में समानता है। जबकि छत्तीसगढ़ी में भिन्नता है।

4.1. 3. पक्ष सूचक संरचना में काल और वृत्ति सूचक तत्व की स्थिति

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की पक्ष सापेक्ष संरचना में काल/वृत्ति सूचक तत्व अनिवार्य है। अर्थात् पक्ष सापेक्ष संरचना काल सापेक्ष भी है। काल/वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया के बिना केवल पक्ष सूचक प्रत्यय युक्त रूप नहीं है। जैसे-

हि.	लिखा, लिखता
मा. ओ.	लेखि, लेखु

प. ओ. लेखि, लेखु

छ. लिख, लिखे

ये समापिका क्रिया रूप नहीं हैं। ये असमापिका क्रियारुप हैं। इन रुपों से किसी पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती है।

4.1. 4. वृत्ति की अभिव्यक्ति

तीनों भाषाओं की पक्ष सापेक्ष संरचनाओं में काल और वृत्ति सूचक तत्व का अर्थ है-काल अथवा वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया। अर्थात् जिस सामान्य क्रिया पदबंध में काल सूचक तत्व विद्यमान है, वहाँ वृत्ति सूचक तत्व नहीं आ सकता है। जैसे-

हि. लिखता है, लिखता होगा।

मा. ओ. लेखु अछि, लेखु थिब।

प. ओ. लेखुछे, लेखु थिबा।

छ. लिखत हवे, लिखत रहि।

किंतु ये रूप नहीं हो सकते हैं-

हि. लिखता होगा है।

मा. ओ. लेखुथिब अछि।

प. ओ. लेखुथिबा अछे।

छ. लिखत रहि हवे।

जिस क्रियारूप में वृत्ति सूचक तत्व नहीं होता उसे 'वृत्ति निरपेक्ष' कहा जा सकता है। ऐसे वृत्ति निरपेक्ष क्रियारूप वाले वाक्य साधारण तथा तथ्यात्मक या घोषणात्मक होते हैं। जैसे-

हि. गोपाल लिखता है।

मा. ओ. गोपाल लेखे।

प. ओ. गोपाल लेखसि।

छ. गोपाल लिखथे।

ऐसे वाक्यों से अपने कथ्य प्रति वक्ता की अभिवृत्ति की कोई स्पष्ट सूचना नहीं मिलती है।

4.1. 5. पक्ष सापेक्ष क्रिया के विहित रूप

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की पक्ष सापेक्ष क्रिया विहित रूपों के उदाहरण निम्नलिखित हैं-

4.1. 5.1. पूर्ण पक्ष

पूर्ण पक्ष (perfective) से कार्य-व्यापार की पूर्ण अवस्था का बोध होता है। पूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार को आंतरिक खण्डों में नहीं, बल्कि एक समग्र इकाई या समष्टि के रूप में देखा जाता है जिसमें कार्य-व्यापार अनिवार्यतः पूर्णता की स्थिति में माना जाता है। अपूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार को प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, पूर्ण पक्ष में एक घटना के रूप में।[14]

	क्रिया रूप	**काल/वृत्ति**
हि. सूचक प्रत्यय /-$-/	आया	भूत-सामान्य
	आया है	वर्तमान
	आया था	भूत-अतीत
	आया हो	संभावना
	आया होगा	अनुमान
	आया होता	हेतुमत्
मा. ओ. (सूचक प्रत्यय /-इ/)	आसि अद्वि	वर्तमान
	आसि थाए	भूत -आभ्यासिक
	आसि थाउ	अनुज्ञा
	आसि थिला	भूत
	आसि थिब	अनुमान/संभावना
	आसि थाआन्ता	हेतुमत्

प. ओ. (सूचक प्रत्यय /-इ/)	आसिछे	वर्तमान
	आसि थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसि थाउ	अनुज्ञा
	आसि थिला	भूत
	आसि थिबा	अनुमान/संभावना
	आसि थिता	हेतुमत्
छ. (सूचक प्रत्यय /-ए/)	आइसे	वर्तमान
	आए रहिस	भूत -आभ्यासिक
	आए रहे	अनुज्ञा
	आए रहिस	भूत
	आए रहि	अनुमान/संभावना
	आए रतिस	हेतुमत्

4.1. 5. 2. अपूर्ण पक्ष

अपूर्ण पक्ष (imperfective) से कार्य-व्यापार की किसी अपूर्ण व्यवस्था का बोध होता है। अपूर्ण पक्ष में कार्य-व्यापार की आंतरिक संरचना तथा आंतरिक काल-क्षेत्र के किसी पक्ष पर ध्यान रहता है।[15]

हि. सूचक प्रत्यय /-त्-/	**क्रिया रूप**	**काल/वृत्ति**
	आता	हेतुमत्
	आता है	वर्तमान
	आता था	भूत
	आता हो	संभावना
	आता होगा	अनुमान
	आता होता	हेतुमत्

मा. ओ. (सूचक प्रत्यय /-उ/)	आसु अछि	वर्तमान
	आसु थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसु थाउ	अनुज्ञा
	आसु थिला	भूत
	आसु थिब	अनुमान/संभावना
	आसु थाआन्ता	हेतुमत्
प. ओ. (सूचक प्रत्यय /-उ/)	आसुछे	वर्तमान
	आसु थाए	भूत-आभ्यासिक
	आसु थाउ	अनुज्ञा
	आसु थिला	भूत
	आसु थिबा	अनुमान/संभावना
	आसु थिता	हेतुमत्
छ. (सूचक प्रत्यय /-त/)	आवथे	वर्तमान
	आवत रहे	भूत-आभ्यासिक
	आवत रहिस	अनुज्ञा
	आवत रहि	भूत
	आवत रतिस	अनुमान/संभावना
	आवत रथिस	हेतुमत्

पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय और अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्तय की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में समानता है। दोनों भाषाओं में /-इ/ और /-उ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। हिन्दी में /-$-/ और /-त/ एवं छत्तीसगढ़ी में /-ए/ और /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

4. 2. पक्ष निरपेक्ष संरचना

पक्ष निरपेक्ष संरचना का यह अर्थ नहीं है कि इस संरचना से पक्ष की सूचना नहीं

मिलती है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के दोनों पूर्ण-अपूर्ण पक्षों की सूचना मिलती है। इस संरचना को पक्ष निरपेक्ष कहने का कारण यह है कि इसमें पक्ष सूचक तत्वों का अभाव है। तीनों भाषाओं की पक्ष निरपेक्ष संरचनाओं की एक विशेषता यह है कि इनमें काल/वृत्ति सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है, सहयोगी क्रियाओं का प्रयोग नहीं होता है।

तीनों भाषाओं की पक्ष निरपेक्ष संरचना निम्न प्रकार की है-

[धातु-({काल/वृत्ति})-{व.पु.}]

4. 2.1. पक्ष निरपेक्ष संरचना में प्रयुक्त काल और वृत्ति सूचक तत्व

तीनों भाषाओं की कुछ पक्ष निरपेक्ष संरचनाओं में काल/वृत्ति सूचक प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है। ये निम्नलिखित हैं-

मा. ओ.

/-इल्-/	भूत	लेख-इल्-आ>लेखिला (लिखा)
/-इब्-/	भविष्यत	लेख-इब्-आ>लेखिबा (लिखेंगे)
/-अन्त्-/	हेतुमत्	लेख-अन्त-आ>लेखन्ता (लिखता)

प. ओ.

/-अल्-/	भूत	लिख-अल्-आ>लिखला
/-अम्-/	भविष्यत्	लिख-अम्-आ>लिखमा
/-अत्-/	हेतुमत्	लिख-अत्-आ>लिखता

छ.

/-इस्-/	भूत	लिख-इस्-अ>लिखिस
/-अब्-/	भविष्यत्	लिख-अब्-ओ>लिखबो
/-इत्-/	हेतुमत्	लिख-इत्-स>लिखतिस

मानक ओड़िआ के /-इल्-/, /-इब्-/ की /-इ-/, पश्चिमी ओड़िआ की /-अल्-/,

/-अम्-/, /-अत्-/ और छत्तीसगढ़ी के /-इस्-/, /-इत्-/ काल सूचक पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के साथ समानता रखती है।

4. 2. 2. पक्ष निरपेक्ष क्रिया के विहित रूप

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रिया-पदबंध संरचना नियमों के अनुसार उनका विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है-

क्रियारूप				**काल और वृत्ति**
हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.	
पढ़ता है	पढ़े	पढ़े	पढ़थे	नियत्व
पढ़े	पढ़ु	पढ़ु	पढ़े	इच्छा/अनुज्ञा
पढ़ा	पढ़िला	पढ़ला	पढिस्	भूत-सांप्रतिक
पढ़ेगा	पढ़िब	पढ़बा	पढ़हि	भविष्यत्
पढ़ता	पढ़न्ता	पढ़ता	पढ़तिस	हेतुमत्

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के नियत्व, इच्छा एवं भूत में समानता है।

तीनों भाषाओं के अनुज्ञा वृत्ति सूचक मध्यम पुरुष के क्रियारूप निम्नलिखित हैं-

कर्ता	**क्रियारूप**
तु, तुइँ, त	पढ़, पढ़, पढ़
तुमे, तुमे, तुमन	पढ़, पढ़, पढ़
आपण, आपण,	पढ़न्तु, पढ़ुन, पढ़

इस दृष्टि से तीनों भाषाओं में लगभग समानता है। केवल मानक ओड़िआ के /-अन्तु/ और पश्चिमी ओड़िआ के /-उन्/ में समानता नहीं है।

4. 2. 3. समापिका क्रियारुपों के साथ प्रयुक्त होनेवाले अन्य प्रत्यय

4. 2. 3.1. पूर्णतावाचक प्रत्यय

मानक ओड़िआ में नियत्व एवं अनुज्ञा को छोड़कर शेष पक्ष निरपेक्ष क्रियारुपों के

अंत में कुछ विशेष संदर्भों में /-णि/ का प्रयोग होता है-

मा. ओ.	से गला**णि**	वह जा चुका है।
प. ओ.	से गला**न**	"
छ.	ओ गिस**न**	"

इससे स्पष्ट है कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में भूतकाल सूचक क्रिया रूप के साथ /-न/ का प्रयोग क्रिया व्यापार की पूर्णता की सूचना देता है।

मा. ओ.	से जाइब**णि**	वह जा चुका होगा।
प. ओ.	से जाइथिबा**न**	"
छ.	ओ जाएरहि**न**	"

मानक ओड़िआ के /-णि/, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के /-न/ भविष्यत् काल सूचक क्रिया रूप के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-व्यापार की पूर्णता की सूचना देते हैं।

4. 2. 3. 2. निश्चयवाचक प्रत्यय

मानक ओड़िआ में /-टि/ समापिका क्रिया रुपों के पश्चात प्रयुक्त होने पर क्रिया के घटित होने की निश्चतता की सूचना मिलती है। जैसे-

मा. ओ.	से खाउछि**टि**?	वह निश्चित रुप से खा रहा है?
प. ओ.	से खाउछे **काएँ**?	"
छ.	ओ खावत हवै **का**?	"

पश्चिमी ओड़िआ में /काएँ/ और छत्तीसगढ़ी में /का/ प्रश्नवाचक शब्दों का प्रयोग होता है।

मा. ओ.	से खाइब**कि**?	क्या वह खाएगा?
प. ओ. से	खाएबा **काएँ**?	"
छ.	ओ खाहि **का**?	"

मा. ओ. से खाइब**टि**? वह निश्चित रुप से खाएगा।

ऐसा प्रयोग पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है।

4. 2. 3. 3. विशेष अनुरोध सूचक प्रत्यय

तीनों भाषाओं में विशेष अनुरोध सूचक प्रत्यय निम्नलिखित हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
तुम पढ़ो न।	तुमे पढु**ना**।	तुमे पढ़ **न**।	तुमन पढ़ **न**।
आप पढ़िए न।	आपण पढ़न्तु **ना**।	आपण पढु**न**।	आप पढ़ **न**।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि मानक ओड़िआ में /ना/, पश्चिमी ओड़िआ /न/ और छत्तीसगढ़ी में /न/ प्रत्यय के प्रयोग से विशेष अनुरोध की सूचना मिलती है।

5. क्रियारुपों की खण्डीय संरचना

पिछले अनुच्छेद में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियारुपों का क्रमित पदबंध संरचना नियमों के अनुसार पक्ष, काल और वृत्ति सूचक घटक तत्वों का विश्लेषण किया गया है और उसके आधार पर तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की एक सूची प्रस्तुत की गयी है। इस सूची को महारणा ने 'वर्गीकी विषय विन्यास' (taxonomic item and arrangement) माना है।[16] इससे विभिन्न क्रियारुपों का आंतरिक संबंध स्पष्ट नहीं हो पाता। इस कमी को दूर करने के लिए इस अनुच्छेद में तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की संरचनाओं का खण्डीय विश्लेषण करने का प्रयास किया जायेगा। जिससे क्रियारुपों की रुपिमिक संरचना के साथ-साथ आर्थी संरचना भी स्पष्ट हो सके। पक्ष, काल और वृत्ति सूचक तत्व संमिश्र प्रतीक होने पर भी पक्ष सूचक तत्व काल/वृत्ति सूचक तत्व से भिन्नता रखता है। किन्तु काल और वृत्ति सूचक तत्व क्रियारुपों में निश्चित रूप से संमिश्र होते हैं। कुछ क्रियारुपों में इन दोनों कोटियों की सूचना एक ही सहायक तत्व द्वारा दी जाती है। इस दृष्टि से काल-पक्ष-वृत्ति सूचक तत्वों को दो वर्गों में रखा जा सकता है।[17] पक्ष और काल। पक्ष मुख्यतः दो होते हैं-

1. पूर्ण पक्ष<+पूर्ण>

2. अपूर्ण पक्ष<-अपूर्ण>

तीनों भाषाओं के कुछ क्रियारुपों में पक्ष सूचक तत्व विद्यमान रहते हैं और कुछ में न रहने पर भी प्रासंगिक रूप से पक्ष का द्योतन होता है। जिन रुपों में काल सूचक तत्व नहीं होता उनमें वृत्ति सूचक तत्व हो सकता है।[18]

<-काल- वृत्ति>-><_+वृत्ति>।

इस दृष्टि से तीनों भाषाओं के क्रियारुपों की खण्डीय संरचना का प्रथम नियम यह बनता है-

{पक्ष-काल-वृत्ति}-><_+पूर्ण_+काल>

5.1. <+पूर्ण+काल> --> <_+भूत>

जब क्रियारूप पूर्ण पक्ष का होता है तब तीनों भाषाओं में दो ही काल संभव है-

भूत<+भूत >

वर्तमान<-भूत>

	<+पूर्ण-भूत>	<+पूर्ण+भूत>
हि.	वह खाया है।	वह खाया था।
मा. ओ.	से खाइ अछि।	से खाइ थिला।
प. ओ.	से खाइछे।	से खाइ थिला।
छ.	ओ खाइसे।	ओ खाए रहिस।

मानक ओड़िआ के (अछि), पश्चिमी ओड़िआ के (छे) और छत्तीसगढ़ी के (से) से <+पूर्ण-भूत> की सूचना मिलती है तथा (थिला), (रिहिस) से <+पूर्ण+भूत> सूचना मिलती है। <+सांप्रतिक> अभिलक्षण समय सापेक्षिक है, जो निश्चित समय से पूर्व घटित क्रिया-व्यापार की सूचना देता है-

<+पूर्ण+भूत+सांप्रतिक>

हि. वह खाया।

मा. ओ. से खाइला।

प. ओ. से खाएला।

छ. ओ खाइस।

5. 2. <-पूर्ण+काल>----><_+भविष्यत्>

जब क्रिया रूप अपूर्ण पक्ष का होता है, तब या तो वर्तमान काल की सूचना मिलती है या भविष्यत् काल की। भविष्यत् काल प्रकृतितः अपूर्ण पक्ष का होता है। किन्तु तीनों भाषाओं में इन क्रियारुपों में अपूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय नहीं होते। जैसे-

<-पूर्ण+भविष्यत्>

हि. वह खाएगा।

मा. ओ. से खाइब।

प. ओ. से खाएबा।

छ. ओ खाही।

5. 3. <-भविष्यत्>----><_+भूत>

तीनों भाषाओं के इन अपूर्ण पक्ष सूचक क्रियारुपों में अपूर्ण सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है और साथ में काल सूचक सहयोगी क्रिया का भी। जैसे-

<-पूर्ण, -भूत>	<-पूर्ण, +भूत-अभ्यास>	<-पूर्ण,+भूत+अभ्यास>
हि. वह खाता है।	वह खाता था ।	वह खाता था।
मा.ओ से खाउ अछि।	से खाउ थिला।	से खाउ थाए।
प.ओ से खाउ अछे।	से खाउ थिला।	से खाउ थिसि।
छ. ओ खावत हवै।	ओ खावत रहिस।	ओ खावत रथे।

5. 4. <-पूर्ण, -भविष्यत्>----><_+सातत्य>

इन भाषाओं में कोई स्वतंत्र सातत्य पक्ष सूचक प्रत्यय नहीं है। रूप रचना की

दृष्टि से मानक ओड़िआ में /-उ/, पश्चिमी ओड़िआ में /-उ/ और छत्तीसगढ़ी में /-त/ का प्रयोग होता

है। जैसे-

	<-पूर्ण, -भूत, +सातत्य>	<-पूर्ण, +भूत, +सातत्य>
हि.	वह खा रहा है।	वह खा रहा था।
मा. ओ.	से खाउ अछि।	से खाउ थिला।
प. ओ.	से खाउछे।	से खाउ थिला।
छ.	ओ खावत हवै।	ओ खात रहिस।

5. 5. <_+पूर्ण, +भविष्यत्> ----><_+अनुमान>

तीनों भाषाओं के <+अनुमान> क्रियारुप क्रिया के घटित होने के अनुमान या अनिश्चितता की सूचना देते हैं। जैसे-

	<-पूर्ण,+अनुमान>	<-पूर्ण,+सातत्य+अनुमान>	<+पूर्ण,+अनुमान>
हि.	वह खाता होगा।	वह खा रहा होगा।	वह खाया होगा
मा. ओ.	से खाउ थिब।	से खाउ थिब।	से खाइ थिब
प. ओ.	से खाउ थिबा।	से खाउ थिबा।	से खाइ थिबा।
छ.	ओ खावत रहि।	ओ खावत रहि।	ओ खाए रहि।

5. 6. <_+पूर्ण, +वृत्ति>----><_+संभावना>

इन भाषाओं के क्रियारुपों में वृत्ति सूचक सहयोगी क्रियारूप का प्रयोग होता है-

	<-पूर्ण, +संभावना>	<-पूर्ण, +सातत्य+संभावना>	<+पूर्ण+संभावना>
हि.	(शायद) वह खाया हो।	(शायद) वह खा रहा हो।	(शायद वह खाया हो।
मा. ओ.	(बोधहुए) से खाउथिब।	(बोधहुए) से खाउथिब।	(बोधहुए) से खाइथिब।
प. ओ.	(बोधे) से खाउथिबा।	(बोधे) से खाउथिबा।	(बोधे) से खाइथिबा।
छ.	(शायद) ओ खावत रहि।	(शायद) ओ खावत रहि।	(शायद) ओ खाए रहि।

5. 7. <_+पूर्ण-काल>----><_+हेतुमत्>

इन भाषाओं में यह रूप <-काल> का होता है। इस रूप में वृत्ति सूचक सहयोगी क्रिया का प्रयोग हो भी सकता है।जैसे-

	<-पूर्ण+हेतुमत्>	<-पूर्ण+सातत्य+हेतुमत्>	<+पूर्ण+हेतुमत्>
हि.	(यदि) वह पढ़ता..।	(यदि) वह पढ़ रहा होता..।	(यदि) वह पढ़ा होता..।
मा. ओ.	(जदि) से पढ़न्ता..।	(जदि) से पढ़ु थाआन्ता..।	(जदि) से पढ़ि थाआन्ता..।
प. ओ.	(जदि) से पढ़ता..।	(जदि) से पढ़ु थिता..।	(जदि) से पढ़ि थिता..।
छ.	(अगर) ओ पढ़तिस..।	(अगर) ओ पढ़त रतिस..।	(अगर) ओ पढ़े रतिस..।

हेतुमत् क्रियारूप वाला वाक्य एक अन्य वाक्य की आकांक्षा रखता है और दोनों वाक्य (मा. ओ.-जदि, तेबे, ताहेले), (प. ओ.-जदि, तेभें, ताहेले), (छ.-अगर, त) संयोजक द्वारा संयुक्त होते हैं। ऐसी स्थिति में दोनों वाक्यों की क्रियाएँ हेतुमत् रूप की होती हैं।

5. 8. <-काल>----><_+इच्छा>

तीनों भाषाओं के इच्छार्थक क्रियाओं का रूप इस प्रकार है-

	<-पूर्ण,+इच्छा>
हि.	वह पढ़े।
मा. ओ.	से पढ़ु।
प. ओ.	से पढ़ु।
छ.	ओ पढ़े।

इच्छार्थक रूप क्रिया के ऐसे क्रिया-व्यापार की सूचना देता है, जो अभी घटित नहीं हुआ, किन्तु भविष्यत में घटित होने की आशा या आवश्यकता है। अतः इन तीनों भाषाओं में <+इच्छा> के संदर्भ में <+भविष्यत्> रुप का प्रयोग भी पाया जाता है। जैसे-

	<-काल>	<+भविष्यत>
हि.	अच्छा अब मैं खाऊँ।	अच्छा अब मैं जाऊँगा।
मा. ओ.	अच्छा एबे मुँ खाएँ।	अच्छा एबे मुँ खाइबि।
प. ओ.	अच्छा एबे मुइँ खाएसि।	अच्छा एबे मुइँ खाएमि।
छ.	अच्छा अब में खातहौं।	अच्छा अब में खाहौं।

6. स्थिति और अस्तित्ववाचक क्रिया के पक्ष, काल और वृत्ति

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रियाओं के संरचना नियम सामान्य क्रियाओं से कुछ भिन्न हैं। इसका कारण इन क्रियाओं की रुपावली पक्ष सूचक तत्व नहीं होता है।

6.1. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया की रुपावली

अन्यपुरुष एकवचन में मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी की स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रियाओं की रुपावली एवं अभिलक्षण निम्न प्रकार हैं-

6.1.1. स्थितिवाचक क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.	अभिलक्षण
वह स्कूल में **है**।	से स्कूल रे **अछि**।	से स्कूल रे **अछे**।	ओ स्कूल में **हवै**।	<-पूर्ण,-भूत>
वह स्कूल में **था**।	से स्कूल रे **थिला**।	से स्कूल रे **थिला**।	ओ स्कूल में **रहिस**।	<+पूर्ण,+भूत>
----------	से स्कूल रे **थाए**।	से स्कूल रे **थिसि**।	ओ स्कूल में रथे।	<+पूर्ण,+भूत,+सातत्य>
वह स्कूल में **हो**।	से स्कूल रे **थाउ**।	से स्कूल रे **थाउ**।	ओ स्कूल में **रहे**।	<-पूर्ण,+इच्छा>
वह स्कूल में **हो**।	से स्कूल रे **थिब**।	से स्कूल रे **थिबा**।	ओ स्कूल में **रहि**।	<-पूर्ण,+संभावना>
वह स्कूल रे **होगा**।	से स्कूल रे **थिब**।	से स्कूल रे **थिबा**।	ओ स्कूल में **रहि**।	<-पूर्ण+भविष्यत+अनुमान>
वह स्कूल में **होता**..।	से स्कूल रे **थाआन्ता**..।	से स्कूल रे **थिता**..।	ओ स्कूल में **होतिस**..।	<-पूर्ण+हेतुमत्>

6. 2. अस्तित्ववाचक क्रिया

इस पक्ष के अन्तर्गत क्रिया का व्यापार व्यक्त नहीं होता, किन्तु पदार्थ या विषय की सत्ता या स्थिति का बोध होता है, जो अस्तित्व स्थिति का द्योतक है। यह अस्तित्व चिरंतन एवं क्षणिक दोनों तरह का हो सकता है। दूसरे इसमें क्रिया के आदि एवं अंत का बोध नहीं होता अपितु स्थिति मात्र का द्योतन होता है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह काला **है**।	से कला **अटे**।	से कला **आए**। ओ करिया **हवै**।	<-पूर्ण,-भूत>
वह काला **था**।	से कला **थिला**।	से कला **थिला**।ओ करिया **रहिस**।	<+पूर्ण,+भूत>
.....	से कला **थाए**।	सेकला **थिसि**। ओ करिया **रथे**।	<+पूर्ण+भूत+सातत्य>
वह काला **हो**।	से कला **हेउ**।	से कला **हेउ**। ओ करिया **होऐ**।	<-पूर्ण+इच्छा>
वह काला **हो**।	से कला **हेब**।	से कला **हेबा**। ओ करिया **होहि**।	<-पूर्ण+संभावना>
वह काला **होगा**।	से कला **हेब**।	से कला **हेबा**। ओ करिया **होहि**।	<-पूर्ण+भविष्यत्+अनुमान>
वह काल **होता**..।	से कला **हुअन्ता**..।	से कला **हेता**..। ओ करिया **होतिस**..।	<-पूर्ण+हेतुमत्>

6. 2.1. विशेष अस्तित्ववाचक क्रिया

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में किसी सामान्य तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए विशेष प्रकार के क्रियारुपों का प्रयोग पाया जाता है। इन रुपों में पक्ष सूचक तत्वों का प्रयोग पाया जाता है और ये रूप भाषाओं की 'होना' क्रिया के पक्ष सापेक्ष रुपों के समान होते हैं। जैसे-

1. हि.	इस पेड़ का फूल सुंदर **होता है**।	<-पूर्ण-भूत,+सामान्य>
	यह फूल सुंदर **है**।	<-पूर्ण-भूत,-सामान्य>
मा. ओ.	एहि गछर फूल सुंदर **हुए**।	
	एहि फूलटि सुंदर **अटे**।	
प. ओ.	इ गछर फूल सुंदर **हेसि**।	
	इ फूल टा सुंदर **आए**।	

छ. इ रुक के फूल सुंदर **होथे**।

इ फूल हर सुंदर **हवै**।

2. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर **होता था**। <-पूर्ण+भूत,+सामान्य>

कल (दिया हुआ) फूल **सुंदर था**। <+पूर्ण+भूत,-सामान्य>

मा. ओ. एहि गछर फूल सुंदर **हेउ थिला**।

कालि (देइ थिबा) फूल **सुंदर थिला**।

प. ओ. इ गछर फूल सुंदर **हेउ थिला**।

कालि (देइ थिबा) फूल **सुंदर थिला**।

छ. इ रुक के फूल सुंदर **होत रहिस**।

काल (के दे) फूल सुंदर **रहिस**।

3. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर **होता हो**। <-पूर्ण+संभावना,+सामान्य>

(आशा है कि) यह फूल सुंदर **हो**। <-पूर्ण+इच्छा,-सामान्य>

4. हि. इस पेड़ का फूल सुंदर होता **होगा**। <-पूर्ण+अनुमान,+सामान्य>

यह फूल सुंदर **होगा**। <-पूर्ण+अनुमान,-सामान्य>

मा. ओ. एहि गछर फूल सुंदर हेउ **थिब**।

एहि फूलटि सुंदर **हेब**।

प. ओ. इ गछर फूल सुंदर हेउ **थिबा**।

इ फूल टा सुंदर **हेबा**।

छ. इ रुक के फूल सुंदर होथ **रहि**।

इ फूल हर सुंदर **होहि**।

7. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की कुछ संयुक्त क्रियाएँ ऐसी हैं, जिनमें प्रयुक्त रंजक क्रियाएँ मुख्य क्रिया द्वारा सूचित क्रिया-व्यापार के आंतरिक समयपरक अवयव (पक्ष) जैसे-आरंभ, सातत्य, समाप्ति आदि की सूचना देती हैं एवं

अपने कथ्य के प्रति वक्ता की अभिवृत्ति (वृत्ति) का द्योतन करती हैं।

7.1. संयुक्त क्रिया की संरचना

तीनों भाषाओं की संयुक्त क्रिया की संरचनाएँ निम्नलिखित हैं-

7.1.1. संरचना. 1

हि. वह खाता चलता है।
वे खाते चले हैं।

मा. ओ. से खाइ चालिछि। [मूल धातु-इ+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइ चालिछन्ति।

प. ओ. से खाइ चालिछे। [मूल धातु-इ+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइ चालिछन्।

छ. ओ खात तलथे। [मूल धातु-त+रंजक क्रिया]
ओमन खात चलथें।

इस दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के मूल धातु और /-इ/ प्रत्यय में समानता है। छत्तीसगढ़ी में मूल धातु के साथ /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है।

7.1. 2. संरचना. 2

हि. वह खाने लगा।
वे खाने लगे।

मा. ओ. से खाइबाकु लागिला। [मूल धातु-इबाकु+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइबाकु लागिले।

प. ओ. से खाइबार के लागला। [मूल धातु-इबारके+रंजक क्रिया]
सेमाने खाइबार के लागले।

छ. ओ खाएबर लागिस। [मूल धातु-एबर+रंजक क्रिया]
ओमन खाएबर लागिन।

7. 2. पक्ष और वृत्ति सूचक रंजक क्रियाएँ

तीनों भाषाओं की मुख्य रंजक क्रियाएँ निम्नलिखित हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
आ	आस	आस्	आ
उठ	उठ	उठ्	उठ्
कर	कर	कर्	कर्
चल	चाल	चाल्	चल्
जा	जा	जा	जा
दे	दे	दे	दे
ले	ने	ने	ले
डाल	पका	पका	ढ़ार्
सक	पार	पार्	सक्
बैठ	बस	बस्	बैठ्
रह	रह	रह्	रह्
लग	लाग	लाग्	लाग्

7. 2.1. रंजक क्रिया द्वारा सूचित पक्ष एवं वृत्ति

यहाँ पर हम मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के कुछ क्रियाओं का उदाहरण दे रहे हैं।

7. 2.1.1. आना- मा. ओ. (आस्), प. ओ. (आस्), छ. (आ)

<+समाप्ति>

हि.	मैं आम खा आया हूँ।
मा. ओ.	मुँ आम्ब खाइ आसिछि।
प. ओ.	मुइँ आम् खाइ आसिछें।
छ.	में आमा खा आए हौं।

इन उदाहरणों आस्, आस्, आ क्रिया अपना मूल अर्थ सूचित करने के साथ-साथ मूल क्रिया की समाप्ति की सूचना देती है।

<+सातत्य>

हि. हम बरसों से यहाँ पढ़ते आए हैं।

मा. ओ. आमे अनेक बर्ष हेला एठि पढ़ि आसुछु।

प. ओ. आमे बहुत बरस हेला न इन पढ़ि आसुछुँ।

छ. हामन बहुत बरस होइस न इकारा पढ़त आवथन।

यहाँ क्रिया-व्यापार की सातत्य की सूचना देती है।

<+समाप्ति+आसन्न+प्रत्यक्ष>

हि. शत्रु चढ़ा आता है।

मा. ओ. शत्रु माड़ि आसुछि।

प.ओ. शत्रु माड़ि आसुछे।

छ. शत्रु चेढ़ आवत थें।

यहाँ आना क्रिया प्रत्यक्ष आसन्नता की सूचना देती है।

7. 2.1. 2. उठना-मा. ओ. (उठ), प. ओ. (उठ्), छ. (उठ्)

<+प्रारंभ+शीघ्रता>

हि. मेरी कहानी सुन कर वह रो उठा।

मा. ओ. मो काहणी सुणि से कान्दि उठिला।

प. ओ. मोर कथानी सुनि करि से कान्दि उठला।

छ. मोर काथानी सुन के ओ रो उठिस।

रंजक क्रिया के रुप में उठना क्रिया मूल क्रिया के आरंभ की सूचना देने के साथ-साथ शीघ्रता से संपन्न होने की भी सूचना देती है।

7. 2.1. 3. करना-मा. ओ. (कर्), प. ओ. (कर्), छ. (कर्)

इन तीनों भाषाओं में मिश्र क्रिया जो मूल क्रिया के आंशिक द्विरुक्त रूप या समस्त

क्रिया रूप होते हैं, के साथ रंजक क्रिया 'करना' का प्रयोग वीप्सा के भाव को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। जैसे-

द्विरुक्त मिश्र क्रिया

हि.	वह पढ़ा करता है।
मा. ओ.	से पढ़ा पढ़ि करे।
प. ओ.	से पढ़ा पढ़ि करसि।
छ.	ओ पाढ़ा पढ़ि करथे।

7. 2.1. 4. चलना-मा. ओ. (चाल्), प. ओ. (चाल्), छ. (चल्)

<+सातत्य>

हि.	एक घंटे से पढ़ता चला है।
मा. ओ.	घंटे हेलाणि पढ़ि चालिछि।
प. ओ.	घंटे हेला न पढ़ि चालिछे।
छ.	एक घांटा ले पढ़त चलथे।

चलना मूल क्रिया के क्रिया-व्यापार के सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 5. जाना-मा. ओ. (जा), प. ओ. (जा), छ. (जा)

<+समाप्ति><+सातत्य><+आसन्न>

हि.	राम चला जाएगा।	खर्च बढ़ता जाएगा।	मैं भूख से मरा जा रहा हूँ।
मा. ओ.	राम चालि जिब।	खर्च बढ़ि जिब।	मुँ भोक रे मरि जाउछि।
प. ओ.	राम चालि जिबा।	खर्चा बढ़ि जिबा।	मुइँ भुखे मरि जाउछें।
छ.	राम चले जाहि।	खर्चा बढ़ जाहि।	में भूख में मर जावथँ।

इन तीनों भाषाओं में जाना मूल क्रिया की समाप्ति, सातत्य और आसन्न की सूचना देती है।

7. 2.1. 6. देना-मा. ओ. (दे), प. ओ. (दे), छ. (दे)

<+अनुज्ञा>

हि. गोपाल को खाने दो।

मा. ओ. गोपाल कु खाइबाकु दिअ।

प. ओ. गोपाल के खाइबार के दिअ।

छ. गोपाल ला खाएबर द।

इन भाषाओं में देना क्रिया अनुज्ञा वृत्ति की सूचना देती है।

7. 2.1. 7. बैठना-मा. ओ. (बस्), प. ओ. (बस्), छ. (बैठ)

<+आरंभ, +सातत्य>

हि. वह तो पूरी कहानी कह बैठा।

मा. ओ. से त पूरा काहाणी कहि बसिला।

प. ओ. से त पूरा कथानी कहि बसला।

छ. ओ त पूरा काथानी कह बैठिस्।

तीनों भाषाओं में यह मूल क्रिया के आरंभ एवं सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 8. रहना- मा. ओ. (रह), प. ओ. (रह), छ. (र)

<+सातत्य>

हि. घड़ि मेज पर रखी रहती है।

मा. ओ. घन्टा मेज उपरे पड़ि रहुछि।

प. ओ. घन्टा मेज उपरे पड़ि रहिसि।

छ. घड़ि मेज उपर में पड़े रथे।

रंजक क्रिया 'रहना' मूल क्रिया के सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1. 9. लगाना-मा. ओ. (लाग्), प. ओ. (लाग्), छ. (लाग्)

<+आरंभ, +सातत्य>

हि.	वह आने लगा।
मा. ओ.	से आसिबाकु लागिला।
प. ओ.	से आसबार के लागला।
छ.	ओ आएबर लागिस।

रंजक क्रिया 'लगना' मूल क्रिया के प्रारंभ एवं सातत्य की सूचना देती है।

7. 2.1.10. सकना-मा. ओ. (पार्), प. ओ. (पार्), छ. (सक्)

<+सामर्थ्य>

हि.	मैं जा सकूंगा।
मा. ओ.	मुँ जाइ पारिबि।
प. ओ.	मुइँ जाइ पारमि।
छ.	में जान सकिहौं।

रंजक क्रिया 'सकना' मूल क्रिया के संपादन में कर्ता के सामर्थ्य की सूचना देती है।

8. नकारात्मक क्रियारूप

नकारात्मक क्रियारुप में वक्ता किसी कार्य को न करने का आदेश देता है। सामान्यत: यह माना जाता है कि प्रत्येक भाषा के नकारात्मक वाक्य उनके मूल स्वीकारात्मक वाक्य के नकारात्मक रचनांतरण मात्र हैं।[19] मानक ओड़िआ, पश्चमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में वाक्यों का नकारात्मक रचनांतरण मुख्य रूप से क्रिया पदबंधों का नकारात्मक रचनांतरण ही है। यद्यपि क्रिया पदबंधों का नकारात्मक रचनांतरण पक्ष, काल और वृत्ति पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता, फिर भी पक्ष, काल और वृत्ति के अनुसार नकारात्मक प्रत्ययों के रूप एवं प्रयोग में भिन्नता आ जाती है। यहाँ यही भिन्नता दिखाने के लिए तीनों भाषाओं के क्रिया पदबंधों के नकारात्मक रुपों का विश्लेषण किया जा रहा है।

8.1. नकारात्मक रचनांतरण नियम-1

मा. ओ. [धातु-{पक्ष}+नाह-{व.पु}]

प. ओ. [धातु-{पक्ष}+नाइ-{व.पु}]

छ. [धातु-{पक्ष}+नइ-{व.पु}]

हि.	वह **नहीं** जाता है।	तू **नहीं** जाता है।	वे **नहीं** जाते हैं।
मा. ओ.	से जाउ **नाहीं**~जाउ**नि**।	तु जाउ **नाहूँ**~जाउ**नुँ**।	सेमाने जाउ **नाहान्ति**।
प. ओ.	से **नाइं** जिबार।	तुइँ **नाइँ** जिबार।	सेमाने **नाइँ**जिबार।
छ.	ओ **नइ** जावथे।	तें **नइ** जावथस्।	ओमन **नइ** जावथें।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि सरंचना की दृष्टि से पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में समानता है। नकारात्मक शब्द प. ओ. के (नाइँ) और छ. के (नइ) का प्रयोग क्रिया के पूर्व होता है तथा तीनों स्थितियों में समान है। जबकि मानक ओड़िआ के (नाहिं, नाहुँ, नाहान्ति) का प्रयोग क्रिया के बाद होता है।

8. 2. नाकारात्मक रचनांतरण नियम-2

मा. ओ. [धातु-{पक्ष}+न-स.क्रिया]

प. ओ. [धातु-{पक्ष}+ना-स.क्रिया]

छ. [धातु-{पक्ष}+नि-स.क्रिया]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
नहीं जाता था।	जाउ **न** थिला।	**ना** जाउ थिला।	**नइ** जावत रहिस।
नहीं जाता था।	जाउ **न** थाए।	**ना** जाउ थाए।	**नइ** जावत रहिस।
नहीं जाता होगा।	जाउ **न** थिब।	**ना** जाउ थिबा।	**नइ** जावत रहि।
नहीं जाता होता।	जाउ **न** थाआन्ता।	**ना** जाउ थिता।	**नइ** जावत रतिस।
न जाए।	जाउ **न** थाउ।	**ना** जाउ थाउ।	**नइ** जाए होहि।

इस दृष्टि से भी पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में समानता है।

8. 3. नकारात्मक रचनांतरण नियम-3

मा. ओ. [न+अनुज्ञा रुप]

प. ओ. [ना+अनुज्ञा रुप]

छ. [नि+अनुज्ञा रुप]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
न पढ़े	**न** पढ़ु	**ना** पढ़ु	**नइ** पढ़े
न पढ़	**न** पढ़	**ना** पढ़	**नइ** पढ़
न पढ़िए	**न** पढ़न्तु	**ना** पढ़ुन	**नइ** पढ़

8. 4. नकारात्मक रचनांतरण नियम-4

मा. ओ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+नाहिं]

प. ओ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+ना]

छ. [पक्ष निरपेक्ष क्रियारुप+नइ]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
नहीं जाता है।	**जाए** नाहिं।	**ना** जाए।	**नइ** जाए।

8. 5. स्थिति एवं अस्तित्ववाचक क्रिया के नकारात्मक रूप

8. 5.1. स्थितिवाचक क्रिया के नकारात्मक रूप

मा. ओ. [नाह्-{व.पु}]

प. ओ. [नाइं--{व.पु}]

छ. [नइ-{व.पु}]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं **नहीं** हूँ।	मुँ **नाहिं**।	मुइँ **नाइँन**।	में **नइन** ।
तू **नहीं** है।	तु **नाहिं**।	तुइँ **नाइँन**।	तें **नइन**।
वो **नहीं** है।	से **नाहिं**।	से **नाइँन**।	ओ **नइन**।

मा. ओ. [न+शेष रुप]

प. ओ. [ना+शेष रुप]

छ. [नि+शेष रुप]

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

वह स्कूल में **नहीं** था। से स्कूल रे **न** थिला। से स्कूल रे **ना** थिला। ओ स्कूल में **नइ** रहिस।

वह स्कूल में **नहीं** था। से स्कूल रे **न** थाए। से स्कूल रे **ना** थाए। ओ स्कूल में **नइ** रहे।

वह स्कूल में **ना** होगा। से स्कूल रे **न** थिब। से स्कूल रे **ना** थिबा। ओ स्कूल में **नइ** रहि।

वह स्कूल में **न** हो। से स्कूल रे **न** थाउ। से स्कूल रे **ना** थाउ। ओ स्कूल में **नइ** रहि।

वह स्कूल में **न** होता। से स्कूल रे **न** थाआन्ता। से स्कूल रे **ना** थिता। वो स्कूल में **नइ** होतिस।

8. 5. 2. अस्तित्ववाचक क्रिया का नकारात्मक रूप

मा. ओ. 1. [नुह-शेष व.पु]

2. [नोह-/-उँ/]

प. ओ. [नुह-शेष व.पु]

छ. [नइ-शेष व.पु]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं **नहीं** हूँ।	मुँ **नुहें**।	मुइँ **नुहें**।	में **नइ** हावौं।
तू **नहीं** है।	तु **नोहुँ**।	तुइँ **नुहें**।	तें **नइ** हवस।

मा. ओ. [न+शेष रूप]

प. ओ. [ना+शेष रूप]

छ. [नइ+शेष रूप]

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
वह चोर **नहीं** था।	से चोर **न** थिला।	से चोर **ना** थिला।	ओ चोर **नइ** रहिस।
वह चोर **नहीं** था।	से चोर **न** थाए।	से चोर **ना** थाए।	ओ चोर **नइ** रहे।
वह चोर **न** हो।	से चोर **न** थाउ।	से चोर **ना** थाउ।	ओ चोर **नइ** होऐ।

वह चोर **न** होगा। से चोर **न** हेब। से चोर **ना** हेबा। ओ चोर **नइ** होहि।

वह चोर **न** होता। से चोर **न** हुअन्ता। से चोर **ना** हेता। ओ चोर **नइ** होतिस।

8. 5. 3. संयुक्त क्रिया की नकारात्मकता

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नकारात्मक तत्वों का प्रयोग होता है, तब रंजक क्रिया का प्रयोग नहीं होता है। ऐसी स्थिति में संयुक्त क्रिया में निम्न प्रकार से रूपगत और अर्थगत परिवर्तन होता है।

8. 5. 3.1. रूपगत परिवर्तन

तीनों भाषाओं की संयुक्त क्रिया की मूल क्रिया रंजक क्रिया के अनुरूप रूप लेती है। जैसे-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मैं खेलता **नहीं** हूँ।	मुँ खेले **नाहिं**।	मुइँ **नाइँ** खेले।	में **नइ** खेलं।

8. 5. 3. 2. अर्थगत परिवर्तन

नकारात्मक रुपों में रंजक क्रिया का प्रयोग नहीं होने के कारण तीनों भाषाओं में मूल संयूक्त क्रिया की रंजक क्रिया द्वारा सूचित विशेष पक्ष-वृत्ति नकारात्मक रूप द्वारा सूचित नहीं होती। इन भाषाओं की संयुक्त क्रिया के नकारात्मक रचनांतरण में निम्नलिखित संदर्भ में रंजक क्रिया बनी रहती है-

हि.	मैं अकेले खा **नहीं** सकता।
मा. ओ.	मुँ एका खाइ पारिबि **नाहिं**।
प. ओ.	मुइँ एकला खाइ **नाइँ** पारें।
छ.	में एकला **नइ** खान सकं।

इस प्रकार हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता।

निष्कर्ष

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। इन तीनों भाषाओं में काल, पक्ष और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रिया-पदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रिया-पदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होता है। पूर्ण सूचक प्रत्यय की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा इन दोनों भाषाओं में समानता है, जबकि छत्तीसगढ़ी में /-ए/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। अपूर्ण सूचक प्रत्यय /-इ/ और /-उ/ मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त होते हैं। छत्तीसगढ़ी में /-ए/ और /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। काल सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना की दृष्टि से इन तीनों भाषाओं में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के अनुज्ञा (था, थाअ), भूत-अतीत (थिला, थिले) एवं अनुमान/संभावना (थिबा, थिबे) आदि काल/पक्ष सूचक क्रियाओं में समानता है। छत्तीसगढ़ी में (आहँ, आँहन, रिहिस, रिहिं) आदि का प्रयोग होता है। मानक ओड़िआ के /-इल्-/, /-इब्/, पश्चिमी ओड़िआ के /-अल्-/, /-अम्-/, /-अत्-/ और छत्तीसगढ़ी के /-इस्-/, /-इत्-/ काल सूचक पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के साथ समानता रखती है। मानक ओड़िआ में नियत्व एवं अनुज्ञा को छोड़कर शेष पक्ष निरपेक्ष क्रियारुपों के अंत में कुछ विशेष संदर्भ में /-णि/ का प्रयोग होता है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में /-न/ का प्रयोग होता है। ये प्रत्यय भविष्यत् काल सूचक क्रिया रूप के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-व्यापार की पूर्णता की सूचना देते हैं। मानक ओड़िआ में /-टि/ समापिका क्रिया रुपों के पश्चात प्रयुक्त होने पर क्रिया के घटित होने की निश्चितता की सूचना मिलती है। लेकिन पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में यथाक्रम /काएँ/, /का/ आदि प्रश्नवाचक शब्दों का प्रयोग होता है। नकारात्मक क्रियारुप की दृष्टि से तीनों भाषाओं में समानता नहीं है। मानक ओड़िआ में

(नाहिं, नाहुँ, नाहान्ति), पश्चिमी ओड़िआ में (नाइँ) और छत्तीसगढ़ी में (नि) का प्रयोग होता है। हिन्दी की भाँति पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नकारात्मक शब्दों का प्रयोग क्रिया के बाद होता है, जबकि मानक ओड़िआ में क्रिया के पूर्व। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता है। अगले अध्याय में इन भाषाओं के वाच्य संरचना का अध्ययन किया जाएगा।

संदर्भ

1. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-330

2. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-199

3. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-330-331

4. वर्मा, सत्यकाम-व्याकरण की दार्शनिक भूमिका-पृ. सं.-429

5. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-331

6. वर्मा, सत्यकाम-व्याकरण की दार्शनिक भूमिका-पृ. सं.-429

7. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-260

8. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-318

9. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-155

10. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-201

11. श्रीवास्तव, रवीन्द्र-हिन्दी भाषाविज्ञान अंक-पृ. सं.-201

12. वर्मा, रामलाल-हिन्दी असमिया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-187

13. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण-पृ. सं.-13-132

14. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-324

15. सिंह, सूरजभान-हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना-पृ. सं.-324

16. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-166

17. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-166

18. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-167

19. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-185

पंचम अध्याय

वाच्य

इस अध्याय में मैंने मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के वाच्य संरचना का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। अब तक मैं विभिन्न अध्यायों में लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, पक्ष और वृत्ति का विश्लेषण किया है। इनके समान 'वाच्य' भी क्रिया की एक कोटि है। अतः उस पर स्वतंत्र रूप से विचार करना आवश्यक बन जाता है। प्रस्तुत अध्याय में तीनों भाषाओं के वाच्य संरचना का विश्लेषण करेगें।

'वाच्य' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'वच्' धातु से मानी जाती है। इस दृष्टि से वाच्य का सामान्य अर्थ होता है 'बोलने योग्य'। किन्तु व्याकरण में वाच्य एक तकनीकी शब्द है, जिससे वाक्य में क्रिया के साथ क्रिया-व्यापार में संपृक्त भागीदारों कर्ता और कर्म का अंतः संबंध सूचित होता है। इस अंतःसंबंध की अभिव्यक्ति वाक्य स्तर पर कर्ता, कर्म और क्रिया के आवश्यक रूपांतरण (रुपिमिक परिवर्तन) द्वारा होती है। इस दृष्टि से वाच्य को एक व्याकरणिक कोटि माना गया है।[1] कामताप्रसाद गुरु के अनुसार-"वाच्य क्रिया के उस रुपांतर को कहते हैं जिससे जाना जाता है कि वाक्य में कर्ता के विषय में विधान किया गया है या कर्म के विषय में अथवा केवल भाव के विषय में"।[2]

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि वाच्य क्रिया की वह प्रकार्यात्मक संकल्पना है जिसमें कर्ता, कर्म या क्रिया पर बल होता है। वास्तव में क्रिया की उस रूप रचना को वाच्य कहा जाता है, जिससे यह पता चलता है कि क्रिया का मूल संचालक कर्ता है या कर्म। इससे यह भी संकेत मिलता है कि कर्ता क्रिया को करने में समर्थ है या नहीं। दूसरे शब्दों में वाच्य क्रिया का वह विशिष्ट रुपांतर है जिससे यह जाना जाता है कि क्रियापद की रचना कर्ता के लिए हुई है या कर्म के लिए अथवा इन दोनों के लिए न होकर अपने भाव के विषय में है।

1. वाच्य के भेद

वाच्य के कई भेद होते हैं। दुर्योधन महारणा के अनुसार विभिन्न क्रियारुपों द्वारा

कर्ता, कर्म और क्रिया के अंत:संबंध की अभिव्यक्ति की दृष्टि से वाच्य के निम्नलिखित भेद हो सकते हैं।[3]

1.1. कर्तृ प्रधान (Active)

जिस क्रियारूप का उद्देश्य क्रिया का कर्ता होता है। जैसे-

हि.	गोपाल खेलता है।
मा. ओ.	गोपाल खेले।
प. ओ.	गोपाल खेलसि।
छ.	गोपाल खेलथे।

1. 2. कर्म प्रधान (Pasive)

जिस क्रियारूप का उद्देश्य क्रिया का कर्म होता है।

हि.	सीता से रोटी खाई जाती है।
मा. ओ.	सीता द्वारा रुटी खिया जाए।
प. ओ.	सीता दुआरा रुटी खिया जाएसि।
छ.	सीता से रोटी खाया जाथे।

1. 3. भाव प्रधान (Impersonal)

जिस क्रियारूप का उद्देश्य कर्ता या कर्म न होकर क्रिया द्वारा सूचित भाव ही होता है।

हि.	मुझ से खेला जाता है।
मा. ओ.	मो द्वारा खेला जाए।
प. ओ.	मोर दुआरा खेला जाएसि।
छ.	मोर से खेला जाथे।

1. 4. प्रेरणार्थक (Causative)

जिस क्रियारूप का क्रिया-व्यापार का प्रेरक होता है।

हि.	गुरु शिष्य को सिखाता है।

मा. ओ. गुरु शिष्य कु सिखाए।

प. ओ. गुरु शिष्य कु सिखासि।

छ. गुरु शिष्य ला सिखाथे।

1. 5. सकर्मक (Transitive)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि क्रिया-व्यापार का फल कर्ता से निकल कर कर्म पर पड़ता है।

हि. भगवान सभी को देखता है।

मा. ओ. भगवान समस्तङकु देखे।

प. ओ. भगवान समकु देखसि।

छ. भगवान सबला देखथे।

1. 6. अकर्मक (Intransitive)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि क्रिया-व्यापार का फल कर्ता पर ही पड़ता है।

हि. राम पढ़ता है।

मा. ओ. राम पढ़े।

प. ओ. राम पढ़सि।

छ. राम पढ़थे।

1. 7. आत्मनेपदी (Reflexive)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि कर्ता अपने लिए कार्य करता है।

हि. मैं पढ़ता हूँ।

मा. ओ. मुँ पढ़ें।

प. ओ. मुइँ पढ़सिं।

छ. में पढ़ हौं।

1. 8. परस्मैपदी (Banefactive)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि कर्ता दूसरों के लिए कार्य करता है।

हि.	वह दूसरों के लिए करता है।
मा. ओ.	से अलागाङक पाइँ करे।
प. ओ.	से अलगाकर लागि करसि।
छ.	ओ आनेमनबर करथे।

1.10. माध्यमिक (Middle)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि कर्ता अपने लिए और दूसरों के लिए कार्य करता है।

हि.	वह खाना पकाता है।
मा. ओ.	से रोषइ करे।
प. ओ.	से रुषेइ करसि।
छ.	ओ रान्धथे।

1.11. पारस्परिक (Reciprocal)

जिस क्रियारूप से यह सूचित होता है कि एकाधिक कर्ता आपस में कार्य करते हैं।

हि.	वे साथ में खेलते हैं।
मा. ओ.	सेमाने सांगरे खेलन्ति।
प. ओ.	सेमाने सांगे खेलसन।
छ.	ओमान संग में खेलथें।

किसी भी भाषा में उपरोक्त वाच्य के सारे भेद नहीं मिलते हैं। परंपरागत व्याकरणों में वाच्य के तीन भेद माने गए हैं।[4]

1. कर्तृवाच्य (Active Voice)
2. कर्मवाच्य (Passive Voice)

3. भाववाच्य (Impersonal/Middle passive Voice)

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी व्याकरणों में भी वाच्य के उपरोक्त तीन भेद पाये जाते हैं।

प्रत्येक भाषा के मूल वाक्य कर्तृपरक होते हैं, अर्थात् वाक्य का उद्येश्य कर्ता के बारे में कथन करना होता है। फलस्वरुप बहू कारकीय कर्ता वाक्यत्मक या व्याकरणिक कर्ता होता है। रचनांतरण के द्वारा वाक्य का कर्ता कारकीय कर्ता के अलावा कारकीय कर्म, कारण आदि भी बन सकते हैं। इस दृष्टि से वाक्य का वाच्य आवश्यकतानुसार बदलता रहता है। इस प्रकार वाक्यात्मक रचना किसी न किसी वाच्य का द्योतन करती है, अर्थात् प्रत्येक वाक्य की क्रिया रचना से यह व्यक्त होता है कि वाक्य का वाच्य (कथ्य, उद्देश्य, प्रयोजन) कर्ता (कारकीय), कर्म (कारकीय) अथवा भाव है। इस प्रकार वाच्य के कर्तृ, कर्म एवं भाव तीन भेद स्पष्टता से मिलते हैं। अब हम मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के वाच्य सरंचना पर विचार करेंगे।

2. कर्तृ वाच्य

'कर्तृवाच्य' क्रिया वह है जिसका कर्ता ही उसके व्यापार का करनेवाला होता है। अतः कर्ता ही जिस वाक्य का उद्देश्य है वह कर्तृ वाच्य है।

2.1. कर्तृ वाच्य की संरचना

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के आधारभूत वाक्य साँचे कर्तृवाच्य के होते हैं-

कर्ता ---------- कर्म---------- क्रिया

<-विभक्ति> <_+ विभक्ति> < धातु-प्रत्यय>

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
राज फल/को खाएगा।	राज फल/कु खाइब।	राज फल/के खाएबा।	राज फर/ला खाहि।
राज फल/को खा लेगा।	राज फल/कु खाइ देब।	राज फल/के खाइ देबा।	राज फर/ला खादिहि।
राज मान जाएगा।	राज मानि जिब।	राज मानि जिबा।	राज मान जाहि।

इन वाक्यों में 'राज' कर्ता है जो अविभक्तिक रूप में आया है तथा कर्म 'फल' है जो सविभक्तिक रुप में आया है। हिन्दी में (को), मानक ओड़िआ में (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) और छत्तीसगढ़ी में (ला) विभक्ति का प्रयोग कर्म के साथ हुआ है। इस संरचना में कर्ता सामान्यतः अविभक्तिक रूप में आता है। कर्म का प्रयोग ऐच्छिक होता है और प्रयोग की स्थिति में अविभक्तिक एवं सविभक्तिक दोनों रुपों में आ सकता है। क्रिया सरल रूप में आती है और कर्ता के साथ इसकी अन्विति होती है।

2. 2. कर्तृ वाच्य की विशेषता

पारंपारिक व्याकरण में कर्तृवाच्य क्रिया की अन्विति की दृष्टि से तीन प्रकार होते हैं-

1. कर्ता के साथ क्रिया की अन्विति-कर्तरि प्रयोग
2. कर्म के साथ क्रिया की अन्विति-कर्मणि प्रयोग
3. क्रिया की निरपेक्षता-भावे प्रयोग

2. 2.1. कर्मवाच्य कर्तरि प्रयोग (Subjectival Construction)

कर्ता	कर्म	क्रिया
<-विभक्ति>	<_+विभक्ति>	1. <_+पूर्ण-सकर्मक>
		2. <-पूर्ण-सकर्मक>

इस संरचना में कर्ता अविभक्तिक रुप में आता है और कर्म सविभक्तिक व अविभक्तिक दोनों रुपों में आ सकता है। जैसे-

हि.	राम खाता है।	राम खाया।
मा. ओ.	राम खाए।	राम खाइला।
प. ओ.	राम खाएसि।	राम खाएला।
छ.	राम खाथे।	राम खाइस।

इन वाक्यों में कर्ता 'राम' है, जो अविभक्तिक रुप में आया है।

हि.	राम फल खाता है।	राम फल को खाता है।
मा. ओ.	राम फळ खाए।	राम फळ कु खाए।
प. ओ.	राम फल् खाएसि।	राम फल् के खाएसि।
छ.	राम फर् खाथे।	राम फर् ला खाथे।

इन वाक्यों में 'फल' कर्म है, जो पहले वाक्य में अविभक्तिक रुप में प्रयोग हुआ है एवं दूसरे वाक्यों में सविभक्तिक रुप में। हिन्दी में (को), मानक ओड़िआ में (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) एवं छत्तीसगढ़ी में (ला) विभक्ति का प्रयोग कर्म के साथ हुआ है।

2. 2. 2. कर्तृवाच्य कर्मणि प्रयोग (Objectival Construction)

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इस रूप का प्रयोग नहीं है, केवल हिन्दी में है।

कर्ता	कर्म	क्रिया
<+ने>	<विभक्ति>	<+पूर्ण+सकर्मक>

राम ने रोटी खाई।

राम ने किताब पढ़ी।

2. 2. 3. कर्तृवाच्य भावे प्रयोग (Nevtral Construction)

<+ने>	<विभक्ति>	<+पूर्ण+सकर्मक>

राम ने कहा।

3. कर्मवाच्य और भाववाच्य

प्रस्तुत अनुच्छेद में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के कर्मवाच्य और कर्म/भाववाच्य वाक्यों की संरचनात्मक भिन्नताओं का विश्लेषण किया जाएगा।

जब क्रिया के पुरुष, लिंग और वचन कर्म के पुरुष, लिंग और वचन के समान होते हैं, तब कर्म वाच्य होता है। जब कर्ता को प्रकट करने की आवश्यकता नहीं होती, जब कर्ता अज्ञात होता है या जब अधिकारियों द्वारा आदेश दिया जाता है, तब कर्मवाच्य

का प्रयोग होता है।

जब क्रिया का विधान कर्ता और कर्म दोनों में से किसी के अनुसार न होकर भाव के अनुसार होता है तब भाववाच्य होता है।

3. 1. वाच्य के अनुसार क्रिया की संरचना

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य की क्रिया की संरचनाएँ निम्न प्रकार की होती है।

3.1.1. कर्तृवाच्य की क्रिया

तीनों भाषाओं में कर्तृवाच्य की क्रिया संरचना निम्न प्रकार की होती हैं-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
खाएगा	खाइब	खाएबा	खाहि
खाता है	खाउछि	खाउछे	खावथे
खाता था	खाउथिला	खाउथिला	खावत रहिस्

3.1. 2. कर्म और भाववाच्य की क्रिया

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
खाया जाएगा।	खिआ जिब।	खिआ जिबा।	खुआ जाहि।
खाया जाता है।	खिआ जाउछि।	खिआ जाउछे।	खुआ जावथे।
खाया जाता था।	खिआ जाउथिला।	खिआ जाउथिला।	खुआ जावत् रहिस्।

तीनों भाषाओं में कर्तृवाच्य की क्रिया कर्म/भाववाच्य में /-आ/ प्रत्यांत होती है और 'जा' क्रिया के सहयोग से संयुक्त क्रिया बन जाती है।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
एक घोड़ा लाया जाएगा।	गोटे घोड़ा अणा जिब।	गुटे घुड़ा अना जिबा।	एकठि घोड़ा आनाजाही।
घोड़े लाए जायेंगे।	घोड़ा गड़िकु अणा जिब।	घोड़ामानकु अना जिबा।	घोड़ामानला आना जाही।

इस प्रकार मानक ओड़िआ के (अणा), पश्चिमी ओड़िआ के (अना) और छत्तीसगढ़ी के (आना) मूल क्रिया का /-आ/ प्रत्यय अप्रभावित रहता है और कर्म के साथ

/जा-/ सहायक क्रिया की अन्विति होती है।

हि. मुझसे और खाया नहीं जाएगा।

मा. ओ. मो द्वारा आउ खिआ जिबनि।

प. ओ. मोर दुआरा आउ नाईं खिआ जाए।

छ. मोर ले आउ नइ खुआ जाए।

इस प्रकार इन भाषाओं के भाववाच्य में संयुक्त क्रिया की /-आ/ प्रत्यय अप्रभावित रहता है और क्रिया अन्य पुरुष एकवचन का रूप लेती है।

3.1. 3. कर्म और भाववाच्य क्रिया की विशेष संरचना

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में कर्म/भाववाच्य में /जा-/ सहायक क्रिया के स्थान पर यथाक्रम हे, हे और 'हो' सहायक क्रिया का प्रयोग होता है-

हि. यह काम किया जाएगा।

मा. ओ. एहि काम करा हेब।

प. ओ. इ काम करा हेबा।

छ. इ काम कारा होहि।

शक्यता के अर्थ में 'हो-' सहायक क्रिया वाली कर्म/भाववाच्य संरचना की मूल क्रिया में /-आ/ के स्थान पर मानक ओड़िआ में /-इ/, पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ और छत्तीसगढ़ी में /-न/ का प्रयोग होता है। जैसे-

हि. यह काम किया जा सकेगा।

मा. ओ. एहि काम करि हेब।

प. ओ. इ काम करि हेबा।

छ. इ काम करन होहि।

4. रुपस्वनिमक परिवर्तन

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के कर्म/भाववाच्य के अर्थ /-

आ/ प्रत्यय जुड़ने से मूल धातुओं में निम्नलिखित रुपस्वनिमिक परिवर्तन होता है-

4.1. इस प्रत्यय के साथ एकारांत धातु /दे-/, /ने-/ के क्रमशः /दि-/, /नि-/ संपरिवर्तक रुप प्रयुक्त होते हैं। छत्तीसगढ़ी में /नि-/ की जगह /लि-/ का प्रयोग होता है। जैसे-

मा. ओ. / प. ओ. दि-आ-दिआ जाए (दिया जाता है)

नि-आ- निआ जाए (लिया जाता है)

छ. लि-या- लिया जाथे (लिया जाता है)

4. 2. /सो-/ का /सु-/ संपरिवर्तक रूप प्रयुक्त होता है। जैसे-

मा. ओ. /प. ओ. सु-आ -सुआ जाए (सोया जाए)

छ. सु-ता सुता जाए (सोया जाए)

4. 3. /खा-/ का /खि-/ संपरिवर्तक रूप प्रयुक्त होता है। जैसे-

मा. ओ. /प. ओ. खि-आ-खिआ जाए (खाया जाता है)

छ. खु-आ-खुआ जाए (खाया जाए)

5. कर्म/भाववाच्य की रुपावली

5.1.-मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में कर्ता/भाववाच्य के विभिन्न पक्ष, काल और वृत्ति के अनुसार जो क्रियारुप संभव है, अन्यपुरुष एकवचन में मूल धातु /लिख-/ साथ उनके रूप निम्नलिखित हैं।

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
लिखा जाए	लेखा जाउ~लेखा हेउ	लेखा जाउ	लिखा जाए
लिखा जाएगा	लेखा जिब~लेखा हेब	लेखा जिबा~लेखा हेबा	लिखा जाहि~लिखा होहि
लिखा जाता	लेखा जाआन्ता~लेखा हुअन्ता	लेखा जाएता~लेखा हेता	लिखा जातिस~होतिस्
लिखा जाता है	लेखा जाए~हुए	लेखा जाएसि~हेसि	लिखा जाथे~होथे
लिखा जा रहा है	लेखा जाउछि~हेउछि	लेखा जाउछे~हेउछे	लिखा जावथे~होवथे
लिखा जा रहा था	लेखाजाउथिला~हेउथिला	लेखाजाउथिला~हेउथिला	लिखाजात रिहिस~होत रिहिस

लिखा गया	लेखा गला~हेला	लेखा गला~हेला	लिखा गिस~होइस
लिखा गया है	लेखा जाइछि~होइछि	लेखा जाइछे~हेइछे	लिखा गिसे~होइसे

लिखा जाता हो/होगा लेखा जाउथिब~हेउथिब लेखा जाउथिबा~हेउथिबा लिखा जात रिहि~होतरिहि

5. 2.-संज्ञा, विशेषण एवं असमापिका क्रिया के रुप में तीनों भाषा में प्रयुक्त कर्मवाच्य के क्रियारुप निम्नलिखित हैं-

5. 2.1. संज्ञा के रूप में

हि.	लिखा जाना
मा. ओ.	लेखा जिबा~लेखा हेबा
प. ओ.	लेखा जिबा~लेखा हेबा
छ.	लिखा जाहि~लिखा होहि

5. 2. 2. विशेषण के रूप में

	भूत	वर्तमान
हि.	लिखा गाया।	लिखा जाता गया।
	लिखा हुआ	लिखा जाता हुआ
मा. ओ.	लेखा जाइथिब~लेखा होइथिबा	लेखा जाइथिब~लेखा होइथिबा
		लेखा गला~लेखा हेला
प. ओ.	लेखा जाइथिबा~लेखा हेइथिबा	लेखा जाइथिबा~लेखा हेइथिबा
		लेखा गला~लेखा हेला
छ.	लिखा जाएरिहि~लिखा होएरिहि	लिखा जाएरिहि~लिखा होएरहि
		लिखा गिस्~लिखा होइस्

6. वाक्य स्तर पर अन्य परिवर्तन

यहाँ मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियारुपों के अतिरिक्त कर्म और भाववाच्य में वाक्य स्तर पर घटित होनेवाली कर्ता और कर्म के

स्थान पर प्रयुक्त संज्ञा/सर्वनाम शब्दों की संरचनात्मक विशेषताएँ प्रस्तुत की जा रही है।

6.1. कर्ता की स्थिति

कर्तृवाच्य का कर्ता, कर्म एवं भाववाच्य में मानक ओड़िया में (रे, द्वारा), पश्चिमी ओड़िया में (रे, दुआरा, थिं) और छत्तीसगढ़ी में (ले, में) विभक्ति के साथ आता है। जैसे-

कर्तृवाच्य

हि.	लड़के खेलेंगे।	साबुन साफ करता है।
मा. ओ.	पिलामाने खेलिबे।	साबुन साफा करे।
प. ओ.	पिलामाने खेलबे।	साबुन सफा करसि।
छ.	लइकामन खेलहिं।	साबुन साफ करथे।

भाववाच्य

हि.	लड़कों से खेला जाएगा।	साबुन से साफ किया जाएगा।
मा. ओ.	पिलामानङ्क द्वारा खेला जिब।	साबुन द्वारा सफा करा जिब।
प. ओ.	पिलामानकर द्वारा खेला जिबा।	साबुन थिं सफा करा जिबा।
छ.	लइकामन ले खेला जाहि।	साबुन में साफ किया जाहि।

कर्मवाच्य

हि. लड़कों से क्रिकेट खेला जाएगा। साबुन से कपड़ा साफ किया जाएगा।

मा. ओ. पिलामानङ्क द्वारा क्रिकेट खेला जिब। साबुन रे कपड़ा सफा करा जिब।

प. ओ.पिलामानकर दुआरा क्रिकेट खेला जिबा। साबुन रे कपड़ा सफा करा जिबा।

छ. लइकामन ले क्रिकेट खेला जाहि। साबुन में कपड़ा साफ किया जाहि।

6. 2. कर्म की स्थिति

कर्तृवाच्य का कर्म कर्मवाच्य का व्याकरणिक कर्ता बनता है और बिना विभक्ति के आता है। ऐसी स्थिति में इसके साथ क्रिया की अन्विति होती है। जैसे-

	कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
हि.	मैं एक नौकर रखुंगा।	मेरे द्वारा एक नौकर रखा जाएगा।
	मैं कई नौकर रखुंगा।	मेरे द्वारा कई नौकर रखे जाएँगे।
मा. ओ.	मुँ जणे नउकर रखिबि।	मो द्वारा जणे नउकर रखा जिब।
	मुँ अनेक नउकर रखिबि।	मो द्वारा अनेक नउकर रखा जिब।
प. ओ.	मुईं जणे नोकर रखमि।	मोर दुआरा नोकर जणे रखा जिबा।
	मुईं बहुत नोकर रखमि।	मोर दुआरा नोकर बहुत रखा जिबा।
छ.	में एकझिन नोकर राखिहँ।	मोर से एकझिन नोकर राखा जाहि।
	में बहुंत नोकर राखिहँ।	मोर से बहुंत नोकर राखा जाहि।

जब व्याकरणिक कर्ता (कर्तृवाच्य का कर्म) सविभक्तिक रूप में आता है तो मानक ओड़िआ में (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) और छत्तीसगढ़ी में (ला) का प्रयोग होता है, तब क्रिया निरपेक्ष (अन्य पुरुष एकवचन पुलिंग) रहती है। ऐसे वाक्य कर्म की प्रधानता न रहने के कारण भाववाच्य के अन्तर्गत आते हैं। जैसे-

हि.	फल को खाया जाएगा।
मा. ओ.	फळ कु खिया जिब।
प. ओ.	फल् के खिया जिबा।
छ.	फर् ला खुआ जाहि।

यदि क्रिया द्विकर्मक हो तो गौण कर्म सविभक्तिक रूप में आता है। यदि मुख्य कर्म कर्मवाच्य वाक्य का व्याकरणिक कर्ता बन कर बिना विभक्ति के आता है तो इसके साथ क्रिया की अन्विति होती है। जैसे-

हि.	गोपाल को पैसा दिया गया।
मा. ओ.	गोपाल कु पइसा दिया गला।
प. ओ.	गोपाल के पइसा दिया गला।
छ.	गोपाल ला पेइसा दिया गिस्।

6. 3. कर्म और भाववाच्य का प्रयोग

वाच्य का प्रयोग वक्ता की इच्छा पर निर्भर करता है। कर्तृवाच्य का कर्म या भाववाच्य में रचनांतरण करना संभव होने पर भी मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में सैद्धान्तिक स्तर पर रचनांतरित कर्म और भाववाच्य का प्रयोग प्रायः नहीं पाया जाता है। परंतु निम्नलिखित कुछ संदर्भों में कर्म और भाववाच्य का प्रयोग तीनों भाषाओं में मिलता है-

6. 3.1. जब क्रिया का कर्ता अज्ञात हो। जैसे-

हि.	घोड़ा पकड़ा गया।	
मा. ओ.	घोड़ा धरा गला।	(कर्मवाच्य)
प. ओ.	घुड़ा धरा गला।	
छ.	घोड़ा पाकड़ा गिस्।	

6. 3. 2. जब कर्ता को अभिव्यक्त करने की आवश्यकता न हो। जैसे-

हि.	आओ, अब खेला जाए।	
मा. ओ.	आस, एबे खेला जाउ।	(भाववाच्य)
प. ओ.	आस, एबे खेला जाउ।	
छ.	आब, अब् खेला जाए।	

6. 3. 3. वक्ता जब कर्ता को टालना चाहता है। जैसे-

हि.	फिर लिखा जाएगा।	
मा. ओ.	परे लेखा जिब।	(भाववाच्य)
प. ओ.	परे लिखा जिबा।	
छ.	पिछु लिखा जाहि।	

6. 3. 4. अश्यकता के अर्थ में जो प्रायः नकारात्मक होते हैं। जैसे-

हि.	मुझसे और पढ़ा नहीं जाएगा।
मा. ओ.	मो द्वारा आउ पढ़ा जिबनि।

प. ओ. मोर दुआरा आउ नाइँ पढ़ा जाए।

छ. मोर ले आउ नइ पाढ़ा जाए।

6. 3. 5. कर्म और भाववाच्य सूचक सामान्य क्रियाएँ

मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की आना, मिलना, लगना, होना आदि क्रियाएँ विशेष प्रकार की वाक्य संरचनाओं में प्रयुक्त होने पर कर्म/भाववाच्य की सूचना देती हैं। ऐसी संरचनाओं में ये क्रियाएँ अपना सामान्य अर्थ को छोड़कर दूसरे प्रकार के अर्थ व्यक्त करती हैं। इन वाक्य संरचनाओं की एक विशेषता यह है कि प्रायः कोई न कोई क्रिया-व्यापार सूचक कृदंत इन क्रियाओं के पूरक के रूप में आता है।

6. 3. 5.1. आना : मा. ओ.-आ-, प. ओ.-आ, छ.-आ

कर्ता----------कृदंत----------क्रिया

<+विभाक्ति

मा. ओ. {कु} धातु-इ आ-

प. ओ. {के} धातु-इ आ-

छ. {ला} धातु-ए आ-

हि.	मा. ओ.	प. ओ.	छ.
मुझे पढ़ना आता है।	मते पढ़ि आसे।	मते पढ़ि आएसि।	मोला पढ़ेबर आथे। (भा.सू)
मैं पढ़ना जानता हूँ।	मुँ पढ़ि जाणें।	मुईं पढ़ि जानसिं।	में पढ़ेबर जानथँ। (कर्तृवाच्य)
सीता को पढ़ना आता है।	सीताकु पढ़ि आसे।	सीताके पढ़ि आएसि।	सीताला पढ़ेबर आथे। (भाव)
सीता पढ़ना जानती है।	सीता पढ़ि जाणे।	स ीता पढ़ि जानसि।	सीता पढ़ेबरजानथे। (कर्तृवाच्य)

इससे स्पष्ट है कि तीनों भाषाओं में 'आना' क्रिया जब 'जानने' के अर्थ में प्रयुक्त होती है, तब मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में 'इ-प्रत्यांत' कृदंत तथा छत्तीसगढ़ी में 'ए-प्रत्यांत' का प्रयोग होता है। कर्ता याथाक्रम कु, के, ला विभक्ति के साथ आता है।

6. 3. 5. 2. पड़ना : मा. ओ.-पड्, प. ओ.-पड्, छ.-पड्

कर्ता----------कर्म----------कृदंत----------क्रिया

<+विभक्ति> <-विभक्ति>

मा. ओ. {कु} धातु-इबाकु

प. ओ. {के} धातु-इबारके

छ. {ला} धातु-आएबर

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

राज को खाना पड़ा। राजकु जिबाकु पड़िला। राजके जिबारके पड़ला। राजला जाएबर पड़िस। (भा.सू)

राज खाया। राज खाइला। राज खाएला। राज खाइस। (कर्तृवाच्य) (विवशता)

मानक ओड़िआ के (-इबाकु), पश्चिमी ओड़िआ के (-इबारके) और छत्तीसगढ़ी के (-आएबर) प्रत्यांत कृदंत के साथ विवशता के अर्थ में तीनों भाषाओं में प्रयुक्त पड़ना क्रिया कर्म/भाववाच्य की सूचना देते हैं।

6. 3. 5. 3. मिलना : मा. ओ.-मिल्, प. ओ.-मिल्, छ.-मिल्

माध्यम कर्ता----------कर्म----------क्रिया

<+विभक्ति> <+विभक्ति> <+विभक्ति>

मा. ओ. {रे} {कु} मिल्-

प. ओ. {रे} {के} मिल्-

छ. {ले} {ला} मिल्-

हि. (मालिक द्वारा) नौकर को कड़ी सजा मिलेगी। (कर्मवाच्य सूचक)

नौकर कड़ी सजा पाएगा। (कर्तृवाच्य)

मा. ओ. (मालिक द्वारा) नौकरकु कठिन दण्ड मिलिब।

नौकर कठिन दण्ड पाइब।

प. ओ. (मालिक दुआरा) नौकर के कड़ा सजा मिलबा।

नौकर कड़ा सजा पाएबा।

छ. (मालिक काराले) नौकर ला काड़ा साजा मिलहि।

नौकर काड़ा साजा पाहि।

ऐसी संरचना में मानक ओड़िआ में कर्ता (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) और छत्तीसगढ़ी में (ला) के साथ आता है। तीनों भाषाओं में कर्म बिना विभक्ति के आता है।

माध्यम---------कर्ता----------कर्म----------कृदंत----------क्रिया

<+विभक्ति> <+विभक्ति> <-विभक्ति>

मा. ओ. {रे} {कु} धातु-इबाकु मिल्-

प. ओ. {रे} {के} धातु-अबारके मिल्-

छ. {ले} {ला} धातु-एबर मिल्-

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

सुनने को मिलता है। सुणिबाकु मिलुछि। सुनबारके मिलुछे। सुनेबर मिलथे।(भाववाच्य सूचक)

(वक्ता) सुनता है। (वक्ता) सुणुछि। (वक्ता) सुनुछे। (वक्ता) सुनथे। (कर्तृवाच्य)

यह संरचना गठन की दृष्टि से सभी प्रकार से पूर्व संरचना का अनुरुप है। इस संरचना की एक विशेषता यह है कि इसमें मानक ओड़िआ में (कु) विभक्ति, धातु (-इबाकु), पश्चिमी ओड़िआ में विभक्ति (के), धातु (अबारके) और छत्तीसगढ़ी में विभक्ति (ला), धातु (-एबर) क्रिया के पूरक के रुप में आते हैं और कृदंत के साथ मिलना क्रिया कर्म/भाववाच्य की सूचना देते हैं।

6. 3. 5. 4. लगना : मा. ओ.-लाग्, प. ओ.-लाग्, छ.-लाग्

कर्ता----------पूरक----------क्रिया

<+विभक्ति> अनुभव सूचक

संज्ञा/विशेषण

मा. ओ. {कु} लाग्-

प. ओ. {के} लाग्-

छ. {ला} लाग्-

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

माँ को दुःख लगेगा। माँकु दुःख लागिब। माँके दुख् लागबा। माँ ला दुख् लागहि। (भा.सू)

माँ दुःख का अनुभव करेगी। माँ दुःख अनुभव करिब। माँ दुख् (अनुभव) करबा। माँ दुख् (अनुभव) करहि। (कर्तृवाच्य)

इस संरचना में कर्ता के साथ मानक ओड़िआ में (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) और छत्तीसगढ़ी में (ला) का प्रयोग होता है। तीनों भाषाओं में पूरक के रूप में अनुभव सूचक अमूर्तवाचक संज्ञा/विशेषण का प्रयोग होता है। पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में अनुभव शब्द का प्रयोग न करने पर भी अनुभव का बोध होता है।

6. 3. 5. 5. होना : मा. ओ.-हे, प. ओ.-हे, छ.-हो

कर्ता----------कर्म----------कृदंत----------क्रिया

<+विभक्ति> <-विभक्ति>

मा. ओ. {कु} धातु-इबाकु हे-

प. ओ. {के} धातु-एबारके हे-

छ. {ला} धातु-एबर हो-

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

राम को फल खाना होता है। रामकु फल खाइबाकु हेउछि। रामके फल् खाएबारके हेउछे। रामला फर् खाएबर होथे। (कर्मवाच्य सूचक)

राम फल खाता है। राम फल खाउछि। राम फल् खाउछे। राम फर् खावथे। (कर्तृवाच्य)

राम को फल खाने होंगे। रामकु फल खाइबाकु हेब। रामके फल् खाएबारके हेबा। रामला फर् खाएबर होहि। (कर्मवाच्य सूचक)

राम फल खाएगा। राम फल खाइब। राम फल् खाएबा। राम फर् खाहि। (कर्तृवाच्य)

इस संरचना में सकर्मक धातु के कृदंत के साथ कर्म का प्रयोग ऐच्छिक रूप हो सकता है। प्रयोग की स्थिति में कर्म बिना विभक्ति के आता है।

6. 3. 5. 6. है : मा. ओ.-अछ्-, प. ओ.-अछ्-, छ.-आह्-

कर्ता----------कर्म----------कृदंत----------क्रिया

<+विभक्ति> <-विभक्ति>

मा. ओ. {कु} धातु-इबाकु अछ्-

प. ओ. {के} धातु-इबारके अछ्-

छ. {ला} धातु-एबर आह्-

हि. मा. ओ. प. ओ. छ.

राज को फल खाना है। राजकु फल खाइबाकु अछि। रामके फल् खाएबारके अछे। राजला फर् खाएबर आहे। (कर्मवाच्य)

राज फल खाएगा। राज फल खाइब। राज फल् खाएबा। राज फर् खाहि। (कर्तृवाच्य)

इस संरचना में कृदंत का धातु यदि सकर्मक हो तो कर्म (व्याकरणिक कर्ता) का प्रयोग ऐच्छिक रूप से हो सकता है। प्रयोग की स्थिति में कर्म बिना विभक्ति के आता है।

7. प्रेरणार्थक क्रिया

जिन क्रिया या धातुओं से इस बात का बोध हो कि कर्ता स्वंय कार्य न कर किसी दूसरे को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, प्रेरणार्थक धातुएँ या क्रियाएँ कहलाती हैं। प्रेरणार्थकता की दृष्टि से हिन्दी की अधिकांश क्रियाएँ तीन अलग-अलग रुपों में दिखाई पड़ती है। हिन्दी की क्रिया के इन तीन रुपों को क्रमशः मूल अप्रेरणार्थक रुप और प्रेरणार्थक रुप।[5] जैसे-

सुनना- सुनाना, सुनवाना

गिरना- गिराना, गिरवाना

करना- कराना, करवाना

किन्तु मानक ओड़िआ[6], पश्चिमी ओड़िआ[7] और छत्तीसगढ़ी[8] की अधिकांश क्रियाएँ दो रुपों में दिखाई देती हैं।

1. मूल अप्रेरणार्थक रुप

२. प्रेरणार्थक रुप

प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया कार्य को स्वंय न करके दूसरे को करने में प्रेरणा देती है। द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया में प्रेरक कर्ता को कार्य करने की प्रेरणा देती है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के अप्रेरणार्थक और प्रेरणार्थक रूप रुपस्वनिमिक प्रक्रिया से परस्पर संबद्ध हैं, इस दृष्टि से क्रिया के मूल अप्रेरणार्थक रूप को मूल प्रातिपादिक एवं व्युत्पन्न प्रेरणार्थक रूपों को व्युत्पन्न प्रातिपादिक मान कर उनका विश्लेषण किया जाएगा।

मूल अप्रेरणार्थक धातु **प्रेरणार्थक धातु**

मा. ओ.

कर-आ > करा- करिबा, कराइबा

जित-आ > जिता- जितबा, जिताइबा

शुण-आ > शुणा- शुणिबा, शुणाइबा

प. ओ.

कर-आ > करा- करबा, कराबा

जित-आ> जिता-जितबा, जिताबा

सुन-आ> सुना-सुनबा, सुनाबा

छ.

कर-आ> करा-करहि, करवाहि

जित-आ> जिता-जितहि, जितवाहि

सुन-आ> सुना-सुनहि, सुनवाहि

8. प्रेरणार्थक वाक्य

इस अनुच्छेद में मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के प्रेरणार्थक

वाक्य के संरचना में वाक्य स्तर पर होने वाले अन्य परिवर्तनों का विश्लेषण किया जाएगा। हिन्दी और ओड़िआ में प्रेरणार्थक वाक्य का रचनांतरण मूल अप्रेरणार्थक वाक्य से होता है।[9]

जैसे-

हि.	राम पढ़ता है। <-प्रेरणा>
	वह राम को पढ़ाता है। <+प्रेरणा>
मा. ओ.	राम पढुछि। <-प्रेरणा>
	से रामकु पढ़ाउछि। <+प्रेरणा>
प. ओ.	राम पढुछे। <-प्रेरणा>
	से राम के पढ़ाउछे। <+प्रेरणा>
छ.	राम पढ़त हवै। <-प्रेरणा>
	ओ राम ला पाढ़ात हवै। <+प्रेरणा>

मूल अकर्मक अप्रेरणार्थक क्रिया <-प्रेरणा> का कर्ता प्रेरणार्थक <+प्रेरणा> वाक्य में प्रेरणार्थक क्रिया का कर्म बन कर आता है। अतः एक अन्य कर्ता की आवश्यकता पड़ती है, जिसे प्रेरक कर्ता कहा जाता है।[10]

हि.	राम किताब पढ़ता है। <-प्रेरणा>
	गोपाल राम को किताब पढ़ाता है। <+प्रेरणा>
मा. ओ.	राम बहि पढुछि। <-प्रेरणा>
	गोपाल राम कु बहि पढ़ाउछि। <+प्रेरणा>
प. ओ.	राम बहि पढुछे। <-प्रेरणा>
	गोपाल राम के बहि पढ़ाउछे। <+प्रेरणा>
छ.	राम किताब पढ़त हवै। <-प्रेरणा>
	गोपाल राम ला किताब पढ़ात् हवै। <+प्रेरणा>

जिस प्रेरणार्थक क्रिया का कर्ता (प्रेरक कर्ता) क्रिया-व्यापार के संपादन में प्रेरित कर्ता (अप्रेरणार्थक क्रिया का कर्ता) के साथ भागीदार होता है, उस वाक्य में मूल अप्रेरणार्थक वाक्य का कर्ता गौण कर्म बन कर मानक ओड़िआ में (कु), पश्चिमी ओड़िआ में (के) और छत्तीसगढ़ी में (ला) विभक्ति के साथ आता है।

हि. गोपाल राम को किताब पढ़ाता है। <+प्रेरणा-1>

माँ गोपाल से राम को किताब पढ़वाती है। <+प्रेरणा-2>

मा. ओ. गोपाल रामकु बहि पढ़ाए। <+प्रेरणा-1>

माँ गोपाल द्वारा रामकु बहि पढ़ाए। <+प्रेरणा-2>

प. ओ. गोपाल रामके बहि पढ़ासि। <+प्रेरणा-1>

माँ गोपाल दुआरा राम के बहि पढ़ासि। <+प्रेरणा-2>

छ. गोपाल राम ला किताब पढ़ाथे। <+प्रेरणा-1>

माँ गोपाल से राम ला किताब पढ़ाथे। <+प्रेरणा-2>

इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में क्रिया के द्वितीय प्रेरणार्थक रुप न बनने पर भी द्वितीय प्रेरणार्थक की स्थिति में हिन्दी के अनुरुप क्रिया के साथ कर्ता का कारकीय संबंधों में परिवर्तन आ जाता है। मानक ओड़िआ में द्वितीय प्रेरणार्थक की स्थिति में (द्वारा), पश्चिमी ओड़िआ में (दुआरा) और छत्तीसगढ़ी में (से) विभक्ति का प्रयोग होता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह ज्ञात होता है कि वाच्य संरचना की दृष्टि से मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में कुछ समानता है तो कुछ विषमता। हिन्दी भाषा की भाँति इन भाषाओं में वाच्य के तीन भेद होते हैं-कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य। इन तीनों भाषाओं में कर्तृवाच्य कर्तरि प्रयोग में कर्ता अविभक्तिक रुप में आता है और कर्म सविभक्तिक व अविभक्तिक दोनों रुपों में आ सकता है। कर्तृवाच्य कर्मणि का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में नहीं होता है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में कर्तृवाच्य की क्रिया कर्म/भाववाच्य में /-आ/ प्रत्यांत होती है और /जा-/ के सहयोग से संयुक्त क्रिया बन जाती है, तथा मूल क्रिया का /-आ/ प्रत्यय अप्रभावित रहता है और कर्म के साथ /जा-/ सहायक क्रिया की अन्विति होती है। कर्तृवाच्य का कर्ता, कर्म एवं भाववाच्य में मानक ओड़िया में 'रे', पश्चिमी ओड़िआ में 'रे' और छत्तीसगढ़ी में में विभक्ति के साथ आता है। जब व्याकरणिक कर्ता सविभक्तिक रुप में मानक ओड़िआ में 'कु', पश्चिमी ओड़िआ में 'के' और छत्तीसगढ़ी में 'ला' विभक्ति के साथ आता है, तो क्रिया निरपेक्ष रहती है। इन तीनों भाषाओं में प्रेरणार्थक क्रिया के दो ही रुप प्राप्त होते हैं। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के वाच्य सरंचना में कुछ व्यतिरेक है तो कुछ समानता है।

संदर्भ

1. दुर्योधन, महारणा-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-197

2. गुरु, कामताप्रसाद-हिन्दी व्याकरण-पृ. सं.-255

3. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-197

4. सिंह, सूरजभान-अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण-पृ. सं.-146

5. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-221

6. दुर्योधन, महारणा-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-224

7. पाणिग्राही, नीलमाधव एवं त्रिपाठी, प्रफुल्ल कुमार-समलपुरि कोसलि व्याकरण-पृ. सं.-108

8. तेलंग, भालचन्द्र राव-छत्तीसगढ़ी, हलबी, भतरी बोलियों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन-पृ. सं.-134

9. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-226

10. महारणा, दुर्योधन-हिन्दी ओड़िया व्याकरणिक कोटियाँ-पृ. सं.-226

उपसंहार

हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का संबंध आधुनिक भारतीय आर्यभाषा से है। हिन्दी भाषा की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से हुई है। मानक ओड़िआ की उत्पत्ति मागधी अपभ्रंश तथा पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति अर्ध-मागधी अपभ्रंश से हुई है। मानक ओड़िआ कटक, पुरी, खुर्दा, ढेंकानाल आदि क्षेत्रों में मुख्य रूप से बोली जाती है तथा यह समग्र ओड़िसा प्रदेश की राज भाषा है। रेडिओ, संवाद, समाचार-पत्र तथा साहित्य में इसी भाषा का प्रयोग होता है। पश्चिमी ओड़िआ को मानक ओड़िआ की एक बोली के रुप में विद्वान मानते हैं, किन्तु ऐतिहासिक और भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि इस भाषा का संबंध अर्ध-मागधी से है। पश्चिमी ओड़िआ या कोसलि संबलपुर, बरगढ़, सुदंरगढ़, बलागींर आदि क्षेत्रों की मुख्य भाषा है। मैंने क्षेत्र के आधार पर इस भाषा का नाम 'पश्चिमी ओड़िआ' दिया है। इस क्षेत्र की भाषा को 'संबलपुरी' भी कहा जाता है। इस भाषा में प्रचुर मात्रा में लोक साहित्य उपलब्ध है। 'छत्तीसगढ़ी' छत्तीसगढ़ की मुख्य भाषा है। रायपुर, बिलासपुर, कवर्धा, रायगढ़, बस्तर आदि क्षेत्रों में यह बोली जाती है। इसमें भी पर्याप्त मात्रा में लोक साहित्य उपलब्ध है। मानक ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी को जोड़नेवाली कड़ी पश्चिमी ओड़िआ है। छत्तीसगढ़ का पूर्वी क्षेत्र उत्तर से दक्षिण तक ओड़िसा की सीमा को छूती है। जशपुर के दक्षिण से हमदो नदी का पूर्वी भाग चाँपा, सवस्ती और रायगढ़ जिले से दक्षिण की ओर महानदी को पार करके सारंगढ़ और फूलझर की रियासत तथा रायपुर, महासमुंद आदि क्षेत्र ओड़िआ प्रभावित हैं। दक्षिण में भानुप्रतापुर और कांकेर की छत्तीसगढ़ी में भी ओड़िआ प्रभाव परिलक्षित होता है। ठीक इसके विपरीत छत्तीसगढ़ी का विस्तार ओड़िया क्षेत्र में है। संबलपुर, बरगढ़, नूआपड़ा आदि के आसपास भी छत्तीसगढ़ी फैल गई है। फलस्वरुप ये तीनों भाषाएँ एक-दूसरे से प्रभावित हैं। लिपि की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ 'ओड़िआ लिपि' में लिखी जाती है और छत्तीसगढ़ी 'देवनागरी लिपि' में।

इस प्रकार हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी का संबंध आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं से होने के कारण चारों भाषाओं में समानताएँ मिलना स्वाभाविक है। साथ ही साथ चारों भाषाओं के प्रत्येक स्तर पर असमानताओं की आशा भी की जा सकती है। अन्य भाषा शिक्षण में यही असमानताएँ व्यवधान उत्पन्न करती हैं। क्योंकि इन भाषाओं की प्रकृति और व्याकरणिक संरचनाओं में भिन्नता देखी जा सकती है। हिन्दी भाषा का संबंध पश्चिमी हिन्दी से है और छत्तीसगढ़ी तथा पश्चिमी ओड़िआ का संबंध पूर्वी हिन्दी से है। भले ही विद्वान वर्ग पश्चिमी ओड़िआ को पूर्वी हिन्दी के अन्तर्गत न मानते हों लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि तथा भाषावैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो इस भाषा का संबध अर्ध-मागधी अपभ्रंश से ही है। मानक ओड़िया का संबंध मागधी अपभ्रंश से है। इसलिए इन भाषाओं में असमानताएँ मिलना स्वाभाविक है।

भाषा में व्याकरणिक संवर्गों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि भाषा की संरचना इन्हीं पर आधारित होती हैं। लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, पक्ष, वृत्ति और वाच्य व्याकरणिक संवर्ग के अंतर्गत आते हैं। ये आठ वर्ग प्रत्येक भाषा के व्याकरण के मुख्य अंग होते हैं। इनको दो वर्गों में बाँटा जाता है-नामिक संवर्ग (लिंग, वचन, पुरुष, कारक) और क्रियापरक संवर्ग (काल, पक्ष, वाच्य, वृत्ति)। व्याकरणिक संवर्ग हर भाषा की निजी संपत्ति होती हैं और इसलिए इनके प्रयोग-नियम हर भाषा में अलग-अलग होते हैं। ये संख्या या आकार में सीमित होती हैं। इसलिए दो भाषाओं के व्यतिरेकी विश्लेषण में व्याकरणिक संवर्गों का विश्लेषण केंद्रीय माना जाता है। व्यतिरेकी विश्लेषण के माध्यम से दो भाषाओं में निहित विशिष्टताओं को उद्‌घाटित किया जाता है। मेरी अध्येय तीनों भाषाएँ एक दूसरे के सन्निकट होने के कारण एक दूसरे से प्रभावित हैं। इन भाषाओं में पर्याप्त समानताएँ तथा विषमताएँ हैं। इन्हीं समानताओं तथा विषमताओं का अध्ययन पिछले पाँच अध्यायों में किया गया है। व्याकरणिक संवर्ग इतने व्यापक हैं कि प्रत्येक संवर्ग पर स्वतंत्र रूप से शोध किया जा सकता है। मैंने सभी व्याकरणिक संवर्गों का संक्षेप में विश्लेषण करने का प्रयास किया है। हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के व्याकरणिक संवर्गों का व्यतिरेकी अध्ययन से इन भाषाओं की

संरचनागत विषमताओं के बिन्दुओं का निर्धारण तथा स्तरीकरण किया जा सकता है, वे ही बिन्दु भाषा शिक्षण के क्षेत्र में काम आ सकते हैं।

द्वितीय अध्याय में हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी की ध्वनि संरचना का अध्ययन किया गया है। इन भाषाओं के अ, आ, इ, उ, ए और ओ स्वर ध्वनियों में समानता है। हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में 'ई' और 'ऊ' का भी प्रचलन है। इन भाषाओं में 'ऐ' और 'औ' संध्यस्वर हैं। इनका उच्चारण क्रमशः 'अइ' और 'अउ' के रुप में होता है। 'ऋ' का उच्चारण इन भाषाओं में 'रु' के रुप में होता है। मानक ओड़िआ में शब्दांत 'अ' का उच्चारण होता है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति नहीं होता है। छत्तीसगढ़ी में 'अ' स्वन के तीन संस्वन भी हैं। मानक ओड़िया और पश्चिमी ओड़िया में दीर्घ 'ई' और 'ऊ' का प्रयोग लेखन में होता है किन्तु उच्चारण में 'इ और 'उ' के रुप में होता है। छत्तीसगढ़ी में इन दो स्वरों का उच्चारण हिन्दी भाषा के प्रभाव के कारण होता है, क्योंकि 'हिन्दी' छत्तीसगढ़ की राजभाषा है, जिससे प्रभावित होना स्वाभाविक है। वैसे ही पश्चिमी ओड़िआ मानक ओड़िआ से प्रभावित हो रही है, क्योंकि 'मानक ओड़िआ' ओड़िसा की राजभाषा है। मानक ओड़िआ में स्वर गुच्छों का प्रचलन कम है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में इनका प्रचलन खूब है। क्, ख्, ग्, घ्, च्, छ्, ज्, झ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्, थ्, द, ध्, न्, प्, फ्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, स् और ह् आदि व्यंजन ध्वनियों में समानता है। इन तीनों भाषाओं में श्, ष्, का लेखन स्तर प्रयोग होता है लेकिन उच्चारण में 'स्' के रूप में उच्चरित होती हैं। मानक ओड़िया में व्यंजन ध्वनियों का प्रयोग शब्दांत में नहीं होता है। छत्तीसगढ़ी में 'ण्' ध्वनि नहीं है तथा इसके स्थान पर 'न्' का प्रयाग होता है। मानक ओड़िआ में 'ल्' के दो रुप हैं-'ल्' और 'ल्' जो कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं है। 'ळ' का प्रयोग मराठी, बंगला आदि भाषाओं में होता है। कभी-कभी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त 'ल्' और 'ड़' ध्वनि छत्तीसगढ़ी में 'र्' हो जाती

है। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के स्वर-व्यंजन ध्वनियों के उच्चारण तथा प्रयोग के धरातल पर कुछ समानताएँ हैं तो कुछ असमानताएँ हैं।

तृतीय अध्याय में हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के नामिक संवर्गों का अध्ययन किया गया है। नामिक संवर्गों के अन्तर्गत लिंग, वचन, पुरुष और कारक आते हैं। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में दो वचनवाली व्यवस्था है- एकवचन और बहुवचन। हिन्दी, मानक ओड़िया, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में भी दो ही वचन हैं। इन भाषाओं में सामान्यतः वचन सूचक प्रत्यय के प्रयोग के बिना संज्ञाओं का प्रयोग एकवचन की सूचना देते हैं। बहुवचन सूचक प्रत्ययों द्वारा एकवचन सूचक प्रातिपादिकों का रुपांतरण किया जाता है। हिन्दी के वचन सूचक प्रत्यय शुद्ध हैं, जबकि अन्य तीनों भाषाओं में प्रायः शब्द प्रत्यय हैं। कभी-कभी मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में कुछ एकक सूचक प्रत्ययों, शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है, जो एकवचन संज्ञा प्रातिपादिकों के साथ प्रयुक्त होता है। बहुवचन सूचक प्रत्ययों के अतिरिक्त समूहवाचक शब्दों, संख्या एवं परिमाणवाचक शब्दों तथा प्रातिपादिक एवं विशेषण की द्विरुक्ति द्वारा भी बहुवचन की सूचना भी दी जाती है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग सामान्यतः अप्राणिवाचक एकवचन संज्ञा के साथ होता है। लेकिन हिन्दी और छत्तीसगढ़ी में मूल संज्ञा के पूर्व /-एक/ का प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त मानक ओड़िआ में /-ए/ की भाँति /-क/ का प्रयोग एकक सूचना के लिए किया जाता है, जो कि हिन्दी, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नहीं पाया जाता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-ए/ का प्रयोग संज्ञा के साथ होने से एक निश्चित परिमाण की सूचना देता है-संज्ञा+परिमाण। छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति /-ए/ का प्रयोग उसी रूप में होता है, लेकिन ये उसके विपरीत होता है-परिमाण+संज्ञा। इसके अतिरिक्त मानक ओड़िया में (जण, खन्ड़े, गोटे आदि), पश्चिमी ओड़िया में (जण, खड़ें, गुटे आदि) और छत्तीसगढ़ी में (एक, एकठन्, एकठि आदि) का प्रयोग एकवचन संज्ञा के साथ किया जाता है। इन तीनों भाषाओं में बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग

अर्थ पर आधारित है। हिन्दी में (-ए, -एँ, -आँ, -ओं), मानक ओड़िआ में (-माने, -गुड़ा, -गुड़िक, -जाक, -मन्दा आदि), पश्चिमी ओड़िआ में (-माने, गुड़ा, जाक, सभे, जह, गुरदु, खोब आदि) और छत्तीसगढ़ी में (-मन, सब, जमो आदि) बहुवचन सूचक प्रत्ययों का प्रयोग होता है। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-माने/ तथा छत्तीसगढ़ी में /-मन/ मुख्य रूप से बहुवचन सूचक प्रत्यय हैं।

भाषा में 'लिंग' एक प्रमुख व्याकरणिक संवर्ग है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में लिंगों का विभाजन जीववैज्ञानिक और अर्थ के आधार पर होता है तथा दो लिंग मिलते हैं-पुलिंग और स्त्रीलिंग। हिन्दी में प्राणिवाचक शब्द का लिंग उससे सूचित प्राणी के शारीरिक यौन लक्षण के अनुसार निर्धारित होता है। अप्राणीवाचक शब्दों का पुलिंग और स्त्रीलिंग में विभाजन कुछ अर्थ के आधार पर एवं कुछ व्याकरणिक धरातल पर किया जाता है। मानक ओड़िआ में (अक, आर, आरि, अलि, इआ, इआ, उआ, उरिआ, कार, खोर, दार, बाला आदि) पुलिंग सूचक प्रत्यय हैं। पश्चिमी ओड़िआ में (अक्, आ, आर, आरि, आलि, इआ, उआ, इहा, एइ, दार्, निआँ, बाला आदि) पुलिंग सूचक प्रत्यय हैं तथा छत्तीसगढ़ी में (आक्, आर्, इया, एरा, दार्, हार्, वान्) आदि पुलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय हैं। इन भाषाओं में यथाक्रम (मानक ओड़िआ-आणी, ई, उणी, णई आदि), (पश्चिमी ओड़िआ-इ, एइ, एन् आदि), (छत्तीसगढ़ी-ई, इन्, निन् आदि) स्त्रीलिंग सूचक व्युत्पादक प्रत्यय हैं। हिन्दी में आइन, आनी, इन, इया, नी आदि स्त्रीलिंग सूचक प्रत्यय हैं। इन तीनों भाषाओं के आकारांत शब्द प्रायः पुलिंग होते हैं और ईकारांत शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। उभय लिंग संज्ञाओं का लिंग निर्धारण करते समय मानक ओड़िआ में (अण्डिरा-माई), पश्चिमी ओड़िआ में (अँररा-माई) और छत्तीसगढ़ी में (एँड़रा-माई) का प्रयोग किया जाता है, जो कि हिन्दी की 'नर' और 'मादा' के समान है। इन तीनों भाषाओं में कर्ता के लिंग का प्रभाव क्रिया पर नहीं पड़ता है। हिन्दी में व्याकरणिक लिंग प्रभावशाली है जो आकारांत घटकों या शब्दों को लिंगानुसार परिवर्तित करता है। लिंग की सत्ता सामान्यतः संज्ञा रूपों में होती

है, किन्तु इस व्याकरणिक लिंग के प्रभाव से संज्ञा का लिंग आकारांत-विशेषण, क्रिया, क्रिया विशेषण एवं परसर्गों को प्रभावित करता है तथा लिंग अन्विति बनाता है। हिन्दी की क्रियाएँ सामान्यतः कर्ता/कर्म स्थानीय संज्ञा के लिंगानुसार परिवर्तित होती हैं।

वाक्य संरचना के केन्द्र में 'पुरुष' भी एक अंश है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में हिन्दी की भाँति तीन पुरुष हैं-उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष। मानक ओड़िआ में (मुँ-आमे), (तु-तुमे), (से-सेमाने), पश्चिमी ओड़िआ में (मुइँ-आमें), (तुइँ-तुमें), (से-सेमाने) और छत्तीसगढ़ी में (में-हमन), (तें-तुमन), (ओ-ओमन) पुरुषवाचक सर्वनाम हैं। मानक ओड़िआ में उत्तम और मध्यम पुरुष बहुवचन (आमें और तुमें) का आदर के अर्थ में एकवचन का प्रयोग होता है। इसके समानान्तर पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में क्रमशः (आमें, तुमें) और (हमन्, तुमन्) का प्रयोग होता है। हिन्दी में (मैं-हम), (तू-तुम), (वो-वे) पुरुषवाचक सर्वनाम हैं। इस भाषा में उत्तम पुरुष बहुवचन 'हम' का एकवचन 'मैं' की जगह प्रयोग करने की चाल चल पड़ी है। निजवाचक सर्वनाम के रुप में हिन्दी में 'आप', मानक ओड़िआ में 'आपे/निजे', पश्चिमी ओड़िआ में 'निजे' और छत्तीसगढ़ी में खुद/आप का प्रयोग होता है। अन्यपुरुष वाचक सर्वनाम के रुप में हिन्दी में (वो, ये, कोई, कौन, जो, इस आदि), मानक ओड़िआ में (से, ए, केहि, किए, जे आदि), पश्चिमी ओड़िआ में (से, इ, किहे, किए, जे आदि) और छत्तीसगढ़ी में (ओ, इ, कोन्हों, कोन्, जो आदि) का प्रयोग होता है।

'कारक' प्रमुख व्याकरणिक संवर्गों में से एक है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में हिन्दी भाषा की भाँति आठ कारक हैं। इन भाषाओं में विभक्ति प्रत्ययों की संख्या तथा वितरण की दृष्टि से असमानताएँ हैं। इन भाषाओं में कर्ता कारक के साथ किसी भी विभक्ति का प्रयोग नहीं होता है। हिन्दी में कर्ता कारक के साथ 'ने' का प्रयोग भूतकालिक सकर्मक क्रिया के साथ सकर्मक भूतकाल में होता है। कर्म कारक के साथ हिन्दी में 'को', मानक ओड़िआ में 'कु', पश्चिमी ओड़िआ में 'के' और छत्तीसगढ़ी में 'का', 'ला' विभक्तियों का प्रयोग होता है। करण के साथ हिन्दी

में 'से', मानक ओड़िआ में रे, द्वारा, देइ, पश्चिमी ओड़िआ में दुआरा, थिं और छत्तीसगढ़ी में ले, से, में का प्रयोग होता है। संप्रदान कारक के साथ हिन्दी में के, लिए, मानक ओड़िआ में कु, पाइँ पश्चिमी ओड़िया में के, लागि और छत्तीसगढ़ी में का, ला, बर आदि का प्रयोग होता है। अपादान कारक के साथ हिन्दी में 'से', मानक ओड़िआ में रु, ठु, ठारु पश्चिमी ओड़िआ में उँ, नु और छत्तीसगढ़ी में ले, से का प्रयोग होता है। संबंध कारक के साथ हिन्दी में का, के, की, मानक ओड़िआ में 'र', पश्चिमी ओड़िआ में अर्, र और छत्तीसगढ़ी में 'के' का प्रयोग होता है। अधिकरण कारक के साथ हिन्दी में में, पर, मानक ओड़िआ में रे, ठि, ठारे, पश्चिमी ओड़िआ में एँ, न, थि और छत्तीसगढ़ी में मं, मां, उपर आदि विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं। हिन्दी में 'का' परवर्ती प्रधान संज्ञा के लिंग, वचन तथा कारक से प्रभावित रहता है और इसके कुल तीन रुप उपलब्ध हैं-का, की, के। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में प्रयुक्त विभक्तियों के अनेक संरूप भी हैं।

क्रियापरक संवर्गों के अन्तर्गत काल, पक्ष, वृत्ति और वाच्य आते हैं। इन भाषाओं में काल, पक्ष और वृत्ति सूचक तत्वों द्वारा एक जटिल प्रक्रिया से समापिका क्रियापदबंधों का गठन होता है। एक ही क्रियापदबंध एक साथ पक्ष, काल और वृत्ति को सूचित करने में समर्थ होता है। पूर्ण सूचक प्रत्यय की दृष्टि से मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में /-इ/ प्रत्यय का प्रयोग होता है तथा इन दोनों भाषाओं में समानता है, जबकि हिन्दी में /-आ/ और छत्तीसगढ़ी में /-ए/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। अपूर्ण सूचक प्रत्यय /-इ/ और /-उ/ मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ में प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी में /-अ/ और छत्तीसगढ़ी में /-त/ प्रत्यय का प्रयोग होता है। काल सूचक सहयोगी क्रियाओं की संरचना की दृष्टि से इन तीनों भाषाओं में कुछ समानता है तो कुछ विषमता भी। मानक ओड़िआ और पश्चिमी ओड़िआ के अनुज्ञा (था, थाअ), भूत-अतीत (थिला, थिले) एवं अनुमान/संभावना (थिबा, थिबे) आदि काल/पक्ष सूचक क्रियाओं में समानता है। छत्तीसगढ़ी में (आहँ, आँहन, रहिस, रिहिं) आदि का प्रयोग होता है। मानक ओड़िआ के

/-इल्-/, /-इब्/, पश्चिमी ओड़िआ के /-अल्-/, /-अम्-/, /-अत्-/ और छत्तीसगढ़ी के /-इस्-/, /-इत्-/ काल सूचक पूर्ण पक्ष सूचक प्रत्यय के साथ समानता रखती है। मानक ओड़िआ में नियत्व एवं अनुज्ञा को छोड़कर शेष पक्ष निरपेक्ष क्रियारूपों के अंत में कुछ विशेष संदर्भ में /-णि/ का प्रयोग होता है, जबकि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में /-न्/ का प्रयोग होता है। ये प्रत्यय भविष्यत् काल सूचक क्रिया रुप के साथ प्रयुक्त होकर क्रिया-व्यापार की पूर्णता की सूचना देते हैं। मानक ओड़िआ में /-टि/ समापिका क्रियारूपों के पश्चात प्रयुक्त होने पर क्रिया के घटित होने की निश्चितता की सूचना मिलती है। लेकिन पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में यथाक्रम /काएँ/, /का/ आदि प्रश्नवाचक शब्दों का प्रयोग होता है। नकारात्मक क्रियारुप की दृष्टि से तीनों भाषाओं में समानता नहीं है। हिन्दी में (नहीं), मानक ओड़िआ में (नाहिं, नाहुँ, नाहान्ति), पश्चिमी ओड़िआ में (नाइँ) और छत्तीसगढ़ी में (नि, नइ) का प्रयोग होता है। हिन्दी की भाँति पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में नकारात्मक शब्दों का प्रयोग क्रिया के बाद होता है, जबकि मानक ओड़िआ में क्रिया के पूर्व। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के क्रियापरक संवर्गों में कुछ समानता है तो कुछ असमानता है।

हिन्दी भाषा की भाँति इन भाषाओं में वाच्य के तीन भेद होते हैं-कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य। इन तीनों भाषाओं में कर्तृवाच्य कर्तरि प्रयोग में कर्ता अविभक्तिक रुप में आता है और कर्म सविभक्तिक व अविभक्तिक दोनों रुपों में आ सकता है। कर्तृवाच्य कर्मणि का प्रयोग इन तीनों भाषाओं में नहीं होता है, जबिक हिन्दी में होता है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िया और छत्तीसगढ़ी में कर्तृवाच्य की क्रिया कर्म/भाववाच्य में /-आ/ प्रत्यांत होती है और /जा-/ के सहयोग से संयुक्त क्रिया बन जाती है, तथा मूल क्रिया का /-आ/ प्रत्यय अप्रभावित रहता है और कर्म के साथ /जा-/ सहायक क्रिया की अन्विति होती है। कर्तृवाच्य का कर्ता, कर्म एवं भाववाच्य में मानक ओड़िया में 'रे', पश्चिमी ओड़िआ में 'रे' और छत्तीसगढ़ी में 'में' विभक्ति के साथ आता है। जब व्याकरणिक कर्ता सविभक्तिक रुप में हिन्दी में 'को', मानक ओड़िआ में 'कु',

पश्चिमी ओड़िआ में 'के' और छत्तीसगढ़ी में 'ला' विभक्ति के साथ आता है, तो क्रिया निरपेक्ष रहती है। इन तीनों भाषाओं में प्रेरणार्थक क्रिया के एक ही रुप प्राप्त होते हैं, जबकि हिन्दी में दो रूप प्राप्त होते हैं। इस प्रकार मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के वाच्य संरचना में भी कुछ व्यतिरेक है तो कुछ समानता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि हिन्दी, मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी एक ही परिवार की भाषाएँ हैं। भले ही इन भाषाओं की उत्पत्ति अलग-अलग अपभ्रंशों से हुईं हो। हिन्दी भाषा की व्याकरणिक संरचनाएँ अन्य तीनों भाषाओं से अलग है। मानक ओड़िआ, पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी के ध्वनि संरचना, व्याकरणिक सरंचना के अध्ययन से ज्ञात होता है कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी में समानता है। भले ही अभी पश्चिमी ओड़िआ 'मानक ओड़िआ' से और छत्तीसगढ़ी 'हिन्दी' से प्रभावित हो रही हैं और इसका कारण है ओड़िसा की राजभाषा 'ओड़िआ' है और छत्तीसगढ़ की 'हिन्दी' जिसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि से इन भाषाओं का अध्ययन करने से प्रमाणित हो जाएगा कि पश्चिमी ओड़िआ और छत्तीसगढ़ी एक ही वर्ग की भाषाएँ हैं और इनकी उत्पत्ति अर्ध-मागधी अपभ्रंश से है।

परिशिष्ठ

सामान्य रूप से प्रयोग में आने वाले कुछ शब्द

(अ) मानव शरीर के अंग

हिन्दी	मानक ओड़िआ	पश्चिमी ओड़िआ	छत्तीसगढ़ी
शरीर	देह	दिहि	देहें
सर	मुंड़	मुड़्	मुड़्
माथा	मथा	कपाल्	कापार्
आँख	आखी	आँएख्	आँखी
नाक	नाक	नाक्	नाक्
कान	कान	कान्	कान्
मुंह	मुँह	मुँहुँ	मुँहूँ
होंठ	ओठ	चँण	ओंठ्
दाँत	दान्त	दाँत्	दाँत्
जीभ	जिभ	जिभ्	जिभ्
गाल	गाल	गाल्	गाल्
मुछ	निस	मेछा	मेछा
दाढ़ी	दाढ़ि	दाढ़ि	दाढ़ी
गर्दन	बेक	बेंक्	ढेठुँ
छाति	छाति	छाति	छाति
पेट	पेट	पेट्	पेट्
कमर	अन्टा	अँटा	कन्हिया
हाथ	हात	हात्	हाँथ्
अंगुली	आंगुठि	आँगलि	अंगठ
नाखून	नख	नख्	नख्
पैर	गोड़	गोड़्	गोड़

जांघ	जंघ	जंघ्	जांघ्

(आ) जानवर

हिन्दी	मानक ओड़िआ	पश्चिमी ओड़िआ	छत्तीसगढ़ी
गाय	गाइ	गाय्	गाय्
बैल	बलद	बलद्	बइला
बकरी	छेलि	छेल्	छेरी
बकरा	खासि	बुका	बोक्रा
घोड़ा	घोड़ा	घुड़ा	घोड़ा
घोडी	घोड़ि	घुड़ि	घोड़ी
हाथी	हाथि	हाति	हाँथी
भैंस	मइँसि	पोड़्	भैंसा
बिल्ली	बिलेइ	बिलेइ	बिलाई
कुत्ता	कुकुर	कुकुर्	कूकुर्
ऊँट	ओट	ओट्	ओंट्
गधा	गध	गध्	गाधा
बंदर	मांकड़	माकड़्	बेंद्रा
चूहा	मुसा	मुसा	मुसुवा
शेर	सिंह	सिंह्	सेर
बाघ	बाघ	बाघ्	बघ्वा
भालू	भालु	भालु	भालू
भेड़िया	हुँड़ार	हुँड़ार	हुँडरा

(इ) चिड़िया और जल जंतु

हिन्दी	मानक ओड़िआ	पश्चिमी ओड़िआ	छत्तीसगढ़ी
कौआ	काउ	कुआ	कँउआ
मुर्गा	गंजा	गंजा	कुकरा
बत्तख	बतक	बद्क	बदक्
कबूतर	पारा	पारा	पंरेवा
कोयल	कोइलि	कुइलि	कोइली
उल्लू	पेचा	पेचा	घुघुवा
मैना	मइना	मएना	मैना
मोर	मयुर	मयुर्	मंजुर्
तोता	सुआ	सुआ	सुआ (रूपो)
हंस	हंस	हंस्	हंस्
केकड़ा	कंकड़ा	कँकरा	केंक्रा
मछली	माछ	झुरि	मछरी
मगरमच्छ	कुंभीर	मगर	मंगर
कछुआ	कइँछ	केंछो	केछो

(ई) खाद्य पदार्थ

हिन्दी	मानक ओड़िआ	पश्चिमी ओड़िआ	छत्तीसगढ़ी
रोटी	रूटि	रूटि	रोटी
चावल	भात	भात्	भात्
दाल	दालि	दाएल्	दार
दूध	खीर	गुरस्	गोरस
चना	चणा	चना	चना
अंडा	अण्डा	गरा	गारा

मांस	मांस	मांस्	मांस्
नमक	लुण	नुन्	नून्
मकई	मका	मका	जोंधरा

(उ) सब्जियाँ

हिन्दी	**मानक ओड़िआ**	**पश्चिमी ओड़िआ**	**छत्तीसगढ़ी**
खीरा	काकुड़ि	कांकेर्	खीरा
गोभी	कोबि	कुबि	गोभी
बैंगन	बाइगण	बाइगन्	भाँटा
आलू	आलु	आलु	आलू
मूली	मुला	मुला	मुराई
टमाटर	बिलाति	पातलघँटा	पताल्
प्याज	पिआज	उइल्	गोंदली
लहसुन	रसुण	लेसुन	लेसुन
लौकी	कखारु	कँखारु	तूमा
करेला	करला	करला	करेला
परवल	पोटल	पुटल्	पँडोरा
मिर्च	लंका	मिर्चा	मिर्चा
धनियाँ	धनिआ	धनिआँ	धनियाँ
नींबू	लेम्बु	लेमउ	लिमऊ
भिंडी	भेन्ड़ि	भेड़ि	भेड़ी
मटर	मटर	मटर्	मटर्

(ऊ) फल

हिन्दी	**मानक ओड़िआ**	**पश्चिमी ओड़िआ**	**छत्तीसगढ़ी**
अंगूर	अंगुर	अंगुर्	अंगूर्
आम	आम्ब	आम्	आमा

अमरूद	माया	माया	बिहि
केला	कदलि	कदेल्	केरा
पपीता	अमृतभंड़ा	अमरूत्मड़ा	आराम् पपाइ
अनार	डालिम्ब	दरमि	दर्मि
खजूर	खजुरि	खजुर्	छिंद्
बेर	कोलि	बुरो	बोरो

(ए) संबंधी (रिश्ते)

हिन्दी	**मानक ओड़िआ**	**पश्चिमी ओड़िआ**	**छत्तीसगढ़ी**
माता	माँ	मा	दाई
पिता	बापा	बा	ददा
भाई	भाइ	भाए	भाई
बहन	भउणि	बहेन्	बेहेनी
चाचा	काका	काका	कका
चाची	खुड़ि	काकि	काकी
दादा	अजा	दादा	बबा
पति	स्वामि	घएता	डौका
पत्नी	स्त्री	किनआँ	डौकी
भाभी	भाउज	बहु	भउजी
पुत्र	पुअ	पो	बेटा
पुत्री	झिअ	झि	बेटी
भतीजा	पुतुरा	पुतरा	भतीजा
भतीजी	झिआरि	झिआरि	भतीजी
भांजा	भणजा	भनजा	भाँचा

भांजी	भाणिजि	भानजि	भाँची
मामा	मांमु	मामुँ	मोंमा
मामी	माइँ	माइँ	मामी
सास	सास	सास्	सास्
ससुर	ससुर	ससुर्	ससुर्
साला	सला	सला	सारा
साली	सालि	सालि	सारी
बहनोई	गइँ	भोटो	भाँटो
फूफा	पिइसा	पिइसा	फूफा
बुआ	पिइसि	पिइसि	फूफी
दामाद	जोइँ	जुएँ	दामांद
नाती	नाति	नाति	नाती
नातिन	नातुणि	नतनेन्	नतनिन्

देवनागरी लिपि और ओड़िआ लिपि

स्वर

देवनागरी लिपि–अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

ओड़िआ लिपि–ଅ ଆ ଇ ଈ ଉ ଊ ଋ ଏ ଐ ଓ ଔ

व्यंजन

क ख ग घ ङ	च छ ज झ ञ	ट ठ ड ढ ण	त थ द ध न
କ ଖ ଗ ଘ ଙ	ଚ ଛ ଜ ଝ ଞ	ଟ ଠ ଡ ଢ ଣ	ତ ଥ ଦ ଧ ନ
प फ ब भ म	य र ल व	श ष स ह	क्ष त्र ज्ञ ड़ ढ़
ପ ଫ ବ ଭ ମ	ଯ ର ଲ ୱ	ଶ ଷ ସ ହ	କ୍ଷ ତ୍ର ଜ୍ଞ ଡ଼ ଢ଼

संख्या

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ ०

୧ ୨ ୩ ୪ ୫ ୬ ୭ ୮ ୯ ୦

सहायक ग्रंथ सूची

हिन्दी

अग्रवाल, कैलाशचन्द्र — आधुनिक हिन्दी व्याकरण तथा रचना, रंजन प्रकाशन, आगरा, 1974.

अरूण, अवधेश्वर — हिन्दी भाषा का स्वरूप और विकास, बिहार हिन्दी अकादमी, पटना, 1973.

ओझा, त्रिभुवन — प्रमुख बिहारी बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणासी, 1987.

कर, चितरंजन — छत्तीसगढ़ी की व्याकरणिक कोटियाँ, मिश्रा पुस्तक सदन, बिलासपुर, 1993.

कर, चित्तरंजन — हिन्दी परसर्गों का अर्थाक्यपरक अध्ययन

कुमार, कान्ति — छत्तीसगढ़ी बोली, व्याकरण और कोश, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1969.

ग्रियर्सन, जार्ज अब्रहम — लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया (अनुवादक-उदयनारायण तिवारी), प्रकाशन शाखा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश, लखनऊ, 1967.

गुरू, कामता प्रसाद — हिन्दी व्याकरण, नागरी प्रचारणी सभा, काशी, 2000.

जगन्नाथन, वी. रा. — हिन्दी की आधारभूत शब्दावली, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, 1981.

जैन, संतोष — हिन्दी और बंगला भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन, शब्दकार-तुर्कमान गेट, दिल्ली, 1974.

जैन, साधना कान्तिकुमार — छत्तीसगढ़ी और खड़ीबोली व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन, साहित्यवाणी, इलाहाबाद, 1984.

तिवारी, उदयनारायण — हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास, भारती भण्डार, प्रयाग, 1975.

तिवारी, भोलानाथ — भाषा विज्ञान, किताब महल एजेन्सीज, इलाहाबाद, 2005.

तिवारी, भोलानाथ — हिन्दी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, 1973.

तिवारी, भोलानाथ — हिन्दी भाषा, किताब महल एजेन्सीज, पटना, 2005.

तेलंग, भालचन्द्र — छत्तीसगढ़ी, हलबी, भतरी बोलियों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई, 1966.

धल, गोलक बिहारी — ध्वनि विज्ञान, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1975.

देशुमख, अम्बाप्रसाद — हिन्दी और मराठी व्याकरण, अतुल प्रकाशन, कानपुर

बाजपेयी, किशोरीदास — हिन्दी व्याकरण मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1981.

बाजपेयी, किशोरीदास — हिन्दी शब्दानुशासन, नागरी प्रचारणी सभा, काशी, 1987.

बाहरी, हरदेव — ग्रामीण हिन्दी बोलियाँ, हिन्दी भवन प्रा. लि. इलाहाबाद, 1980.

बिम्स, जॉन — आधुनिक भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन

भाटिया, कैलाशचन्द्र — भारतीय भाषाएँ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1981.

मलहोत्रा, रमेशचंद्र — मानक छत्तीसगढ़ी व्याकरण, वैभव प्रकाशन, रायपुर, 2007.

महारणा, दुर्योधन — हिन्दी ओड़िया व्याकारणिक कोटियाँ, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, 1984.

मैकडानल, आर्थर एन्थोनी — वैदिक व्याकरण, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1974.

रेड्‌डी, विजयराघव — व्यतिरेकी भाषाविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1986.

वर्मा, धीरेन्द्र — हिन्दी भाषा का इतिहास, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद 1967.

वर्मा, नरेन्द्र देव — छत्तीसगढ़ी का उद् विकास, रचना महल, इलाहाबाद, 1979.

वर्मा, रामचन्द्र — अच्छी हिन्दी, साहित्य रत्नमाला कार्यालय, बनारस, 1976.

वर्मा, रामलाल — हिन्दी असमिया : व्याकरणिक कोटियाँ, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, 1986.

वर्मा, सत्यकाम — व्याकरण की दार्शनिक भूमिका, मुंशीराम मनोहरलाल, दिल्ली, 1971.

व्यास, घनश्याम — आधुनिक भारतीय भाषाओं का पुनर्वर्गीकरण, ज्ञानगंगा प्रकाशन, रायपुर, 1971.

सक्सेना, बाबूराम — सामान्य भाषा विज्ञान, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1971.

सक्सेना, बाबूराम — अवधि भाषा का विकास, हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद, 1972.

सिंह, सूरजभान — अंग्रेजी-हिन्दी व्याकरण, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2006.

सिंह, सूरजभान — हिन्दी भाषा : संदर्भ और संरचना, साहित्य सहकार, दिल्ली, 1991.

सेन, सुकुमार — तुलनात्मक पालि प्राकृत व्याकरण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1969.

शर्मा, दीप्ति — व्याकरणिक कोटियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन, बिहार ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1975.

शेष, शंकर — छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, दि पायोनियर प्रेस,

लखनऊ, 1973.

श्रीवास्तव, रवीन्द्र — हिन्दी भाषाविज्ञान अंक, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, 1973.

ओड़िआ

पाणिग्राही, नीलमाधव
एवं
त्रिपाठी प्रफुल्ल कुमार — सम्बलपुरि कोसलि व्याकरण, सम्बलपुर विश्वविद्यालय, बुर्ला, 2001.

पुरोहित, शंकर प्रसाद
एवं
सुपकार, श्रद्धाकर — सम्बलपुर रे भाषा आन्दोलन, पूर्णिमा प्रिंटर्स, सम्बलपुर, 1974.

महापात्र, धनेश्वर — ओड़िआ ध्वनितत्व ओ शब्द संभार, फ्रेण्डस पब्लिसर, कटक, 1997.

महान्ति, पंचानन — बृत्ति ए मो पोषे कुटुम्ब, प्रयुस महान्ति, प्रबुद्ध महान्ति, भुवनेश्वर, 2007.

महान्ति, बंशीधर — ओड़िआ भाषार उत्पत्ति ओ क्रमविकास, फ्रेण्डस पब्लिसर, कटक, 2006.

महान्ति, बंशीधर — ओड़िआ भाषा आन्दोलन, साहित्य संग्रह प्रकाशन, कटक, 2001.

महान्ति, बंशीधर — ओड़िआ साहित्य र इतिहास, फ्रेण्डस पब्लिसर, कटक, 1984.

महापात्र, बिजय प्रसाद — प्रचलित ओड़िआ भाषार एक व्याकरण, बिद्यापुरी कटक, 2007.

महापात्र, बिजय प्रसाद — प. नीलकंठङ ओड़िआ भाषातत्व, फ्रेण्डस पब्लिसर, कटक,

1999.

मिश्र, हर प्रसाद — भाषातत्व ओ ओड़िआ भाषार दिग दिगन्त, आई. डी. बी, कटक, 1996.

मिश्र, शिवप्रसाद — संबलपुर इतिहास, विश्वभारती प्रेस, सम्बलपुर, 1969.

रथ, गोपबन्धु — पश्चिम ओड़िसार कथित ओड़िआ भाषा, ओड़िसा साहित्य अकादमी, 1988.

साहु, आदिकन्द — सम्बलुर भाषा साहित्य संस्कृति, सम्बलपुर विश्वविद्यालय, बुर्ला, 2003.

साहु, बासुदेब — ओड़िआ भाषार उन्मेष ओ बिकास, फ्रेण्डस पब्लिसर, कटक, 2000.

सूपकार, करूणाकर — सम्बलपुर परिचय, लक्ष्मीनारायण मिश्रा लेन, सम्बलपुर, 2008.

अंग्रेजी

चटर्जी, सुनीति कुमार — ओरिजिन एण्ड डेवलपमेन्ट ऑफ बेंगली लैंग्वेज, एलेन एण्ड अन्वीन लि. लंदन, 1926.

ग्रियर्सन, अब्राहम — लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, श्री जैनेन्द्र प्रेस दिल्ली, 1968.

देव, जयमित्रा प्रसाद सिंह — कल्चरल प्रोफाइल ऑफ साउथ कोसल, भुवनेश्वर, 1984.

एस. सी. भट्ट
एण्ड
गोपाल भार्गव — लैंड एण्ड पिपुल (छत्तीसगढ़ एण्ड ओड़िसा), कल्पाज़ पब्लिकेशन दिल्ली, 2005.